



मनोहर सीरीज न० ५

# उदय-अस्त

( श्रेष्ठ कहानियाँ )

सम्पादक—

सैयद महमूद अहमद 'हुनर'

मूल्य वारह आना

प्रकाशक—चितोन्द्रमोहन मिश्र,  
भाया कार्यालय,  
इलाहाबाद ।

Copyright reserved with the publisher

सुदक—धारेन्द्रनाथ,  
भाया प्रेस,  
इलाहाबाद ।

## उदय-अस्त

टीलों पर चाँदनी छिटकी हुई थी और घूर खजूरों के एक झुण्ड में कोई पक्षी सहमी-सहमी तानें उड़ा रहा था। मैं उस जगल में शिकार लेजने आया था। मेरा बूढ़ा भौकर सो गया था, और चूँकि परदेश में मुझे नींद बहुत कम आती है, और जगलों की चाँदनी रातें सोने के लिये नहीं, बल्कि जागने के लिये होती हैं, इसलिये पहले तो मैं बिस्तर पर पड़ा करवटें बदलता रहा, मगर जब खजूरों के झुण्ड में किसी घेनाम के पक्षी की दुखी-दुखी, सहमी-सहमी तानें सुनीं, और फिर इन तानों को मेने वायु मयङ्गल के अथाह नीले, खिले आकाश में किसी भागती हुई भयभीत युवती के धूँधरवाले बालों वाला रूप धारण कर लहराता देखा, तो मैं ठट खड़ा हुआ। मेरे कुत्ते दुम हिलाने लगे, और सुनहली रेत उनकी हुमों की हरकत पर उड़ने लगी। एक ऊँचे टीले पर चढ़ कर मैंने चारों ओर दृष्टि दौड़ाई। इक्के-दुक्के खजूरों की प्रेतों-जैसी छाया, और सायें सायें कारती हुई निस्तब्धता के अतिरिक्त एकांत के इस महाद्वीप में और कोई चीज मौजूद न थी। मैं ठर्राही रेत को मुट्टियों में दबा कर उसे धीरे धीरे नीचे गिराने लगा। रेत के नन्हें-नन्हें टीले से उभर आये और मैं सोचने लगा—'अगर इंद्रवर ने पृथ्वी का इतना सभ्वा चौड़ा डुकड़ा रेत और सिक्रं रेत के लिये दान कर दिया है, तो आखिर इसका मतलब ? ऐसा क्यों न हुआ कि यहाँ हरे-भरे और फूले फले खेत होते ? गेहूँ की सुनहरी बालें वायु के झोंकों के कारण उपेक्षा से अपनी गरदों नीची कर देतीं, और समस्त द्रव्य रहटों का 'रौ-रा' और 'सोतीं' के दवे दवे गीतों से परिपूर्ण हो जाता। या ऐसा क्यों न हुआ कि यहाँ ऊँचे ऊँचे पर्वत होते, जिन पर ऊँचे सनोवर के जगल होते ? छोटा-छोटी नदियाँ चट्टानों से टकरातीं, भाग के बादल उड़ानीं, घायल नागिनों का भौंति लहराती फिरतीं, और बखानों पर अलहद टोर चराने वालियाँ पतली-पतली अँगुलियों में मोटी-मोटी बलियाँ धामे गुलाबी भोंडों के ज़रा से स्पर्श से वायु मयङ्गल में सगात का रस धोखती होतीं। या ऐसा क्यों न हुआ कि यहाँ बड़े बड़े नगर 'मेरी कल्पना की उदान अवानक दक गईं और चाँदनी के रुपहले अँधेरे में मुझे ऊँटों की घटियों की धीमी धीमी आवाज़ें सुनाई दीं। निस्तब्धता के इस सागर पर इन मुरीबे स्वरो की नौका तैरती हुई आई, और



और उपा की भौति नारगी है, तेरा समस्त शरीर कुमार युवका की स्वप्न मूर्तियों से मिलता जुलता है, लेकिन मैं तेरे वश में नहीं आ सकता, क्योंकि मैं तुमसे कहीं अच्छी प्रेमिका के साथ जा रहा हूँ !”

एक जगह पर जा कर मैंने कुत्तों को रोक लिया और उह दुस्कार कर खेमे को और भगा दिया। अब ऊँट मेरे सामने से जा रहे थे। कज्जावाँ पर बुदों की चमक बढ़ गई थी और ऊँटों की घटियों सैकड़ों जल तरंगों की भौति बज रही थी। मुझे भी इसी मार्ग के किसी गाँव तक पहुँचने की इच्छा थी। शिकार की घुन में सध्या हो गई था और रात भर किसी गाँव की खोज में टोखों पर भटकते फिरने के बजाय मैंने यहाँ खेमा तान लेना अच्छा समझा था। अतएव मैंने आवाज़ दी—“भाई, किस गाँव जायगा यह क्रात्रिळा ?”

चन्द सारथानों ने मुझ कर मेरी ओर देखा और सब एक साथ बोले—  
“सोसन ।”

मैं भाग कर एक सारथान के पास गया और कहा—“भाई, मुझे भी सोसन ही जाना है। शिकार खेलने आया था, रात हो गई। रास्ता मालूम न था। तुम अगर मेरे लिये कुछ देर ठहर सको, तो मैं सब सामान ले कर तुम्हारे साथ चला चलूँ। कल दिन को मैं किससे रास्ता पूछता फिरूँगा ?”

सारथान, जिसने मुँहासे से सिर छिपा रक्खा था, बोला—“हजं तो कुछ नहीं, लेकिन ” और उसने कुछ देर सोच कर जोर सं पुकारा—“गुलाब खॉ ! यह एक मुसाक्रि है बेघारा। कहता है, मुझे भी सोसन ले चलो। कहो तो चन्द घड़ी यहाँ दम ले लें ।”

और क्रात्रिळे के अगले सिरे से आवाज़ आई—“कौन है यह मुसाक्रि ?”

सारथान ने जवाब दिया—“कोई शिकारा है ।”

उधर से गुलाब खॉ ने कहा—“ठहर जायेंगे। तुम इससे कहो, ज़रा जल्दी करो। पहिले ही बहुत देर हो चुकी है। बारात को पौ पटने से पहिले पहुँच जाना चाहिये—तारों की छॉव में ही !”

क्रात्रिळा रुक गया। घटियों के स्वर मद्धिम पड़ गये, कज्जावाँ पर चहचहे से मुनाई देने लगे और मैं अपने खेमे की ओर भागा। मेरा नीकर खेमे से बाहर मेरी प्रतीणा कर रहा था। बोला—“आप कियर निकल गये ये ? रात में इन रेगिस्तानों में भूत प्रेत खेला करते हैं। आपको तो अपनी जान की कुछ परवाह नहीं ।”

तुम मेरे पिरों में खो न खग और मैं मौहर का वाह यरवान हुए खोजा—  
 “यवतापो नहीं, ये क्रात्रियेवाले यहाँ के एक गाँव से सामन में आ रहे हैं।  
 सोमा अपनी बन्तूक रौंताखी और खला मेरे साथ। मून प्रेत का किरमा खोरो  
 यह सब वदम है।”

अब मरा मौहर खेजो से खेमे का उखाड़ता हुआ कहने लगा—“वदम  
 नहीं मरकार! सारा दुनिया जानती है कि इन टीलों में बहुत से शिकार आये  
 और पागल हो कर छीट। अभी हाज का बात्र है कि मवाब रीहान गाँ का  
 मीजशन बग इधर शिकार करने आया और जब वापस गया, तो खाया-खोया।  
 इकामों में पूछा गया, तो उन्होंने बताया कि यह कोई राग नहीं है, मून प्रेत  
 का प्रभाव जान पड़ता है। एक खैपेरी राग को यह बर स निकल भागा। उर  
 दिन भापण गाँधी आई और वह ठपमें देना खोया कि फिर खीर कर न आया।  
 आज तो मेरी हर बात की हँसा उखाते हैं।”

इसी बातों में सोमा खड़े खिया गया और हम क्रात्रिये का सारत्र बड़े।  
 टांके क अचल में कुछ ऊँ बैठे मरता रहे थे। कुछ गदन मोड़े हमारी थोर  
 देण रह थे और कुछ चुपचाप अपने मानो कमावों में पैरी खुबनियों का बातें सुन  
 रहे थे।

मुँडासे वाला खुबक मेरी प्रतीचा कर रहा था। मेरे पहुँचते ही बसने  
 गुलाब गाँ की कृष करने को कहा और यह क्रात्रिये धीरे धीरे टीलों के बीच  
 रंगने लगा।

“कहाँ से आ रहे हैं आप लोग?” मैंने अपने साथी से पूछा।  
 “समन से।” उसने जवाब दिया।

“तुम ने अपने गाँवों के जिये फूजों के-से नाम क्यों चुन रखते हैं? समन!  
 सोसन! बहुत प्यारे नाम हैं ये!”

और वह बोला—“यहाँ पूज नहीं मिळते न, इसलिये।”

मेरा मौहर मारी खेम को एक कन्धे पर से दूसरे कन्धे पर बदलते हुये  
 बोला—“यहाँ पूज नहीं मिळते इसलिये! क्या मतलब?”

और सारवान अपनी आँखों पर से मुँडासा उठाते हुये बोला—“तुम शहरों  
 में रहने वाले अपने बागाचों में नगहीं नगहीं नक्रुआ पहाड़ियों और घाट घाटे रेत  
 के जिते बना खेते हो, इसलिये कि यहाँ पहाड़ और रेगिस्तान नहीं हैं। हम  
 रेगिस्तानवाले अपने गाँव की फूजों का नाम इसलिये देते हैं कि यहाँ फूज नहीं  
 मिळते। बात एक ही है। जो वस्तु प्राप्त न हो सके, उसका नाम खेने से ही

मन को सतोप हो जाता है। हम समन से आ रहे हैं, हम सोसना जा रहे हैं। क्या तुम्हें इन नामों में कोई रस नहीं मिलता ?”

और मैं हँसते हुये बोला—“कुत्तों के पालने वाले को फूलों से क्या खगाव—उल्लू क्या जाने कि दिन का प्रकार क्या चीज़ है ! भैंस को क्या पता ”

और वृद्धा मेरी बात काटते हुये बोला—“आप को तो मेरी हँसी उड़ाने में मज़ा आता है। अभी तो आप ने मुझे उल्लू और भैंस बनाया है। अब अगर मैं आप को न टोकता, तो खुदा जाने, आप मेरे खिये किन किन नामों का प्रयोग करते ?”

“घनचक्र !” मैं बोला और सारवान और मैंने ज़ोर ज़ोर से ठहाके लगाये और जब हमारे ठहाके खत्म हुये, तो मैंने कजावे पर दर्या-दर्या हँसी सुना। निगाह पलट कर मैंने ऊपर देखा और नये वस्त्रों को घेचैनी से अपने हृदय गिर्द खपेती हुई युवतियाँ सिमट गईं। मेरे मस्तिष्क में हलकी हलकी हवा-सी चलने लगी, जिससे मेरे अनुभव के अक्षर झुक गये और देर तक मेरे स्वप्नों के फूँक अपने पशुदियों कषकषाते रहे और जब मुझे शान्ति-सी मालूम हुई, तो मेरा नौकर और सारवान भूत प्रेतों की बातें कर रहे थे।

“भूत तो सैर भूत हुये,” मेरा नौकर कह रहा था—“लेकिन इस प्रेत का क्या मउजब ?”

सारवान बोला—“प्रेत परियों को कहते हैं न ?”

“और परियाँ क्या चीज़ होती हैं ?” मेरे नौकर ने पूछा।

“परियाँ ?”

“हाँ, परियाँ—और यह खेमा तो ऊपर किसी कजावे में अटक दो।”

सारवान ने हँसते हुये खेमा उसके कन्धों से उठाया और ऊपर कजावे की ओर उठाते हुए बोला—“छे भरगिस, तू अपने आगे रख ले या उधर नरतरन को दे दे।”

मेरा नौकर एक दीर्घ निश्वास छेते हुये बोला—“हाँ, तो क्या होती हैं परियाँ ?”

“परियाँ ?” सारवान सोचने लगा—“परियाँ सुन्दर लड़कियाँ होती हैं। उनके गुनहरे पर दाते हैं, वे वायु में तैरती रहती हैं, और जब उनका साय, किमी पर पड़ जाय, तो वह अपने हवास खो बैठता है।”



और मैं अनायास ही कजावे की छाया स हर कर एक और हो गया । सुन्दर लड़कियाँ—सुन्दर बाँकी वाली, जानू-भर सार्थी वाली । और अचानक यह विचार मेरे हृदय में खुभने लगा कि कहीं मैं मृत प्रेत के घर में तो नहीं आ गया । यह पीछी, सनसनाती हुई आँदनी, यह घण्टियों की स्वप्निल टन टन, ये लम्बे-लम्बे डग भरते हुये ऊँ, य वायु में सैरती हुई परियाँ, यह समन स आने वाला और सासन को जाने वाला वाग्निजा—यह अजाब कानों पर हाथ रखना और गीत गा कर मुझे फिर वहीं रैताले मैदानों में ले आया ।

“हे खजूर की टाछों पर फुदकती हुईं ममोजन ! उड़ जा, और अपने ममोजे का किसी और खजूर पर प्रतीपा कर, क्योंकि इस खजूर के तले आज मेरी प्रेमिका आयगी ।

“हे खजूरों का टाछियो ! धीरे धीरे मूँको, और अपने सूले हुये पत्तों को खड़खड़ाओ नहीं, क्योंकि आज यहाँ मेरा प्रेमिका आयगी ।

“हे तेज वायु के झोंको ! इन टाछियों से लिपट लिपट कर सरमराओ नहीं, और इस घूद तने में घुस कर साँटियाँ न बनाओ, क्योंकि आज यहाँ मेरी प्रेमिका आयगी ।

“ह तारागण्य ! प्रकाश के फीवारे बरसाओ और हे तितलियो, अपने परों की एक सेज बिछाओ, क्योंकि यहाँ आज मेरा प्रेमिका आयगी ।”

‘किसका गीत है यह ?’ मैंने पूछा ।

“मेरा अपना !” वह बोला ।

‘अच्छा ! तो तुम गीत भी बना लेते हो ?’ मैंने पूछा ।

“जी हाँ !” वह बोला—“जब आँदनी रातों में एक नवयुवक अकेला ऊँट की नकेल थामे विलुप्त मैदान में किसी दूर स्थान को जा रहा हो, तो वह गीत बनाने पर मजबूर हो जाता है ।”

“ठीक है ।” मैंने कहा—“लेकिन गीत बनाने वालों को एक और आज्ञा भी चाहिये ।”

“वह क्या ?” उसने पूछा, और फिर अचानक मेरा हाथ पकड़ कर धारे से बोला—“दखिये, कजावों पर कुमारी लड़कियाँ बैठी हैं !”

और यह विषय यहाँ समाप्त हो गया ।

“किसको बारात है ?” मेरे नीकर ने पूछा ।

और सारथान ने उत्तर दिया—“समन के सभ्रदपोश के बेटे की। हम सोसन के एक बहुत शरीर धराने में जा रहे हैं।”

“यह क्यों ?” मेरे नौकर ने पूछा।

और सारथान ने मेरा हाथ दबाते हुये कहा—“भूत प्रेत का असर है।”

और ऊपर कजावों में नये पत्र सरसराये और जब हम सोसन के निकट पहुँचे, तो दूर हमें बहुत सी धाजटेनें दिखाइ दीं। इधर से गाले छूटने लगे। बाराज के बगले सिरे पर डोल और शहनाहियाँ यजने लगीं। ऊँठों का गरदनोँ और घुटनों के साथ घुघरघों के हार बाँध दिये गये और त्रिमिल सुरीली धावागों से मैदान में एक कोलाहल मच गया। सारथान ने मुझसे पूछा—“आप रात कहाँ थितायेंगे ?”

और मैंने जबाब दिया—“मेरी यहाँ कोई जान पहिधान तो है नहीं। मैं तो गाँव हसलिये आया हूँ कि यहाँ खाने पीने की चीजों आसानी से मिल जायेंगी। यहीं बाहर किसी खेत के किनारे रोमा तान लूँगा।”

वह मेरा हाथ पकड़ते हुये बोला—“क्या ज़रूरत है खेमा खदा करने की ? मेरे यहाँ पड़ रहियेगा। हम सब तो नाचने में लग जायेंगे और फिर आप भी मुसाक्रि, हम भी मुसाक्रि, सब मुसाक्रि भाई भाई होते हैं।”

“बहुत अच्छा।” मैंने कहा। शायद मैं इन्कार कर देता, लेकिन वह कवि था और कवियों के विषय में मैंने जो-कुछ कितायों में पढ़ा है, उससे यही निष्कर्ष निकाला है कि वे बहुत सरल और बहुत सहृदय होते हैं।

यद्यपि उस रात मुझे नींद न आइ, लेकिन मुझे एक सादा-सा विस्तर मिल गया और शहनाहियों, डोलों और बाजों-तारों की गूँज में मैं सोसता रहा कि सम्य समार से दूर रहने वाले इन अपद सारथानों को आतिथ्य-सरकार किसने सिरपा दिया ? मुझे अच्छी याद है कि जब मैं पहिली बार देहली गया और वहाँ चौदनो चौक में एक महाशय स कारमीरी दरवाजों का रास्ता पूछा, तो वह नाक मों बदा कर बोले—“इधर चले जाहये, और फिर इधर मुद कर सीधे चले जाहयेगा !” —और जब मैंने उधर देखा, तो एक ऊँची विशाल इमारत पड़ी थी, उधर एक छपाखाना था और सामने नाक की सीध में वही दामों की खदखदा हटों स पूर्ण चौदना चौक !

समन का रहने वाला यह नवयुवक कितने प्रिय व्यक्तित्व का मालिक है और कितना अच्छा गाता है ! और इसके गानों में कितना रस और कितना माधुर्य है। और वह कजावों में घेठी हुई खियाँ, जिन्होंने यातक

के घचानक रुक जाने को ज़रा भी घुरा न माना—और झांकिले का सरदार गुलाब खॉ, जिसने एक अपरिचित के लिये वारान जगल में झांकिले का झांकिला रोक लिथा और फिर ये खुले मैदान और इन उमरे हुये टालों पर झिंका हुई खॉइना—यह खालिस पचास घरो वाला नगड़ा-सा गाँव—यह डोल और यह शहनाह्यो—यह खालिस खहर का बिस्तर और यह भोंडा खालतेन—कितना खवतत्र है यह ससार और कितना पवित्र है इसका वानावरण ! साथते-सोचते में अपने बिस्तर से उठा और दरवाजे पर खड़े हो कर मैंने सामने दृष्टि दीवाई । खम्बी लम्बा खपटें खड़ाखती और धुखों उखाती हुई मशालों के हृद गिर्द नौजवान किसान धूम रहे थे और पास ही एक घर से कुमारियों के मिला कर गाने की आवाजें आ रही थी । मैं धीरे धीरे कदम उठाता मजम के निष्ठ पहुँचा ।

ताज मुर से अज्ञात और उतार चढ़ाव से येप्रवर टीन की भीति वजती हुई पुराना टाळक के हृद गिर्द सब नाच रह थे । मशालें उन सज के बहरों में आग सा लगा रही थी और बहुत दूर कच्चे घरीनों की छतों पर नौजवान खड़कियाँ—और पास पास खपड-मुड बेरियों पर नख्खट बच्चे दम साथे बैठे गीत सुन रहे थे तथा नाच देख रह थे । चौड़े तालुजों और फनी हुई नदियों की वार वार फन्क से टोळक बजाने वाले के हृद गिर्द एक खवएदर-भा मेंडरा रहा था और फन्कों के पूरे ज़ार से निकले हुए खर सुनहरे गुवार में गरमते रूपहले टीला से टकराते, मानां सृष्टि स खिपते पड़ते थे ।

‘धाली में कगेरा धरा है ।

पनघट के पानी में तेरा चेहरा काँव रहा है ।

येरी तर छोता बैठा है ।

गबरू मुँदरों की ओट में कुमारियों की ताक में हैं ।

भडा स धुखों उठ रहा है ।

इस पगडडा पर किस मुस्ताफिर का घोड़ी ने गर्द-सी खा दी है ?

दुखिहन मायके से आ रही है ।

दूरहा मेंहदी रचे पाँव के लिये गेंदे की कलियाँ एकत्रित कर रहा है ।’

—धम धमा-धम, धप धप, धम धमा धम, धपधप ! और पाँव की ताज और गीत की लय में खीन सुनने वाले नवयुवकों की ‘हाय हाय’ ‘वाह वाह’—और टोळक बजाने वाले की खँगुलियों का धुनी के साथ नृत्य—असहय मरियाले पैरों की अख्यवरियत करवटें । टोळक की अन्तिम धप और फिर उहाक, हुक्के का गुड-गुड, कानाफूसियों और नये गीत की तैयारियाँ ।

मुझे देख कर मेरा नौजवान सारथान मित्र मेरी ओर लपका और मेरा हाथ धाम कर बोला—“आप अभी तक सोये नहीं, मैं तो समझे बैठा था कि आप कब के आराम कर रहे होंगे। आप दिन भर के थके माँदे हैं, जा कर लेट रहिये। हमारे नाच गाने में क्या धर है? सुना है, आप के शहरों में लड़कियाँ रेशमी वस्त्र पहिन-पहिन कर नाचती हैं और जब मौसि मौसि के बाघों की गत पर गाती हैं, तो ऐसा लगता है, मानो काँसे के असह्य कणोरे आपस में टकरा कर मनमना रहे हैं।”

“ठीक है।” मैंने कहा—“लेकिन यह लड़कियाँ लड़कियाँ नहीं होती, पुतलियाँ होती हैं, ऐसे दो और नचवा लो। अपनी खुशी से नाचने वालियाँ इन जगलों में रहता हैं। वहाँ तो नाच और गाना कौदियों के मोल बिहता है।”

नाचते हुये पाँव रुक चुके थे और ढोलक बजाने वाला ढोलक की गँठें तान रहा था। सब लोग चुपचाप खड़े मेरी ओर घूर रहे थे मानो मैं प्राचीन काल की कथाओं का नायक हूँ और लका द्वीप का परिया और जिनों की क्रेड से निकल कर आया हूँ।

मेरे सारथान मित्र ने मुझे मेरे निवास स्थान तक पहुँचा दिया और कहा—“आप आराम करें, मैं सुबह तकके, आपको जगा दूँगा। सुबह तकके आप क्या चीज़ पाने के आदी हैं?”

“पतली छाड़ !” मैंने मुस्कराते हुये जवाब दिया, और यह हँसता हुआ दूर नाचने वालों के जमघट में जा मिला।

मैं बिस्तर पर लेटा था और इस विचित्र धान-दमय वातावरण के विषय में सोच रहा था कि अपने निकट मुझे चूड़ियों का एक छुनाका-सा सुनाई दिया। मैं सिर से पाँव तक चादर में लिपटा पड़ा था, और कवरना-ससार में विचरण कर रहा था, इसलिये इस छुनाके की एक बड़म समझ कर करवट बदल ली। लेकिन अचानक मेरे कन्धों को किसी ने छुआ, और साथ ही धार्मी सा आवाज़ आई—“सुबुल, ये सुबुल, तुम तो कहते थे कि मुझे आज रात नींद ही नहीं आयेगी।”

मेरे काल्पनिक स्वर्ग में सिराँ एक परी की कमी थी, जा अब पूरा हो गई। लेकिन परदेश में एक अपरिचित बालिका को अपने इतने निकट पा कर मैं घबरा-सा गया। चादर मुँह से उतार फेंकी और खाट पर उठते हुये बोला—“नींद तो मुझे भा नहीं आता, लेकिन मैं सुबुल नहीं हूँ, मेरा नाम गज़न फ़र है।”



—और गङ्गानगर, अगर तुम धुरा न मानो, तो मैं नित्य रात को तुम्हारे घरों में अपने प्रेम के फूल चढ़ा जाया करूँ, क्योंकि तुम मेरे स्वप्नों के देवता हो।”  
—ये कानाकूसियाँ मुझे अपने कोठे की चहरदीवारी में सरसराती हुई सुनाई देतीं और मैं सोचने लगता कि उन सब लड़कियों में से वह कौन सी लड़की है, जो यों छिप छिप कर मेरे मन में जुगनू चमकाता रहती है और जब जुगनू चिनगारियों का रूप धारण करने लगे, जब मुझे इन टिमटिमाहटों में हलकी हलकी जलन का अनुभव होने लगा, तो मैं घबरा सा गया। क्योंकि मेरी मँगनी हो चुकी थी और कहते हैं कि मेरी भावी पत्नी इतनी सुन्दर है कि मैं अगर उसे देख लूँ, तो कवि बन जाऊँ।

खिड़कियों से ढर ढर कर और सहम सहम कर झँकने वाले वे फन्धे से अगर महीन स्वर वाली युवती की अँगुली छू जाय, तो नौद कहीं से आये। मेरी नौद डग गई, मेरी थकावट दूर हो गई और जब पौ फन्धे में एक घटे के वरीय घात्री रहा, तो मैं बाहर निकल आया। पीला चाँद दूर परिचमी चित्तिज के निकट ऊँच रहा था और मोटे-मोटे तारे सलेटी आकाश पर नाच रहे थे। वायु में ठटक आ गई थी और गाँव से डोलक की दबी-दबी थाप की धुन पर लड़कियों के थके-थके गीतों की भनक कभी-कभी मेरे कानों में पड़ जाती थी, जिसमें सिर्फ़ ये शब्द समझ सका—“नदियाँ—भरने—चाँदनी रातें—तारे—प्रेमी—अँखें—वाल—होंठ—।”

‘वह कैसी दुनिया है?’ मैंने सोचा—‘यहाँ के कवियों के मस्तिष्क में भरना तारों, अँखों और वालों के सिवा और कोई विषय नहीं! क्या यहाँ के लोग मृत्यु के नाम से अपरिचित हैं कि इनके गीतों में जीवन ही के भाव कलकते हैं? क्या यहाँ इस सत्य से कोई परिचित नहीं कि भरने रुक जायेंगे, तारे दूब जायेंगे, अँखें सुँद जायेंगी और वाल झड़ जायेंगे—और फिर इस नाचते और गाते हुये समूह से अँख बचा कर इस सुँधले मकान में खिसक आने वाली मनचला लड़की के मन में क्या समाया था कि वह सुबुल की धुन में विचारे गङ्गानगर की रगों में चिनगारियाँ भर कर धुँ के गाले की भाँति वायु मण्डल में विखीन हो गई?—गङ्गानगर, जिसने देहली में रगान शीशों की आड़ ले कर कई हवाई महल बनाये और जो इन महीन स्वरों, लम्बे-लम्बे वालों और मुझी मुझी अँखोंवाहियों के तनिक स्पर्श के बिये पचीस वर्ष सरसता रहा

गीतों के स्वर धामे पड़ते गये और मेरे विचार देहली और इस जगल की

रक्षियों की मूर्तियों में लिपटते गये। टीलों की टपकी रेत मेरे जूतों में भर गई थी, जिसके कारण मेर जलते हुये तलवों को बड़ी शान्ति मिल रही थी। प्रातः काल का तारा पूर्वीय चित्र पर किसी सौवर्गी दुलहिन के माथे पर सिन्दूर के टाके की भाँति चमक रहा था और आस पास थकेले बूजों में टिढ़े बिहला जा रहे थे कि अचानक मुझे अपने निकट ही एक भरी हुई कानाफूसी सुनाई दी। मैं छट रत पर दबक गया। कान लगा कर सुना, तो आवाज़ आई— 'इसो जिये तो मैं धार-धार तुम से पूछ रहा हूँ कि तुम आज इतनी उदास क्या हो? समन से बाहर टरावनी खजूरों में जब हम छिप छिप कर बातें करते थे, तो तुम कितना प्रसन्न होती थीं! तुम्हारे झोंटों पर पपड़ियाँ और तुम्हारी झोंटों में यह नम्रा मुझे उन दिनों न दिखाई पड़ी, यद्यपि प्रति क्षण हमें अपने भेद के प्रकट हो जाने का भय था, लेकिन अब यह सोसन का जगल और यह शुष्क चौदना—लोग गाँव में नाच और गा रहे हैं और हम इधर बरूल की झोट में एक दूसरे के निकट—इतने निकट बैठे हैं। नरगिस! तुम्हारे दिल में आज कैसा कौटा रटक रहा है? तुम इतनी लुपचाप क्यों हो, नरगिस?'

और इसके बाद मुझे नरगिस की सिसकती हुई आवाज़ सुनाई दी— 'मुझे तो यह मनहूस मैदान जैसे निगल लेगा। मैं तो घबरा गई हूँ सुबुल, मैं सोसन में घबरा गई हूँ, मुझे आज सुत्रार चढ़ रहा है।'

और इसके बाद बहुत सा उलझी हुई और निराशापूर्ण कानाफूसियाँ होती रहीं। और फिर बरूल का झोट से एक साया उठी और सुबुल की आवाज़ आई— 'चलो, चलो, या तुम पहिले चला जाओ, यहाँ अकैला अकैली घबरा जाओगी।'

"नहीं," नरगिस न जवाब दिया— "पहिले तुम जाओ, पी फटत ही मैं गाँव में आ जाऊँगा। अब शहर मुझे रास्ते में कोई मिल जाय और पूछ बैठे कि मैं इस समय किधर गई थी, तो मैं क्या जवाब दूँगी?"

और सुबुल बोला— 'तो फिर पी फटे तक मैं यहीं तुम्हारे पास ही क्यों न पड़ा रहूँ?'

"नहीं, नहीं, सुबुल!" दबी दबी और दिनचर्यापूर्ण आवाज़ आई— 'तुम नाओ, बस—अब तुम जाओ!'

और सुबुल धीरे धीरे ज़दम बढ़ाता टीलों की दूसरी ओर गायब हो गया। प्रातः काल का तारा बहुत ऊँचा चढ़ आया था और पूर्व का अंधकार कँप-

कैपाने खगा था। मेरे मन में दिल्ली की कसीदा काइती हुई लड़कियों और यहाँ की ग्रामीण रमणियों की मूर्तियाँ सिमटने लगीं और अन्त में एक परछाईं में समा गई, जो मेरे सामने बगूल की ओट में बैठी जाने क़िधर देख रही थी।

अचानक एक विचार मेरे हृदय को खरोंचता हुआ मेरे मस्तिष्क में घूमने लगा। वह विचार ठीक ऐसा घूम रहा था, जैसे लड़के तालाब की सतह पर पत्थर पिरकाते हैं और वह लम्बा-सी सफ़ेद रेखा उत्पन्न कर बहुत स दापरे बनाते और बुलबुले छोड़ते तह की ओर डूबने लगते हैं।

एक बहुत लम्बा चक्कर काट कर मैं उस बगूल की ओर चला, जहाँ नरगिस पौ फटने की प्रतीक्षा कर रही थी। सादा बजाता हुआ मैं उसके निकट से गुज़रा। वह बगूल के नीचे गठरी की भीति सिमटी जा रही थी। मैं या ही लापरवाही के ढग से बगूल के निकट से गुज़रते हुये ठिठक कर खड़ा हो गया। "शा शी!" करते हुये मैंने ताला बजाई, और फिर दो इदम आगे बढ़ कर मैंने नरगिस के शरीर को छू लिया। 'शी!' मैंने फिर ताली बजाई, और अब नरगिस पागलों की तरह धाल झटक कर उठ बैठी। उसका सीना तेज़ तेज़ साँसें लेने के कारण धमरा और डूबा जा रहा था और उसके केश हड़ हड़ कर बगूल की सूखी टहनिया से लिपटे जा रहे थे।

"कौन है तू?" मैंने हपट कर पूछा।

"अरे! गज़नज़र!" दबी दबी आवाज़ में वह बोली।

"तुम ने मुझे कैसे पहिचाना?"

"तुम्हारी शिकारी पोशाक से?"

"और तुम कौन हो?"

"मैं मैं मैं इधर समन से बारात के साथ आई हूँ। वहाँ नाचते गाते थक गई, तो जी बहलाने इधर चली आई।"

"हा हा हा!" मैं हँसा। "मैंने समझा, कोई हिरनी छिपी बैठी है। शिकारी जहाँ जाय, शिकार का भूत उसके सिर पर सवार रहता है। अच्छा हुआ कि मेरे पाम इस वक्त बन्दूक नहीं थी, नहीं तो बदा घुरा होता।"

वह चुप बैठी रही, उससे बात करने के कई बहाने तेज़ मोंका की तरह मेरे हृदय पर बहुत-सी लहरें पैदा करते गुज़र गये। पूर्वोक्त चित्तिज पर अंधेरा उसी तरह क़ॉप रहा था और प्रातःकाल का तारा, मानो मेरी भावनाओं के विहगम तूफ़ान पर मन ही-मन सुस्करा रहा था। आखिर मैं बोला— "कहा तो मैं तुम्हें गाँव पहुँचा दूँ।"



उसने उबते हुए बेसों को एक हाथ से हकड़ा करके दुपट्टे को पीछे सरकाते हुये कहा—'मैं सुद खड़ी जाऊँगी, मैं रास्ता जानती हूँ।'

'रास्ता तो तुम ज़रूर जानती होगी।' मैंने कहा—'लेकिन मुझे सुबुल की खिता है, वह तुम्हारी राह देख रहा होगा।'

वह थों थोंक पड़ी, जैसे न-है परचे सोते में वादल का गरज से दर कर घबरा जाते हैं और बड़बसास हो कर हथर उधर देखने लगते हैं। उसने धारों और निगाहें दीवाईं और फिर मुझे कुछ पण्य पागलों की भौंति घूर कर गरदन झुका ली और रेत को मुट्टियों में भरने लगी।

'मैं सध-कुछ देख रहा था।'—मैंने उसके कन्ने में एक और सुई चुभो दी। मुझे कमज़ोर की कमज़ोरी से लाभ उठाने में बड़ा आनन्द आता है। बोला—'मैं सध-कुछ देख रहा था। लेकिन नरगिस, तुम आज इतना उदास क्यों थीं? सुबुल बेवारे का आनाज़ मराई हुई था। न जाने इस रेत में उस धकार के कितने आँसू सूख चुके हैं। नरगिस, यद्यपि मुझे कोई अधिकार नहीं कि तुम्हारे निजा मामलों में दखल दूँ, और मुझे आशा भा नहीं कि जो बात तुम सुबुल को न यता सको, वह मेरे सामने कह डालोगी, लेकिन अगर मैं तुम्हारे किसी काम या सङ्क तो मैं बड़ी पुराणा से यहाँ चन्द दिन उठर जाऊँगा। देखो न सुबुल मेरा मित्र है, यद्यपि मेरी और उसकी मित्रता चन्द्र-घण्टे पूर्व ही हुई है, लेकिन मैं उससे स्नेह करने लगा हूँ। तुम्हें उसके खिलाफ़ कोई शिकायत पढ़ा हो गई हो, तो मुझे बता दो। मैं उसे सीधे रास्त पर खे आऊँगा। मैं शिकारी हूँ, और मेरा निराणा बहुत कम चूकता है। सुनती हो?'

'जा! सुन रही हूँ।' यह बोला—'सुबुल से मुझे कोई शिकायत नहीं। सुबुल मेरा बड़ा पुराना साथी है। सुबुल के मन में कभी मेरा तरक़ से मैल नहीं थाया। सुबुल गीत बनाता है और यह तो आप जानते हा होंगे कि गीत बनाने वाले का लक्षकियाँ बहुत चाहती हैं। लेकिन वह इन सत्रके सौंदर्य का आर से इस प्रकार आँसू बन्द कर लेता है, मानो वह मेरे अतिरिक्त दुनिया को सारी कुमारियों के लिये अंधा हो चुका है। लेकिन मैं मैंने मुझे "

वह एक गई और मुट्टियों में भरा हुई रेत नीचे गिराने लगी।

'तुम न बात पूरा नहीं की!' मैं उसके पास जा कर बोला।

'मैं " वह हकलाने लगी—'मैं आज बहुत उदास हूँ। मैं पारत के साथ न आती, तो अच्छा था।'

मैंने पूछा—“लेकिन आग्निर तुम्हारा यह उदासी सुजुत के साथ जापरवाही से क्या सम्बन्ध रखती है ?”

और अचानक हवा में उसका दुपट्टा फड़फड़ाया और मेरा बाहों से लिपट गया। उसन दुपट्टा खींचन के लिये हाथ बढ़ाया। इधर मैंने अपना बाँह छुड़ान की कोशिश की, और हम दोनों के हाथ एक दूसरे में छू गये। मेरी बाँह स उसका दुपट्टा लिपटा रह गया और वह पाछे हट गई। उसके बाल हवा में उड़ने लगे और मैंने उसका दुपट्टा बाँह से उतारते हुए कहा—“ला।” और हमारे हाथ फिर छू गये। लेकिन अब का जो छुप, ता अलग न हो सके, जैसे धिरक कर रह गये हैं। हम दोनों की अँगुलियों में कोई विचित्र सा कपन भर गई। और वहाँ बयूल का सूखी टहनिया का आध में मैंने देखा कि पूर्वीय पितृज पर पौ फूट रही है। नरगिस के चेहर के हृद गिद मुझे एक धामा दिवाह पढ़ने लगी। मैंने उसकी नरगिसा आँखों की धमक, उसके गुलाबी गालों का अनुभवदान नमी और उसका पतल अक्षरों की कपन पर निगाहें गाढ़ दी और जब हमारी प्रकृति हुई अँगुलियों कीला हुई और हमारे सिर पर स एक पक्षी सन से गुजर गया, तो मैंने पूछा—“लेकिन तुम उदास क्यों हो, नरगिस ?”

और वह मेरा धरती के शान पर अँगुली फेरते हुए बोली—“आज रात, जब स मैंने आप की बातें सुनी हैं, और फिर आप को मुजुल के धोखे में जगा बैठी हूँ तब स भरे मन में आपका चेहरा धम रहा है। मुझे इन जगलों से नरकरत हो गई है। मुझे आप से और आप के देश से प्रेम है, लेकिन आप परदेशी है। आप आज या कल यहाँ से चले जायेंगे और मैं राता को समन के खचूरी के मुण्डा में बैठ कर आप की परछाइयों से बातें किया करूँगी।—आप कब जायेंगे ?”

‘मैं कभी नहीं जाऊँगा।’ मैंने उसका हाथ दवातं हुए कहा। आठ दस कौनों का गोल हमारे सिर पर से कौं कौं करता सोसन की तरफ उड़ गया।

और जब वह बयूल की ओर चल दी, तो मैंने अनुभव किया, मानो अचानक मुझ पर उल्लाम के बादल परस पड़े हैं, जैसे सोये हुए भाग्य की गरदन बट कर अलग जा गिरी है और जैसे समस्त विश्व का युवतियों और विशेषकर दिल्ली के उस कोठे की युवतियों लपक लपक कर मेरे चरणों पर अपने मस्तक रख रही हैं और कहता है—‘हमें चाहो।’—और मैं सब को

दुर्दाम हुए कहता हूँ—'नरगिर के पृथ्वी और गूढ के कौनों की क्या बराबरी? जाओ यह शिकारा इन्हीं जगलों में शिकार सेजगा—जाओ!' और उत सुपुत्रियों को दुर्दाम का पुन में मने कई बार चञ्चल चञ्चले रेश का एक मुञ्जान बना दिया।

मैं सोलन वापस पहुँचा और जब बारात के जाने का तैयारियाँ होने लगीं, तो दुर्दाम मुञ्ज ने मेरे कंधे पर हाथ रखा हुए कहा—'आप आप का क्या हारा है?'

मैं मुस्कराते हुए कहने लगा—'मैं समन में तुम्हारे साथ कुछ दिनों रहना चाहता हूँ। मुझ मुम जैसा मरल रचनाय बाबा प्यास दोस्त कहीं नहीं मिला और तुम्हारे साथ कुछ पय बिगा कर मुझ हार्दिक प्रमत्ता होगी।'

और मुञ्ज प्रमत्त हो कर बोला—'आप मरा कौनों पर रहिये, मेरा घर आप का घर है आप शीक म शरारत छाह्ये!'

और मरा पूडा मोहर तब्य कर कहन लगा—'लेकिन मियाँ जा, वह मेरी बुद्धिया बेघारी श्वाट पर पफी पृथिवी रगद ग्री होगी मेरे मिया उमे पूछने वाला हो कौन है? फिर इस जगल में हिरनियाँ तो अय मिल्ती नहीं, जो समय बात सके।'

मैंने उमकी पीठ टोंकते हुए कहा—'मिळती हैं। लेकिन तुम सुशी से वापस चळ जाओ। मेरे साथ तुम कहाँ रेश पाँकते फिरने! कुत्तों को भी साथ ले जाओ मैं सुपुत्र भाइ के साथ कुछ दिनों रह कर वापस आ जाऊँगा।'

और पूडा भवें मुका कर और पुतलियाँ फेर कर मुझे यों घूरने लगा, मानो कह रहा हो—'बच्चे, तुम पर भूत प्रेत का असर हो गया है, और अय तुम पर मेरा वश नहीं चळ सकता। सुना हो तुम्हें वापस छाये तो छाये!'

और जब बारात समन को वापस रवाना हुई तो सब मौजवान सारवानों ने मेरी ओर इशारे करते हुये सुपुत्र से आ कर पूछा—'क्या आप भी समन जा रहे हैं?'

'हाँ!' वह गर्व के साथ सब को उत्तर देता और सब एक दूसरे की ओर देण कर मुस्कराते और कहते—'यफी सुशा का बात है!'

और ऊपर सुपुत्र के ऊँ पर नूखते हुये कजावे में मैंने नरगिर को देखा जिसका चहरा तेज धूर में कुद की तरह दमक रहा था और जिसके शोंडों पर मुस्कान थी, जो शायद मुबह के तारे की फेंकपाइंटों से मिळ कर बनी थी।

उस दिन मुझको मालूम हुआ कि कवि घेचारे भूठ नहीं लिखा करते, विस्फुल्ल सच कहते हैं। उन्का कल्पना में प्रतिशयोक्ति का दोष निकालने वाले ज़रा किमी ऐसे कजावे का छापामें चल कर देखें, जिसपर एक सुन्दर नव युवती बैठा मूज रही हो, तो उन्हें अपनी इस धारणा को बदलने के लिये विवश होना पड़ेगा। मैं चाहता था कि इस कजावे के साथ मरते दम तक चलता रहूँ और फिर ऐसा हो कि यह ऊँ अपने क्राफिले से अलग हो कर भटक जाय। असम्भ्य टीलावाले सुनसान विस्तृत मैदान में यह कजावे वाले नीचे उतरें और वहाँ हम चाँदनी रातों और रुपहले प्रात काळ की गोद में ऐसी मीठी माठा बातें करें जो कवि लोग अपनी कविताओं में लिखा करते हैं और फिर अचानक मुझे सुबुल का ध्यान आ गया—'उस ऊँ के भटक जाने से घेचारे सुबुल पर क्या बीतेगी। किसी द्वीवार से तिर पाइ खेगा, पागल हो जायगा और लगनी दोपहर में, जलता रेत पर नगे पाँव खोजता रहेगा और किमी उदास सभ्या को, अब ' लेकिन अचानक मुझे सुबुल की आवाज़ ने चींका दिया। वह गा रहा था—

"तुम्हारा चेहरा चाँद की तरह बेरग और अप्रतिम क्यों है ? तुम्हारे बालों पर यह गद और तुम्हारी पलकों पर यह नमी कैसी है ? तुम्हारी चाल में यह ढालापन और तुम्हारी बातों में यह निराशा कैसी ? तुम यह क्यों नहीं कहती कि तुम ने कहीं मेरी मौत का क्ररिश्ता देख लिया है ?"

ऊँओं की घटिया टन टन बजती जा रही थीं और उनके क्रदम रेत पर हरकी-मो 'तिस खिस' का शब्द उरपल करते, टीलों के बीच नाचते हुए बड़े जा रहे थे। कजाव पर एक बार मैंने नरगिस की ओर देखा, जो सुम्बुल पर दृष्टि गाड़े बुद्ध सोच रही थी और जैसे ही उसकी आँखें मेरी आँखों से मिलीं, वह मुस्करा दी और मैं समझा, मानो यह ऊँट अपने क्राफिले से भटक गया है।

समन बड़ा सुन्दर गाँव था। पचास साठ घिराँदे और फिर सारे गाँव को घरे हुये लम्बी लम्बी खजूरों की पत्कियाँ। इन खजूरों के आसपास खेत थे और खेतों के दूसरा घोर वही रत का समुद्र। सुम्बुल मुझे अपने घर ले गया। रगोन पायोवाले एक पलग पर खदर की नई चादर बिछाई गई और उसे एक छप्पर के नीचे रख दिया गया। फिर सुबुल और उसके घर वाले मेरे पास आ कर बैठे तो ऐसा प्रेमपूण बातों का मिलसिला शुरू हुआ कि मेरे मन में आया कि यहाँ से खिसक कर नरगिस के पास चलता जाऊँ और उससे कहूँ—

और यह पूर्व की तरफ इशारा करत हुए बोला—“धर, इत भुख क पास ।”

और मैंने मन-हा-मन शुद्ध का शुद्ध अंश दिया कि हमारा मुग्ध परिश्रम की ओर था ।

जब तीन रातें कर्जुरांक डम रसगिय मुग्ध क नाथ बोल चुका और कौपा रात का प्रारम्भ था—और जब मैं नरगिस की छाँपों पर तिर रग कर उमे अन्तर चीराजो को एक कविता का अर्थ समझा रहा था, तो अचानक एक मर्दा सी द्वाया हमारे सामने आ लप हो गई । हम दोनों चौंक उठे और हमारे तिर चकरा गये । मैंने मरभीत होकर पूछा—“कौन है तू ?”

“मैं मुग्ध हूँ !” वह बोला—“और यह नरगिस और रगर राजनकर थका गयी है ?”

और यह निकट आकर एक हाथ मेरे कंधे पर और हमारा नरगिस के कंधे पर रखते हुये बोला—“लेकिन आप को धरान की इस्लत नहीं । मैं आप को कोसने नहीं आया, मैं आप से सिर्फ एक बात बरने आया हूँ । आप जानती हैं नरगिस ने मुझे कवि बनाया, नरगिस ने मेरा उजाड़ रातें बसाई, नरगिस ने मेरे जीवन पर हमलों की छुवारें धरसाई ! आप सब-कुछ जानती हैं, क्योंकि आप चौपा रात है । मैं इन रातों का ओर में आप होतों की बातें सुनता रहा हूँ । आप मेरे दोस्त हैं, यद्यपि आप को यह अधिकार न था कि आप मेरी भ्रमिका को हथिया लेते, लेकिन अब—जब कि नरगिस मुग्ध में एक चुकी है मैं अपना यह अमानत आप को सौंपता हूँ । मैं स्वामिसाना किमान हूँ । मैं चाहता, तो आप के कलने में एक सेज गुरा भौंक करके आप को इन्हीं टीको पर फेंक देता और गाली गिद आप की यादियों नाच नाच कर आप के शहर पर आ भँडराते । लेकिन मैं कवि हूँ, मैं गात बनाता हूँ और मैं सिर्फ अपना प्रेम विपासा छुझाने का कायल नहीं । मुझे प्रथक दिल के धक्कने का अनुभव है । नरगिस से आप को प्रेम हा गया तो इसमें आपका कुसूर नहीं मैं अगर आप के प्रेम में बाधा डालूँ, तो यह मेरा पागलपन होगा । क्योंकि नरगिस के दिल में अब मेरे लिये कोई जगह नहीं रही । लेकिन इतना याद रखिय कि आप परदशा है, आप मुसाफिर हैं । नरगिस का दिल 7 ताड़ियेगा । अगर नरगिस का दिल आप के हाथों टूटा, तो याद रखिय लेकिन छोड़िये इस त्रिस्मे को, मैं सिर्फ अपना नरगिस का आप के हवाल करने आया था । मैं अपने दोस्त और अपने मेहमाँ पर हाथ उठाना गुनाह समझता हूँ । इसलिये

नरगिस, बैठ जाओ यहाँ, और राजनकर अली खॉ का सिर अपनी जाँघों पर रख लो। और राजनकर अली खॉ साहब ! आप इसे किसी कवि की कविता का मतलब समझा रहे थे, समझाइये, और अब मुझे इजाजत दीजिये और मेरे इस हस्ताक्षर को बुरा न मानियेगा, क्योंकि जब जलती हुई लकड़ियों पर पानी डाला जाय, तो उसमें स जो धुँवाँ उड़ता है, वह कद्दुया होता है। अच्छा खुदा हाफिज़ !”

हम दोनों अवाक् खड़े थे। और सुम्बुल धीरे धीरे चल कर खजूरों की पक्ति में शायब हो गया था। कितनी ही देर तक हम ने एक-दूसरे से कोई बात न की और जब नरगिस की सिसकियाँ ऊँची हो गईं, और मेरे हृदय की धड़कन से खजूर के तने भी काँपते हुये प्रतीत हुये, तो मैं धम से रेत पर बैठ गया। नरगिस भी निर्जीव लोथड़े के समान गिर पड़ी। यह रोती रही, मैं सोचता रहा और जब उसने रोते रोते अपना सिर मेरे कन्धे से लगा दिया, तो मैंने भराये हुये स्वर में कहा—“यह सुम्बुल मनुष्य है या देवता ? और नरगिस ! हम जाग रहे हैं या स्वप्न देख रहे हैं ?”

और वह अपने घाँसू पीँड़ते हुये बोली—“हम जाग रहे हैं, और यह सुम्बुल ही था, जिसने अपने प्रेम की लाश की खुद ही कफ़न दिया है। लेकिन मैं क्या करूँ राजनकर ? मैं लाचार हूँ, तुम इतने अच्छे, इतने प्यारे हो—और मुझे तुम से और तुम्हारे देश से इतना प्रेम है ”

( > )

जल्दा ही वे बादल छुट गये, जो सुम्बुल का साया हम पर फैला गये थे। और जब मैं नरगिस से विदा हो कर सुम्बुल के घर पहुँचा, तो सोचने लगा कि मैं क्या मुँह दिखाऊँ अपने मेज़बान को ! मन में आया कि चलूँ यहाँ ले, खौट जाऊँ अपने शहर की, लेकिन एक अशाबील खजूरों के उसी स्वर्गिय मुयड से उड़ती हुई आई और सन से मेरे सिर पर से गुज़र गई। समन से वापस चला जाना मेरे लिये बहुत कठिन था—और अब, जब सुम्बुल ने इतना बड़ा त्याग किया, तो अब उससे किम्क कैसी, जब उसका मन इतना साफ़ है, तो अपने मन पर यह मैल कैसा ? और जब मैं उसके मकान की दालान में दाखिल हुआ, तो वह ख़ाट पर उठ बैठा और बोला—“आप आ गये ?—आप को मेरी बातों का कुछ फ़ायदा तो नहीं है ? आप मेरे भाई हैं और यकॉन कोजिये कि मैं आप से ख़फ़ा नहा हूँ। मैं जिस अमानत का भार न उठा सका, वह आप के हवाले कर दी और अब आप के हाथ में मेरी अमानत की जान है।”

मैं चुपचाप विस्तर पर छोट गया। और देर तक हैरान होना रहा कि यह मसाला विचित्र है, यहाँ एक दूसरे के प्रेम का इतना अविश्वसनीय आश्चर्य किया जाता है और यह विचित्र प्रेमी है जिसने अपनी भावाँ का भट्टा अपने सीने में द्रिपा ला है—फुँक रहा है, लेकिन दम नहीं मारता।

और अब यह सिलसिला शुरू हुआ कि रात को सब लोग सो जाते, तो वह कहता—'भाई साहब, आप अभी तक बाहर नहीं गये?' मैं लज्जित और परेशान बाहर चला जाता और जब लौटना तो वह खान पर से उठते हुये कहता—'आ गया आन? किसी चाज का जरूरत है?'

एक महाना बीत गया। प्रति रात नरगिस का काजूलें मेरा घाँवों पर बिस्तर जातीं उसका नाम जहाँ पर गिर रख कर मैं देर तक खजूलों की पतियों से बलक हुये तारों को देखना रहता। अब हम बातें बहुत कम करते थे क्योंकि वे सब सुन्दर विचार एक दूसरे के सामने उगाने लगे थे जो साधारण प्रेम कहानियाँ में प्रयुक्त होने हैं और अब एक ऐसा रात भी आई कि जब मैं खजूलों के उस गुच्छ के निकट पहुँचा तो मुझे उसका हृदय गिर कर पड़ने लगे हुए धिपकीवाले भयानक भूत जगला नाच नाचते हुये दिखाई दिये और खजूलों की डालें मुझे के पत्रों का भीति वायु मण्डल में धारे धारे झूठता दिखाई दीं। मेरे हृदय में यह ताजना न था मेरी रगों में वह खौलाव न था मैं रेंगना हुआ सुपन के पास पहुँचा। नरगिस मेरी प्रताछा में बैठी थी। वाली—'तुम ने आज इतना देर क्यों लगा दी? हाज़ार करते करते मेरा शीतल पहरा गई। तुम आन थके थके क्यों हो और तुम्हारे चहरे पर यह उदासा क्यों है? राजनगर तुम आज क्या सोच रहे हो?'

वास्तव में मैं अब नरगिस से थक चुका था। मानव प्रकृति क्षान्ति की इच्छुक होता हुई भी एक विशेष समय में शान्ति से भागना चाहती है। मुझे अब उसका सुझावम जहाँ मैं प्रौलाह की या सगा मइसूम जाने लगी। और जब उसके बाल मेरी बाहों पर लड़गते तो मेरे शरार में एक झुरझुरा सी शीघ्र जाना, माना चीन्टियाँ रेंग रही हैं। यह विचित्र जीवन है। मैं उम दिन सोचना रहा कि दिन भर धरमिचित किमानों के अमघन में बैठ कर किजल गण्ये होंके, और शान—एक अपरिचित लड़की के लिये इस भयानक घन में इन उगाने खजूलों के गुच्छ में बिताया, न सिनेमा, न रेडियो न खोदना चौक और न कना सरकस न हुमायूँ का मन्त्रा और न जामे मस्जिद की सादियाँ। न एक नैवे टीले—तेज़ धूप और फिर रात को यह एक ही लड़की—नित्य

बंदी बाल, बंदी बालों, बंदी बालों और फिर यहां बालों ! चिबोड़ी हुई इट्टियों, हर वस्तु प्राणों का भय और फिर एक उदास और थकी हुई भीगी बालों-वाला सुपचार भेजवान, जा १ पड़ने के समान गाता है और १ उहाके लगा कर हँसता है, और यह देहाती झोकरा—यह मुझमें प्रेम नहीं करती—मेरे देश से, नवीन मध्यता के उम गहरारे मे प्रेम करना है, जहाँ उसके विचार में राजनकर बिना कितना किफ़्त और भय के बाज़ार के ठीक बीघोबीघ खड़ा हो कर उसके अधर घूम सकता है । यही ता कारण है कि वह अशमर कहा करती है—‘तुम मुझे अपने देश ले जाओगे १ ? तुम मुझे डामों पर चढ़ाओगे, तुम मुझ रडियो सुनाओगे मितमा दिखाओगे, १ये नये कपड़े दिलवाओगे, मेरे कानों में मने के सुन्दे होंगे और यहाँ में हाथ दाँत का चूड़ा—है न ?’

मुझे उबकाई आन लगी । मैं अंगदाइयों लेने लगा मेरी बालों नीचे से बोलता ही गई । मैं थक चुका था, मुझ अपने इद गिदं उहरे हुए पानी की गंध-सा आने लगी । उस दिन पत्र नरगिस ने मेरी उदासा का कारण पूछा तो मैं बोला—“वास्तव में मुझ शिकार का बहुत शौक है नरगिस ! एक महीने से मैंने कोई नया शिकार नहीं किया । कहा तो कल शिकार पर चला जाऊँ ! दो चार दिनों के बाद लौट आऊँगा और फिर तुम्हें अपने देश ले जाऊँगा, जहाँ हर काम बिजली के द्वारा हाता है । इमारता पर चढ़ने के लिये साड़ियों की ज़रूरत नहीं । बदन दबाओ और खट से ऊपर ! दूर जाने के लिये पैदल चलने की ज़रूरत नहीं मोटर में बैठो और छपाक से बह जा रहो ! नये कपड़े खराद कर दरज़ी का दूकान के चकर काटने की ज़रूरत नहीं सिबे सिलाये १अगर और मादियों खरीदो और पल भर में दुलदिन बन जाओ—चलोगी न ?’

लेकिन वह तो मोम की मूर्ति बन कर बैठी थी । मैंने कहा हिलाया, तो रोने लगी । मैंने कहना कर कहा—“विचित्र बात है, मैं अब उम्र भर इस सुन्द के नीचे पड़ा कैसे सदता रहूँ ! प्रेम के अलावा आदमी को दूसरे काम भी तो होत है ! मेरे माँ बान हैं, भाई-बहिन हैं । मेरे कामती शिकारी सुत्ते हैं । उनका देव भाळ करना भा मेरा पत्र है । शिकार भी गबना है, और फिर लौट आऊँगा यहाँ ! यहाँ से कभी न जाने का मैंने जो वादा किया था, उसका यह मतलब तो नहीं था कि बस यहाँ जम कर बैठ रहूँगा अरे यही आठ-दस दिन लगेंगे, फिर यही सुन्द होगा और यहा राजनकर होगा और ” लेकिन वह बंध ही रोती रहा, उसके बालों की डुङ्ग बूँदें मेरी हथेली पर गिरीं और मुझ ऐसा अनुभव हुआ, मानो मेरे हाथ पर कितना ने तेजाब छिड़क दिया हो । मैं धररा कर उठा—“अच्छा नरगिस, आज इतवार है न ?



आगले हतवार को इसा समय यही मौजूद रहना, मैं जरूर आऊँगा, सुनती हो ? चण्डा !'

मैं उसके हाथ का पक कर कुत्र म बाहर निकल आया, लेकिन वह वहीं बैठी रही और जब बहुत देर के बाद ठंडी, तो वहाँ तीव्रता और घबराहट के साथ ! क्रम इस प्रकार उठाव मानी उठ जायगी। उसके हर क्रम पर जो रेत उड़ने लगी, जैसे मैंने नरगिस से प्रथम मिशन के अवसर पर पी पडे उड़ाई थी।

दूसरे दिन उसके हा मैंने मुग्धुल मे शिकार के बसाने मे हुआगत मोगी। उन मोगा हुई शौखों में चमक-मी पैदा हो गई और वह मेरा शैगुखियाँ दवाते हुए बोला—“आप वापस आयेगे ? आप साथ अपने घर का राह तो नहीं लगे ?”

“नहीं, नहीं।” मैंने मुग्धुलाने हुए पवार दिया—“वह भी कमी हो सकता है ? बस इतने मर के लिये इधर उधर घूम घाम कर खीट आऊँगा, जगली गाँवों में मेरे बहुत से मिलने वाले हैं, मैं उनसे मिल कर जश्न खौँगा, मैं तुम्हें कैसे छोड़ सकता हूँ। तुम तो मर चुक समझत हो !”

‘जा हों।’ वह कुछ साँचे हुए बोला—‘सब कुछ समझता हूँ इसीलिये तो कहा था कि जल्द खीटियेगा।’

और जब मैं समन स निकला, तो मिर पर पाँव रख कर भागा, जैसे कोई तितली किसी पत्ते की टापी में बहुत देर तक रुक रहता है और जब उस कारागार से निकलता है, तो इस प्रकार तेज और साथी उषतो है, मानी सृष्टि के अन्तिम क्षण पर जा कर दम लेगा।

शाम को मैं एक स्टेशन पर पहुँचा। देहली का टिक ले कर गाढ़ा पर सवार हुआ और सुबह तक के देहली जा उतरा। आने की ठ पर पहुँचा, तो कुत्ते मेरे क्रमों में खीटने लगे। मेरा मुँह नौकर मुँह खाले, भयंकर लटकाये मुझे धरने लगा। बोला—‘आप घरवाय हुये हैं आप हाँप क्यों रहे हैं ? आप आप मैं अमा पौर जुम्मा से कोई गण्ड-लाबीज़ जाता हूँ। मैं क्या नहीं कहता था कि आप पर भूत प्रेत का साथ पड़ गया है ?’

मैंने जोर से ठहाका लगाया और हँसता हुआ ध-जे पर आया, तो अचानक रमान शार्शा का परला और इनकम-टंस अफसर साइव का एक लहकीं मरे कमरे की ओर इस प्रकार देखता हुई खिचाई पदा मानी उसने यहाँ से कोई विचित्र आवाज़ सुन ली है। मेरे उहाके दके, तो वह शौख मरकाने लगी और

जब मैंने ताज़ी हवा के बहाने से खिड़की खोल दी, क्योंकि अब मुझे लड़कियों से वह पहिला सकोच नहीं रहा—तो वह झट दीवार के पीछे छिप गई, लेकिन दीवार में असल्य छेद थे ? जिनमें से मैंने देखा कि वह मेरी ओर देख रहा है ! मेरे हृदय में जुगनू-से चमकने लगे—जीवन परिवर्तना का नाम है, और सूखी वज्रों की ओट में घैठी हुई छोकरी से ईंटों की इस दीवार के पीछे दबकी हुई खड़की कितनी प्यारी लगती है ! मैंने एक कागज़ के पुर्ज़े पर 'मिज़ाज शरीर' लिखा और एक ककड़ पर लपेट कर परलौ छत पर फेंक दिया । मैंने खिड़की बन्द कर दी । क्योंकि अब नौकर कुत्ते बाँध कर मेरे जूते उतारने आ रहा था । वह मेरे पास आ कर घैठा ही था कि अचानक 'खट' से एक रंगीन शीशा किरची किरची हो कर फ़र्श पर बिखर गया और एक कागज़ में लिपटा ककड़ मेरे सामने आ गिरा ।

"कौन घेबलू का बच्चा है ?" मेरा नौकर चिधाड़ता हुआ खिड़की की ओर लपका । "कौन है अपनी माँ का लाड़ला ?" और फिर अचानक पाँव पकड़ कर फ़रा पर बैठ गया था । बिलबिलाता और परधर फेंकने वाले को हज़ारों बातें सुनाता वह सीढ़ियों पर स उतर गया । मैंने ककड़ पर से कागज़ उतारा । ज़नानी लिखावट में लिखा था—

"मिज़ाज पूरु के रग रग में दिजलियाँ भर दीं ।  
वह आये थे मेरे दिल की लगी बुझाने को ।"

'शिक्षित मालूम होती है ।' मैंने खटप्रनी खोलते हुये सोचा । हाथ के इशारे से उसे शेर की रसीद पहुँचाई, तो वह खड़ी हो गई । बड़ी दूर तक मुझे देखती रही, मानो कह रही हो—'मेरी सब बहिनों की शादी हो चुकी है और मैं ही यहाँ रह गई हूँ । मेरा यहाँ अकेले जी नहीं लगता । मुझे एक शरीर का ज़रूरत थी और मैं चकित था कि तुम इतने दिनों से इन रंगान शीशों में मैं नहीं भौंकते । मैं तुम्हारी राह देख रही थी । अच्छा है कि तुम आ गये । शुभ है - शुभ है ।' और फिर उसका आँसों में आँसू चमकते सने दीन बर आँचल से अपना चेहरा छिपाती परे चली गई । दीवार के छेद से मैंने उसका ऊँचा पदा की गुरगापी देखी और मैं समझा, जैस कि मैंने उकी-उकी-उकी पदा मरा पसलियाँ को मेटलाता मेर बलेजे में घँसो जा रहा है ।

यह कहने का ज़रूरत नहीं कि ककड़ फेंकने का मिश्रण तक जारी रहा और अगले इतवार को एक धुँधला आँसू-सू-लेवेन्डर की मगना



एक बेजब पर वह एक नवयुवक की जॉधों पर सिर रखे लोटी दिखाई पदी। वह कह रही थी—“कौन कहता है कि अपने मँगोतर से शादी स पहिले मिलना असम्भ्यता है ? लेकिन तुम अपने मित्रों में यह बातें न करना कि परसों मँगनी हुई और कल से मिलना-जुलना शुरू हो गया। कहोगे कि मैं कोई और छोकरी हूँ।”

“पगली !” हँसते हुए नवयुवक ने उत्तर दिया।

श्रीर अचानक कुछ विचार खजुरा के साथे सुरसुराते हुए, लहराते हुए वालों, नारंगी होंठों और नम जॉधा वाला एक युवती को साथ लिये हुए कड़ा से आये और मेरे मस्तिष्क के इद गिद अत्यन्त तीव्र गति से नृत्य करने लगे।

लक्ष्मवज्ञाता हुआ मैं वहीं मे दहली क स्टेशन पर पहुँचा और तदके ही उसी नन्हे स्टेशन पर जा उतरा और फिर समन का रूप लिया।

तेज धूप के कारण टीले तप रह थे और चारों ओर एक भाप सी उठ रही थी। जलती हुई रेत मेरे जूतों में भर गई, लेकिन मैं हैरान व परेशान चलता गया—चलता गया—और जब सूर्य पश्चिमी ढाला की ओट में अस्त हो गया, तो अचानक पूर्व की ओर से एक अंधी उठा और क्षण भर में चारों ओर छा गई। मेरा अँखा में रेत भर गई। मेरे कपड़े फड़फड़ाने लगे, मेरे कदम उखड़ उखड़ गये। बरूज सनसनाने लगे और कोई अज्ञात हाथ लपक कर मेरे गले को इस जोर से दवाने लगा कि मेरा दम घुटन लगा। मैं निर्जिव हो कर एक जगह गिर गया और अचानक तीव्र झोंकों का भयभात चीतकारों में मुझे एक गान्त सुनाई दिया—

“श्रीधियो ! और जोर से चलो और सृष्टि को जड़ों से उखाड़ कर वायु में छुड़का दो।

“तूफाना ! चिट्ठाते हुये आघो और खजुरों के मुण्ड अपने कन्धों पर रख कर क्षितिज में जा मिलो।

“घटाघो ! ओले गिराओ और समन व सोसन का घरागाहें धुनक कर रख दो।

“क्योंकि हे श्रीधियो, तूफानो और घटाघो, इस ससार ने प्रेम को एक अणिक खेज समझ लिया है।”

मैंने स्वर पहिचान लिया। “सुम्बुल ! सुम्बुल !” पुकारता हुआ मैं गरजते हुए तूफान में इधर उधर दौड़ने लगा।

घौर फिर सामने एक ऊँट का साया उभरा । जपक कर मैं उसके निरुद्ध  
बहुँचा और धारा—“सुमुञ्ज, सुमुञ्ज !”

“आइये राजनरर थका खी साइप, कहिये, त्रैरियत तो है ?”

“मैं तुम से मिलने आया हूँ ।” मैंने उससे लिपटने हुए कहा ।

वह निष्पाण प्रतिमा के समान खड़ा रहा और फिर बोला—“शौक से !  
मुझे बड़ी खुशी हुई !”

‘तुम कहाँ से आ रहे हो ?’

“समन से ।”

‘मुझे नरगिस से भी मिलना है ।’ मैंने कहा ।

‘मिलिय !’ वह ऊँट का नकेल को अपना श्रैंगुली के चारों घोर जपेटते  
हुए बोला—“लेकिन देखिये यह श्वरत होगी । सूर्य अस्त होने से सूर्य उदय  
होने तक वह लगभग दस बीजवानों से भेग कर खेतों है । हमने उसे एक  
खिलौना समझ कर फेंका और वह सारी दुनिया के खिये खिलौना बन गई ।  
सुमुञ्ज और राजनरर आज-कल उसके स्वप्ना के भूत हैं ! जाइये, खुदा  
दात्रिज !”

और उसने नकेल खींचा और अणु सर में बढ़ते हुए अथकार में छाया  
बन गया । चारों थार भूत से नाचने लगे और जब मैं अपने तपते दिमाग  
को दोनों हाथा से दबा कर बिभाड़ते हुए अथकार में एक थोर मुँह उठा कर  
चल दिया, तो मुझे ऐसा प्रतीत हुआ, जैसे मेरे हृदय में धमकते हुए तुगनुधों  
को अचानक किसीने मुझा में दबा कर मसज डाला हो !

—श्री अहमद नदीम कासिमी

# वॉभ

मेरी और उसकी भेंट आज से ठीक दो वर्ष पहिले अपोलो मन्दर पर हुई थी। सध्या का समय था, सूर्य की अन्तिम किरणें समुद्र का उन दूर बहती हुई लहरों के पीछे गायब हो चुका थीं। तट के बेल्ल पर बैठ कर देखने से वे मोटे कपड़े की तहें जान पड़ती थीं। मैं 'गेट आऊ इन्डिया' के इस तरफ पहिली बेल्ल छोड़ कर, जिस पर एक आदमी चम्पी वाले मे अपने सिर की मालिश करा रहा था, दूसरे बेंच पर बैठा था और दृष्टि सामा तक फैले हुये समुद्र को देख रहा था। दूर—बहुत दूर, जहाँ समुद्र और आकाश मिल रहे थे, बड़ी बड़ी लहरें धीरे धीरे उठ रही थीं और ऐसा लगना था कि एक बहुत बड़ा गँदले रंग का कालीन है, जिसे उधर से इधर को लपेटा जा रहा है।

तट के सभी विद्युत दीप प्रकाशित थे। उनका अक्स किनारे के प्रवाहित जल राशि पर कँपकँपाती हुई मोटी मोटी लकीरों के रूप में जगह जगह रँग रहा था। मेरे पास पथरीली दाबाज के नीचे कई नौकाओं के लिपटे हुये पाज और बॉल धीरे धीरे हिल रहे थे। वायु मयदल में समुद्र की तरंगों और दशकों की आवाज़ एक गुञ्जन बन कर सुल गई थी। कभी-कभी किसी आने जाने वाली मोटर के भोंपू की आवाज़ उठता और ऐसा जान पड़ता, मानो बड़ी मनोरञ्जक कहानी सुनने के बीच किसी ने ज़ोर से हँस की है।

ऐसे वातावरण में सिगरेट पीने में बड़ा आनन्द आता है। मैंने जेब में हाथ डाल कर सिगरेट की ढिबिया निकाली, मगर माचिस न मिली। न जाने कहाँ भूल आया था। सिगरेट की ढिबिया वापस रखने ही वाला था कि पास से किसीने कहा—“माचिस लानियेगा ?”

मैंने मुड़ कर देखा, बेंच के पीछे एक नवयुवक खड़ा था। यों तो सम्बद्ध के साधारण निवासियों का रंग ही पीला होता है, लेकिन उसका चेहरा भयानक रूप से पीला था। मैंने उसको धन्यवाद दिया—“आप की बड़ी कृपा है।”

यह सुन कर उसने माचिस की ढिबिया, जो उसके हाथ ही में थी, मेरी तरफ बढ़ा दी। मैंने फिर धन्यवाद दिया और कहा—“धैंठिये।”

उसने जवाब दिया—“आप सिगरेट सुलगा लीजिये, मुझे जाना है।”

मुझे ऐसा महसूस हुआ कि उसने झूठ कहा है, क्योंकि उसके लहने से हम जान का पता चलता था कि उसे कोई जल्दी नहीं है और न उसे कहीं जाना है। आप कहेंगे कि लहज से ऐसा बातों का पता कैसे चल सकता है, लेकिन सब यह है कि मुझ उस समय ऐसा ही अनुभव हुआ। अतएव मैं एक बार फिर कहा— 'ऐसी जल्दी क्या है, बैठिये।' और यह कह कर मैंने मिगरेट का डिबिया उसके तरफ बढ़ा दो और कहा— "सिगरेट पीजिये।"

उसने सिगरेट के छापे की तरफ देखा और जवाब दिया— 'धन्यवाद, लेकिन मैं अपना ग्रैन्ड पिया करता हूँ।'

आप मानें या न मान, मगर मैं इसमें खा कर कहता हूँ कि इस बार उसने फिर झूठ कहा। इस बार फिर उसके लहजे ने खुशी खाई थी। मुझे उससे दिलचस्पी पैदा हो गई। इसलिये मैंने अपने मन में निश्चय कर लिया था कि उस चरित्र बैठाऊँगा और उसे अपना सिगरेट पिलाऊँगा। मेरे रयानल क मुताबिक इसमें कोई कठिनाई ही न था, क्योंकि उसके दाँवों का न मुझे बता दिया था कि वह अपने आपको धोखा दे रहा है। उसका जा चाहता है कि मेरे पास बैठे और सिगरेट पिये लेकिन एक ही समय में उसके मन में यह भा विचार पैदा होता है कि वह मेरे पास न बैठे और मेरा सिगरेट न पिये। अतएव हाँ और ना' का यह टक्कर उसके जहने में स्पष्ट रूप से मुझ दिखाई पड़ रहा था। आप विश्वास कीजिए कि उसका शक्तियोग्य भा होना और न जाने के बीच में लड़का हुआ था।

उसका चहरा, जैसा कि मैं कह चुका हूँ, अत्यन्त फीला था। इस पर उसका नाक, आँखा और मुँह के चिह्न इतने अस्पष्ट थे कि जान पड़ता था, माना किसी न चित्र बनाया है और उसका पाना स धो डाला है। कभी कभी मेरा और देखते देखते उसके आँठ डमर से आते लेकिन फिर रास्ते में लिपटा हुई चिनगारी का भौंति सो जाते। उसके चहर के दमर चिह्नों का भी यही हाल था। आगे गँदले पानी की दो बड़ी-बड़ी बूँदें थी, जिसपर उनकी डिब्बरी पलकें झुका थीं। बाल काले थे, मगर उनकी स्थाहा जले हुए कागज का भौंति थी, जिसमें भूसखापन भी होता है। ब्राव से देखने से उसका नाक का सही नज़राला मालूम हो सकता था लेकिन दूर से देखने पर वह बिलकुल चिपटा सी मालूम होता था। क्योंकि जैसा मैं इससे पहिले कह चुका हूँ उसके चहर के चिह्न बहुत अस्पष्ट थे।

उसका ब्रह्मसाधारण जोगी जैसा था। यानी न छोटा, न बड़ा। अत्यन्त अल्प वयस्क प्रसन्न दग ल, यानी अपना कमर की डूँडा का दाबा छोड़ कर, खड़ा

होता, तो इसके ज़र में काफ़ी क्रूर पैदा हो जाता। इस तरह जब वह एकदम उठ खड़ा होता तो, क्रूर शरीर की अपेक्षा बहुत बड़ा दिखाई देता था।

उसके कपड़े खस्ता हालत में थे, लेकिन मैले नहीं थे। कोट की आस्तीनों के किनारे किन्ना पुराना बर्तन स ज़्यादा घिस गये थे और कमीज़ घस एक और धुलाई में खत्म था। मगर इन कपड़ों में भी वह स्वयं की एक सम्मानित ढंग से पेश करने का कोशिश कर रहा था। मैंने जब उसका तरफ़ देखा गा, तो उसके समस्त अस्तित्व में उचैना की लहर सी दौड़ गई थी। और मुझे ऐसा मालूम हुआ था कि वह अपने आरओमेरी निगाहों स थोकरू रखना चाहता है।

मैं उठ खड़ा हुआ और सिगरेट मुलगा कर फिर उसकी तरफ़ टिबिया य,। दो, और कहा—‘पाजिये!’

यह मैंने कुछ इस ढंग से कहा और तुरन्त ही माचिस मुलगा कर उसको इस ढंग स पेश किया कि वह मस कुछ भूल गया और उसे मुलगा कर पीना शुरू कर दिया। लेकिन एकाएक उस अपना भूत का अनुभव हुआ, और उसने मुँह में स सिगरेट निकाल कर बनावगे खौसी क लक्षण अपने गले में पैदा करते हुये कहा—‘केवेयडर मेर लिये उपयुक्त नहीं। उसका तम्बाकू बहुत तेज़ होती है, मेरे गले में प्रौरन बरारों पैदा हो जाता है।’

मैंने उससे पूछा—‘आप कौन सी सिगरेट पसंद करते हैं?’

उसने हकला कर जवाब दिया—‘मैं मैं मैं दरअसल सिगरेट कम पीता हूँ, क्योंकि डाक्टर अरोलकर ने मना कर रक्ता है। वैसे ‘थी फ्राइव’ ही पीता हूँ। उसका तम्बाकू बहुत तेज़ नहीं होती।’

उसने जिस डाक्टर का नाम लिया वह यम्हई का बहुत बड़ा डाक्टर है। उसकी फ़ीस दम रुपये है। और जिस सिगरेट का उसने नाम लिया, उसके विषय में आप को भी मालूम होगा कि वह बड़े महँगे दामों में आता है। उसने एक ही सॉस में दो मूठ बोले, जो मुझे हज़म न हुये, मगर मैं चुप रहा। यद्यपि मैं आप स सच कहता हूँ कि उस समय मेरे मन में यहा इच्छा खुशियों ले रही थी कि उसका गिलाफ़ उतार दूँ और उसके मूठ का भयदा फोड़ दूँ। और उसे इस तरह जखित करूँ कि वह मुझ स चमा मॉगे। मगर उस का ओर जब मैंने देखा, तो मुझे ऐसा अनुभव हुआ कि उसन जो कुछ कहा है उसका अरस बन कर रह गया है। मूठ थोड़ कर चेहरे पर जो एक सुर्खा सी दौड़ जाया करती है, वह मुझे न दिखाई पडी। बल्कि मैंने यह देखा कि वह जो कुछ कह चुका है उसको यथार्थ समझता भा



मुझे पता महसूस हुआ कि उसने मृत कहा है, क्योंकि उसके लहने से इस बात का पता चलता था कि उमे कोई जल्दी नहीं है और न उस कहीं जाना है। आप कहेंगे कि लहने से पता बार्ती का पता कैसे चज सकता है लेकिन सच यह है कि मुझे उस समय ऐसा ही अनुभव हुआ। अतएव मैंने एक बार फिर कहा—'येमा जल्दी क्या है, घिटिये।' और यह कह कर मैंने सिगरेट का डिबिया उसके तरफ बढ़ा दी और कहा—'सिगरेट पीजिये।'

उसने सिगरेट के छापे की तरफ देखा और जवाब दिया—'धन्यवाद, लेकिन मैं अपना ब्रैन्ड पिया करता हूँ।'

आप मानें या न मानें, मगर मैं इसमें ग्रा कर कहता हूँ कि इस बार उसने फिर मृत कहा। इस बार फिर उसके लहने न चुगली खाई और मुझे उससे मिल-जुलना पैदा हो गई। इसलिये मैंने अपने मन में निश्चय कर लिया था कि उमे चकर घेगाऊँगा और उस अपना सिगरेट पिलाऊँगा। मेरे स्वाज के मुताबिक इसमें कोई कठिनाई ही न थी, क्योंकि उसके हा वाश्यों हा न मुझे धता दिया था कि यह अपने आपको धोखा द रहा है। उसका जा चाहता ह कि मेरे पास बैठे और सिगरेट पिये, लेकिन एक ही समय में उसके मन में यह भा विचार पैदा होता है कि यह मेरे पास न बैठे और मेरा सिगरेट न पिये। अतएव हँ' और ना' वा यह टक्कर उसके लहने में स्पष्ट रूप से मुझे दिखाई पड़ रहा था। आप विश्वास काजिये कि उसका अस्तित्व भा होन और न हाने के बाध में लटका हुआ था।

उसका चेहरा, जैसा कि मैं कह चुका हूँ अत्यन्त पल्ला था। इस पर उसके नाक, आँखा और मुँह के चिह्न इतने अस्पष्ट थे कि जान पड़ता था, मानो किसी न चित्र बनाया ह और उसके पागा से धो डाला है। कभी-कभी मेरा और देखते देखते उसके आँठ डभर स आत, लेकिन फिर राज में लिपटा हुई चित्तगारी का भाँति मो जात। उसके धरे क दूसरे चिहनों का भा नहीं हास था। आग गँदले पागा की दा बड़ी-बड़ा बूँदें थी, जिसपर उनकी लिदरनी पलकें झुकी थी। बाज काज थे, मगर उनकी स्वाहा गले हुये काज का भाँति थी, जिसमें भूसजापन भी होता है। ज़रीब स देखने स उसके नाक का सदा नज़ारा मालूम हो सकता था, लेकिन दूर से देखने पर वह बिलकुल लिपटा सी मालूम होता था। क्योंकि जैसा मैं इसस पहिले कह चुका हूँ उसके चेहर के चिह्न बहुत अस्पष्ट थे।

उसका जूट साधारण लोभो जैसा था। यानी न छोटा, न बड़ा। अलबत्ता जब वह एक ज़ास दग रो, यानी अपनी कमर का हड्डा को दीक्षा छोड़ कर, सदा

वह जोश, जो बातें करते समय उसमें पैदा हो गया था, एक दम ठंडा पड़ गया, और उसने धीरे स्वर में कहा—‘आपका कहना बिल्कुल ठीक है, मगर क्या पता है कि आपने फिर क्या भेंट हो?’

इस पर मैंने कहा—‘इसमें सन्देह नहीं, बम्बई बहुत बड़ा शहर है, लेकिन हमारी एक नहीं, बहुत सी भेंटें हो सकती हैं। मैं एक बेकार आदमी हूँ, यानी कहानी लेखक। शाम को निरव्य इन्हीं समय, प्रशंस कि मैं रिमांर न हो जाऊँ, आप मुझे सदा इसी जगह पर पायेंगे। यहाँ असह्य लक्ष्मिणी घूमने आती हैं और मैं इमलिये आता हूँ कि अपने आप को किसी के प्रेम जाल में पँसा सकूँ। प्रेम कोई बुरी चीज़ नहीं है।’

‘‘प्रेम प्रेम !’’ उसने इसके आगे कुछ कहना चाहा, मगर न कह सका और जलती हुई रस्सा की तरह आगिरी चल खा कर चुप हो गया।

मैंने हवा में बस प्रेम की चर्चा की थी। वास्तव में उस समय वायु मण्डल इतना मनोहर था कि अगर मैं किसी युवती पर आसक्त हो जाता, तो मुझे अक्रमोस न होता। जब दाना वक्त आपस में मिल रहे हों, धुँवले अधकार में बिजली के लट्टुओं की पत्तियाँ आँखें झपकाना शुरू कर दे, हवा में नमी पैदा हो जाय और वातावरण का समय हो जाय, तो किसी अजनबी स्त्री के पास होने की ज़रूरत महसूस हुआ करता ही है।

घुंदा जाने, उसने किस कहानी के विषय मुझसे पूछा था। मुझे अपनी सब कहानियाँ याद नहीं और झ्रास तौर से वे तो बिल्कुल याद नहीं, जो रोमांचक हैं। मैं अपने जीवन में बहुत कम स्त्रियों से मिला हूँ। वे कहानियाँ, जो मैंने स्त्रियों के विषय में लिखी हैं, या तो किसी आवश्यकतावश लिखी गई हैं, या सिर्फ़ दिमागी पेयाशी के लिये। चूँकि मेरी ऐसी कहानियों में वास्तविकता नहीं है इसलिये मैंने कभी उनके बारे में गौर नहीं किया। एक विशय वग की स्त्रियों मेरा नज़र से गुज़री हैं आर उनके सम्बन्ध में मैंने चन्द कहानियाँ लिखी हैं, मगर वे रोमांचक नहीं हैं। उसने कहानी का जिक्र किया था, वह अशरय हा कोई घटिया दाज़े का कहानी थी, जो मैंने अपनी चन्द भावनाओं की प्यास बुझाने के लिये लिखी होगी, लेकिन मैंने तो अपनी कहानी शुरू कर दी है।

हाँ, सो जब वह ‘प्रेम’ कह कर चुप हो गया, तो मेरे मन में इच्छा उत्पन्न हुई कि प्रेम के विषय में कुछ और कहूँ, अतः मैंने कहना शुरू किया—‘प्रेम की बातें तो बहुत सी हैं, जो हमारे बाप दादा बयान कर गये हैं, हैं, मगर

है। उसके झूठ में इतना सघाई था, यानी उसने इतनी सघाई के साथ झूठ कहा था कि उसके अनुभव का तराजू ज़रा मो भा न दिखा था। और! इस किस्म का छोड़िये। ऐसा धारीकियाँ अगर मैं आप को बनाने लूँ, तो पत्ने के पाने काल पद जायेंगे। और कहानी बहुत नारस रह जायेगा।

धोहा मा हा बान वीत के बाद मैंने उसको राह पर लगा दिया और एक और मिगरट पेश करके मैंने समुद्र के भित्ताकूपक दरय की बात देह दी। वूँकि मैं कहानी लखक हूँ इसलिय मैं इस दिव्यरूप दग से उसे समुद्र, अगोजी बन्दर और वहाँ जाने जाने वाले दशकों के बारे में चन्द बातें सुनाई कि : द मिगरट पाने पर भा उसके गले में धरराहाह पैदा न हुइ। उमन भरा नाम पूछा। जब मैंने बताया, तो वह उठ सदा हुआ और कहने लगा—

“आप आप हैं? आपको कई कहानियों में पद चुदा हूँ। मुझे मालूम न था कि आप हा हैं। मुझे आप से मिल कर बड़ा खुशी हुई है—मचमुच बड़ा खुशी हुई है।”

मैंने उसको धैर्यवाद दना चाहा मगर उसने अपने बात शुरू कर ली—  
‘हाँ रूब बाद आया, ऊभा हाल हा मैं आपकी एक कहानी मैंने पढ़ी है शीर्षक भूल गया हूँ उसमें आपने एक लड़का पश की है जो कितना पुरुष से प्रेम करता था। मगर वह पुरुष उसे धाला दे गया। उसा लड़की से एक और पुरुष प्रेम करता था जो कहाना सुनाता है। जब उसको लड़का का विपत्ति का पता चलता है, तो वह उससे मिलता है और उससे कहता है—  
‘जिन्दा रहा उन चन्द घड़ियों का बाद मैं अपने जीवन का नीव खड़ा करो जो तुमने उसके प्रेम में बिताई है। उस सुख का स्मृति में जियो, जो तुमने चन्द चर्यों के लिये प्राप्त किया था, मुझे घसला शब्दाद नहीं रहे, लेकिन मैं पूछता हूँ, क्या ऐसा सम्भव है? सम्भव को छोड़िये, आप वह तो बनाइये कि वह आदमा क्या आप तो नहीं थे? मारु कीजियेगा—मैं ऐसे स्वावल पूछ रहा हूँ या मुझे नहीं पूछने चाहिये, मगर क्या आप हा ने उसस कोटे पर भेंट का था और उसकी यका हुई जवानी की ऊँघता हुइ खीदनी में सोद कर नाच अपने कमरे में सोने के लिय चत्रे आये थ?’ यह कहते हुए वह एकदम टहर गया। ‘मगर मुझे ऐसा धाले नहीं पूछना चाहिये—अपने मन का हाल कान बताता है।’

इस पर मैंने कहा—‘मैं आपको बताऊँगा लेकिन पहिली भेंट में सब कुछ पूछ लेना और सब कुछ बता देना अच्छा नहीं लगता। आप का क्या क्या है?’

मुझे अपनी बात बड़ी अच्छी लग रही थी और मैं चाहता था कि कोई मेरी बातें सुनता चला जाय। अतएव मैंने फिर से कहना शुरू किया—“तो मैं यह कह रहा था कि कुछ आदमी भी प्रेम के मामले में बॉम्ब होते हैं, यानी उनके मन में प्रेम करने की इच्छा तो मौजूद होती है, लेकिन उनकी यह इच्छा कभी पूरा नहीं होती। मैं समझता हूँ कि इस बॉम्बपन का कारण मानसिक दोष है। आपका क्या विचार है ?”

उसका रंग और भी पीला पड़ गया, जैसे उसने प्रेत देखा हो। यह परिवर्तन उसके अन्दर इतनी जल्दा हुआ कि मैंने धबरा कर उससे पूछा—“कुछलता है, आप बामार है ?”

“नहीं तो, नहीं तो” उसकी परेशानी और भी अधिक हो गई।

“मुझे कोई बीमारी बीमारी नहीं है, लेकिन आपने यह कैसे समझ लिया कि मैं बामार हूँ।”

मैंने जवाब दिया—“इस वक्त आपको जो कोई भा देवेगा, यही कहेगा कि आप बहुत बीमार हैं। आपका रङ्ग भयानक रूप से पाला पड़ रहा है। मेरा विचार है कि आपको घर चला जाना चाहिये। चाहिये, मैं आपको छोड़ आऊँ।”

“नहीं मैं अपने आप चला जाऊँगा, मगर मैं बीमार नहीं हूँ। कभी कभी मेरे हृदय में मामूली सा दर्द पैदा हो जाता है, शायद यह वही हो मैं अभी ठीक हो जाऊँगा। आप अपनी बात जारी रखिये।”

मैं थोड़ी देर चुप रहा। वह इस परिस्थिति में नहीं था कि मेरी बात पानपूर्वक सुन सकता। लेकिन जब उसने थामह किया, तो मैंने कहना शुरू किया—“मैं आप से पूछ रहा था कि उन लोगों के विषय में आपका क्या विचार है, जो प्रेम करने के मामले में बॉम्ब होते हैं। मैं पेने आदमियों के भाव और उनकी आंतरिक मन स्थिति का अनुमान नहीं कर सकता। मगर जब उस बॉम्ब खों की कल्पना करता हूँ जो केवल एक वेग या वे। के जिये कामना करती है, भगवान् के सामने गढ़गिदाती है, जब उसे वहाँ से कुछ नहीं मिलता, तो टोने टुका में वह अपना मनोरथ डूँडती है, रमशानों से राख छाती है, कई कई रातें जाग कर साधुओं के बतये हुये मन्त्र जपती है, मनौतियाँ मागता है, चढ़ावे चढ़ाती है तो मैं सोचता हूँ कि उस मनुष्य की भी यही दशा होती होगी, जो प्रेम के मामले में बॉम्ब हो, ऐसे लोग सचमुच सहानुभूति के

में समझता हूँ कि प्रेम चाहे गुलजाग में पैदा हो या सायबेरिया के बर्फीले मैदान में, जादों में पैदा हो या गर्मियों में, अमार क जिल में पैदा हो या गभाव क दिवा में, प्रेम रूपान्तर करे या कुरूप बदचजन करे या नेकवलन, प्रेम प्रेम हो रहता है, इसमें कोई अंतर नहीं पड़ता। जिस तरह वरुण पैदा होने का हातत सदा से एक जैसा थली आ रहा है, इसा तरह प्रेम का ज म भा पूरु हा तरह हाता है। यह दूसरा बात है कि सदैदा वगम अरुताज में यथा जने और राजकुमारी जगज में। गुलाम मुइम्मद क हृदय में भंगिन प्रेम उरुवण कर द और जगाक हुमार क हृदय में एक रागी। जिस तरह कोई बघे समय से पहिले पैदा होते हैं और कमजोर रहा हैं उसा तरह यह प्रेम भा दुदल रहता है, जो समय से पहिले जन्म ले। कभी कभा वरुण यथा तकलीक से पैदा होते हैं कभी कभा प्रेम भी यदा कष्ट दे कर पैदा हाता है। जिस तरह जियों का गम गिर जाता है, उसी तरह प्रेम भा गिर जाता है। कभी-कभा बर्कपन भी हो जाता है। इधर भा आपसो बड़े पेमे आत्मा दिखार्ड देंगे, जो प्रेम करने के मामले में बर्क हैं, इसका यह मतलब नहीं कि प्रेम करने की इच्छा ही उनके हृदय से सदा क लिय मित जाता है या उनके मन में वह भाव हो नहीं रहता। नहीं, यह इच्छा उगक मन में मौजूद होना है, मगर वह इस योग्य ही नहीं रहते कि प्रेम कर सकें। जिस तरह खा अपने शारीरिक दोष के कारण मच्छ पैदा करने क योग्य नहीं रहती, उसी प्रकार ये लोग चन्द मानसिक दोषों क कारण किसी के हृदय में प्रेम पैदा करने की शक्ति नहीं रखते। प्रेम का गम पात भा हो सकता है।”

मुझे आपनी बातचीत दिलचस्प मालूम हो रही थी अतः मैं उसका धोर बिना देते खेबचर दिये चला आ रहा था। मगर जब मैं उसकी ओर देखा, तो मुझे जान पड़ा कि वह दूर सागर के उम पार चित्तित को देख रहा है और अपने विचारा में खोया हुआ है। मैं खुप हो गया, लेकिन मेरे मौन ने उसको मेरी ओर आकर्षित न किया।

जब ज़ोर स किमी मोटर का हान बना, तो मैं चौका और भावहीन हो कर फहन लगा— “तु आपने विलकुल ठीक कहा है।

मर मन में थाया कि मैं बसत पूछूँ— मन क्या ठाक कहा है ?—इसको छोड़िये, आप यह बताइये कि मैंने कहा क्या है ?” लेकिन मैं खुप रहा और उसको अवसर दिया कि वह अपने वाञ्छित विचार दिमाग से भटक दे।

वह कुछ देर सोचता रहा, इसके बाद उसने फिर कहा—“आपने विलकुल ठीक कहा है, लेकिन, प्रिय, छोड़िये इस ज़िस्ते को।”

दिखाई दिया। मुझे उसका नाम मालूम नहीं था, इसलिये मैं उसे पुकार न सका। लेकिन जब उसने मुझे देख लिया, तो उसकी निगाहें स्थिर हो गईं, मानो उसे यह चीज़ मिल गई है, जिसको वह ढूँढ रहा था।

कोई बेंच फ़ालो नहीं थी, इसलिये मैंने उससे कहा—“आप से बहुत दिनों के बाद भेंट हुई। चलिए, सामने रेस्तराँ में बैठें। यहाँ कोई बेंच खाला नहीं है।”

उसने शिष्टाचार की दो घार बातें कीं और मेरे साथ हो लिया। चन्द गज़ चलने के बाद हम दोनों रेस्तराँ की घेत की बड़ी बड़ी कुर्सियों पर बैठ गये। चाय का आर्डर दे कर मैंने उसकी घोर सिगरेट का टिन बड़ा दिया। सयोग की बात है कि मैंने उसी दिन दस रुपये दे कर डाक्टर अरोलकर से मशविना लिया था और उसने मुझसे कहा था कि अबल ता तुम सिगरेट पीना ही छोड़ दो और अगर तुम ऐसा नहीं कर सकते, तो थरुड़े सिगरेट पिया करो। उदाहरणार्थ पाँच सौ पचपन, अतएव मैंने डाक्टर के कहने के अनुसार यह टिन उसी दिन शाम को खरादा था। उसने डिब्ब की घोर ध्यान से देखा, फिर मेरी घोर दृष्टि उठाई। कुछ कहना चाहा, मगर चुप रहा।

मैं हँस पड़ा—“आप यह न समझियेगा कि मैंने आप के कहने पर यह सिगरेट पाना शुरू किया है। सयोग की बात है कि आज मुझे भी डाक्टर अरोलकर के पास जाना पडा। कुछ दिनों से मेरे सीने में दर्द हो रहा है, अत उसने कहा कि यह सिगरेट पिया करो, लेकिन बहुत कम”

मैंने यह कहते हुये उसकी घोर देखा और प्रयास किया कि उसको मेरी ये बातें अप्रिय लगा हँ। अत मैंने तुरन्त अपनी जेब से घह नुस्त्रा निकाला, जो डाक्टर अरोलकर ने मुझे लिख कर किया था। यह कागज़ मैंने उसके सामने मेज़ पर रख दिया—“यह इवारत मुझसे पड़ी तो नहीं जाती, मगर ऐसा मालूम होता है कि डाक्टर साहब ने विगामिन का सारा प्रानदान इस कागज़ पर जमा कर दिया है।”

उस कागज़ को, जिस पर उभरे हुए अक्षरों में डाक्टर अरोलकर का नाम और पता छपा था, और तारीख़ भा लिखी हुई थी उसने घोर निगाहों से देखा और वह ध्याकुलता जो उसके चहरे पर पैदा हो गई थी, तुरन्त दूर हो गई। अतएव उसने मुझसे कर कहा—“क्या कारण है कि अक्सर तिरखने वालों के अन्दर विटामिन प्रत्म हो जाते हैं ?”

पात्र है। मुझे धर्मों पर इतनी दया नहीं आती, जितनी हम लोगों पर आती है।"

उसकी बातों में धीरे धीरे वह धूक निगल कर सहमा उठ रहा हुआ और दूसरा तरफ मुँह करके कहने लगा— "जोह बहुत देर हो गई। मुझे जल्दी काम स जाना था। यहाँ बातों में कितना समय क" गया।"

मैं भी उठ बढ़ा हुआ। वह पलंग धीरे जहरा से मेरा हाथ दबा कर, लेकिन बिना मेरी धीर देने, उसने 'भरटा विदा' कहा और च" दिया।

X

X

X

दूसरा बार फिर हमारी भेंट अपोलो चन्द्र हा पर हुई। मैं मुम्बे का था, नहीं हूँ। मगर उन दिनों नित्य राधा समय अपोलो चन्द्र पर जाना मेरा नित्य काम हो गया था। एक महीने का जब मुम्बे आगरे क एक कवि ने एक लम्बा चौड़ा पत्र लिखा जिसमें उसने यह ललचाये लग स अपोलो चन्द्र धीरे यहाँ जमा होने वाला परियों का जिक्र किया और मुम्बे हम रहि से बहुत मायवान् कहा कि मैं बम्बई में हूँ, ता अपोलो चन्द्र मे मेरी दिलचस्पी सदा के लिये भर गई। जब जब कभी कोई मुम्बे अपोलो चन्द्र जाने का कहता है, तो मुम्बे आगरे के कवि का पत्र याद आ जाता है और मेरा जी गतमाने लगता है। लेकिन मैं उस समय की याद कह रहा हूँ जब यह पत्र मुम्बे न मिला था। और मैं नित्य शाम को अपोलो चन्द्र जा कर उस बेंच पर बैग करता था, जिसके दूसरा ओर कई आदमी अपनी वाला से अपना खोपडिया की मरामत कराते रहत थे।

दिन पूरी तरह टल चुका था और उजियाले का कोह चिह्न भी बाज़ी न रहा था। लेकिन अबदूबर का गर्मी में कमी न हुई थी। हवा चल रही थी लेकिन थके हुये मुसाफिर की तरह। सैर करने वालों का भीड़ अधिक था। मेरे पीछे मोटरें हा मोटरें खड़ी थीं। बेंच भा सब के-सब भरे थे। मैं जहाँ बैग था, यहाँ हो बकवाद— एक गुजराती और एक पारसा न खाने कथ के जम हुये थे। वे दोनों गुजराती बोलते थे, मगर विभिन्न डग स। पारसा का आवाज़ मैं दो स्वर थे। कभी वह वारीक स्वर में बात करता था और कभी म टे स्वर में। जब दोनों तेज़ा से बोलना शुरू कर दते तो ऐसा लगता, मानो तोला मैना की लड़ाई हो रही है।

मैं उनकी कभी समाप्त न होने वाली बातों से तग आ कर उठा और टहलने के लिये तागमहल हाटल की द" किया हा था कि सामने से मुम्बे यह आता

“सहानुभूति !” उसका आँखों में आँसू भर आये—“मुझे कितना बड़ा सहानुभूति की आवश्यकता नहीं—इसलिये कि सदा-सहानुभूति उसे वापस नहीं ला सकता—उस स्त्री को मौत की गहराइयों से निकाल कर मेरे इधारे नहीं कर सकती, जिसने मुझे प्रेम था ! आपने प्रेम नहीं किया—मुझे विश्वास है कि आपने प्रेम नहीं किया । इसलिये कि उसकी असफलता ने आपके हृदय पर कोई दाग नहीं छोड़ा मेरी तरफ देखिये ।”

यह कह कर उसने खुद अपने आपको देखा—“काह जगह ऐसा न मिलेगी जहाँ मेरे प्रेम के विद्व मीनू न हों । मेरा अस्तित्व स्वयं उस प्रेम को दूटा हुई इमारत का मलबा है । मैं आपको यह दारतान कैसे सुनाऊँ ? और फिर क्यों सुनाऊँ ? क्योंकि आप उसको समझ ही नहीं सकेंगे । किसीसे यह कह देना कि मेरी माँ मर गई है आपको दिल पर वह असर पैदा नहीं कर सकता, जो माँ की मृत्यु ने घटे पर किया है । मेरा प्रेम कहानी आपका—किसीको भा भिलकुल साधारण मालूम होगी, मगर मुझ पर जो प्रभाव उसने डाला है, उसे कोई भी अनुभव नहीं कर सकता । इसलिये कि प्रेम मैंने किया है और मय कुछ सिर्फ मुझ पर जाता है ।”

यह कह कर वह चुप हो गया । उसने गले में कड़ु-पाहट पैदा हो गई थी, क्योंकि वह बार बार थूक निगलने का चेष्टा कर रहा था ।

“बधा यह आपका धोखा है गद्दे ?” मने उससे पूछा—“या और कुछ परिस्थिति थी ?”

“धोखा यह धोखा दे ही नहीं सकता था । ईश्वर के लिये धोखा न कहिये । यह खो नहीं, देवी थी । मगर धरा ही इस मृत्यु का, वह हमें प्रसन्न न देख सका और उसे सदा के लिये अपने परों में समेट कर ले गई थाह ! आपने मेरे हृदय के घाव को हरा कर दिया है ! सुनिये सुनिये, मैं आपको इस कथन कहानी का कुछ हिस्सा सुनाता हूँ—

“वह एक बड़े और अमीर घराने की लड़की थी । जिस जमाने में उसकी और मेरी पहिली भेंट हुई मैं अपने बाप-दादा का सारी जायदाद राग रंग में बरबाद कर चुका था । मेरे पास एक कौड़ी भी नहीं था । अपना देग छोड़ कर लखनऊ चला आया । चूँकि मेरे पास अपनी माँटर रहा करता था, इसलिये सिर्फ मोटर चलाने का काम जानता था । अतपुत्र मैंने इसी को अपना पेशा का निश्चय किया । पहिली मौकरी मुझे एक दिष्टी माहय के यहाँ ले । उनकी वह एकलौती लड़की थी ।” यह कहते कहते वह अपने विचारों



कर कर वह थका हो गया और मेरे कमरे में रहने की काशिश करने लगा । क्योंकि इस छोटी सी जगह में जहाँ कुछ कुमियाँ भक्त और चाणवाई पौरों पर कुछ पड़ा था, रहने के लिये कोई जगह नहीं था भक्त के पास उसे रहना पड़ा । मन्वार का अथवा बार गहरी रीति में उगने देना और कना—  
 उसमें और हृदयमं कितना मेला है मगर उसके अहर पर क्या प्रयत्नता नहीं थी । उमदी शक्ति बड़ा भी, मगर इन शक्ति का तरह उनमें शराप नहीं थी । ये शक्ति विनाशप्रिय थी—उसी शक्ति का देना भी है और समझती भी है ।  
 यह कहते हुए उसने एक टपकी शक्ति का और कुमियाँ पर डिट गया और कहा—  
 'मनुष्य विशुद्ध समझ में न आने वाला प्राण है । शासनी पर उस समय जब कि वह जवाना में थाय मैं समझता हूँ कि हर एक अज्ञान एक और शक्ति भा है जो क्या ईश्वरों का, या किना का प्रयत्न नहीं देना यादती मगर दोषिये इस शक्ति को !'

मैंने समझ कहा— 'नहीं नहीं, आप मराने जाइये । लेकिन आप क्या उचित समझें तो । सच पूछिए तो मैं यह समझ रहा था कि आपने कभी प्रेम किया है न होगा ।'

"यह आपने वैसा समझ लिया कि मैंने कभी प्रेम किया ही नहीं है और क्या प्रेम तो आप कह रहे थे कि मैं जावन प्रेम कहूँ प्रनाथा स पूरा होगा ।' यह कहते हुए उसने मेरी और प्रश्न सूचक दृष्टि से देना । 'मैंने अगर प्रेम किया नहीं, तो दुःख मेरे हृदय में कहाँ न उरता हो गया ? मैंने अगर प्रेम नहीं किया, तो मेरे जीवन में यह रोग कहाँ से चिमा गया है ? मैं उदास क्यों रहता हूँ ? मुझे अपने आपका द्वार क्या नहीं है ? मैं दिन ब दिन मास की शक्ति विपन्न क्यों रहा हूँ ?'

मकट में यह सब प्रश्न वह मुझमें कर रहा था, मगर यास्व में वह सब कुछ अपने आप ही से पूछ रहा था ।

मैंने कहा— 'मैं झूठ बोला था कि आपके जीवन में ऐसा कुछ घटनायें होंगी । मगर आप भी तो झूठ बोले थे कि मैं उदास नहीं हूँ और मुझे कोई रोग नहीं है । किना के दिल का हाल जानना आसान बात नहीं है । आरकी उदासा क और बहुत से कारण हो सकते हैं, मगर जब तक मुझे आप खुद न बतायें मैं किना नताने पर कैसे पहुँच सकता हूँ ? हृदयमं कोई सन्देह नहीं कि आप सधमुच दिन-ब-दिन कमजोर होते जा रहे हैं । आरकी अवरय हा क्या दुःख पहुँचा है और और मुझे आपसे सहायुभूति है ।'

“सहानुभूति !” उमका अँखों में आँसू भर आये—“मुझे किसी की सहानुभूति का आवरण नहीं—इसलिये कि सहानुभूति उसे वापस नहीं वासकता—उम स्त्री को मौत की गद्गदियों से निकाल कर मरे इवाले नहीं करसकती, जिससे मुझे प्रेम था ! आपने प्रेम नहीं किया—मुझे विश्वास है कि आपने प्रेम नहीं किया। इसलिये कि उसको असफलता ने आपके हृदय पर कोई दाग नहीं छोड़ा मेरी तरफ देखिये।”

यह कह कर उसने खुद अपने आपको देखा—“कोई जगह ऐसी न मिलेगी जहाँ मेरे प्रेम के विद्युत् मौजूद न हों। मगर अस्तित्व स्वयं उस प्रेम को टूटा हुई इमारत का मलबा है। मैं आपको यह दाम्दान कैसे सुनाऊँ ? और फिर क्या सुनाऊँ ? क्योंकि आप उसको समझ ही नहीं सकेंगे। किसीस यह कह देना कि मेरी माँ मर गई है आपके दिल पर यह अमर पैदा नहीं करसकता, जो माँ का मृत्यु ने घेरे पर किया हो। मेरा प्रेम कहानी आपको—किसीको भी थिलकुन साधारण मालूम होगा, मगर मुझ पर जो प्रभाव उसने डाला है, उसे कोई भी अनुभव नहीं करसकता। इसलिये कि प्रेम मेरी क्रिया है और सब कुछ सिर्फ मुझ पर घाता है।”

यह कह कर वह चुप हो गया। उसके गले में कड़ुवाहट पैदा हो गई थी, क्योंकि वह बार बार थूक निगलने की चेष्टा कर रहा था।

“क्या वह आपको धोखा दे गई ?” मैंने उससे पूछा—“धा और कुछ परिस्थिति थी ?”

“धोगा यह धोखा दे ही नहीं सकती थी। ईश्वर के लिये धोखा न कहिये। वह स्या नहीं, देवी थी। मगर बुरा हो इस मृत्यु का, वह इमें प्रसन्न न देख सकी और उसे सदा के लिये अपने परो में समेट कर ले गई आह ! आपने मेरे हृदय के धाव को हरा कर दिया है ! सुनिये सुनिये, मैं आपको इस कथन कहानी का कुछ हिस्सा सुनाता हूँ—

“वह एक बड़े और अमोर घराने की लड़की थी। जिस जमाने में उसका और मेरी पहिली भेंट हुई मैं अपने धाप-दादा की सारी जायदाद राग रग में बरबाद कर चुका था। मेरे पास एक कौड़ी भी नहीं थी। अपना देग छोड़ कर मैं लखनऊ चला आया। चूँकि मेरे पास अपनी मोटर रहा करती थी, इसलिये मैं सिर्फ मोटर चलाने का काम जानता था। अतएव मैंने इसा को अपना पेशा बनाने का निश्चय किया। पहिली नौकरी मुझे एक डिप्टी साहय के यहाँ मिली। उनकी यह एकलौती लड़की थी ” यह कहते कहते यह अपने विचारों

में खो गया और एकाणक लुप्त हो गया। मैं भी लुप्त रहा।

योकी देर के बाद वह चौंका और कहने लगा—“मैं क्या कह रहा था ?”

“आप टिप्पटा साहब के यहाँ मौजूद हो गये।”

“यह ठीक-ठीक साहब का एक नौता लड़की था। जिनके प्रति सबेरे नौ बने मैं ज़ुहरा को मोटर में स्टूडेंट जा जाया करता था। यह पता करता थी। मगर मोटर ड्राइवर से कोई कथ तक बच सकता है ? मैंने उसे अपने हाँ दिना देखा लिया। वह मियाँ सुन्दर हाँ नहीं था बल्कि उसमें एक विरापता भाँ था। यह गम्भीर प्रकृति का लड़की था। उसका माया मीरा ने उसके चहरे पर एक नाम सज पैदा कर दिया था। यह वह मैं क्या कहूँ वह क्या थी ? मेरे पास शब्द नहीं हैं कि मैं उसके रूप और प्रकृति का वर्णन कर सकूँ।”

बहुत देर तक वह अपना ज़ुहरा के गुणों का बखाना करता रहा। इस बीच मैं उसने कई बार उसका चित्र खींचने का बहुत चयन का, मगर वह असफल रहा। ऐसा जान पड़ता था कि उसके मस्तिष्क में आवश्यकता से अधिक विचार जमा हो गये हैं। कभी कभी जान करने करते उसका चहरे समतमा उठता, लेकिन फिर उदासा छा जाती और आँसुओं में डालें करना शुरू कर देता। यह कहता बहुत धीरे धीरे सुना रहा था, जैसे सुद मीरानन्द ले रहा हो। एक एक टुकड़ा जोड़ कर उसने अपना सारा कहाना पूरी का जिसका सराश यह था—

ज़ुहरा से उसे अत्यधिक प्रेम हो गया। कुछ दिन तो मौजूदा पा कर उसके दर्शन करने थार तरह तरह के मधुमे बंधने में बीत गये मगर जब गम्भीरता एक उसने इस प्रेम पर विचार किया, तो अपने को ज़ुहरा से बहुत दूर पाया। एक मात्र ड्राइवर अपने स्वामी का लड़का से जैसे प्रेम कर सकता था ? अतः जब इस कठु सत्य का अनुभव उसके मन में पैदा हुआ, तो वह दुःखी रहने लगा। लेकिन एक दिन बड़े मादम से काम लिया। कागाज के एक पुर्तों पर उसने ज़ुहरा को चन्द पत्रियाँ लिखीं। यह पत्रियाँ मुझे याद हैं—

“ज़ुहरा ! मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि मैं तुम्हारा नीकर हूँ, तुम्हारे पिता मुझ ताप रूपया मासिक देते हैं मगर मैं तुम से प्रेम करता हूँ। मैं क्या कहूँ, क्या न कहूँ, मेरी समझ में नहीं आता।”

ये पत्रियाँ कागाज पर लिख कर उसने उस कागाज को उसकी एक किताब में रख दिया।

दुमरे दिन जब वह उसे मोटर में ले गया, तो उसके हाथ काँप रहे थे। ईदिल कई बार उसका पकड़ से बाहर हो गया। मगर परमात्मा ने कुशल की

और कोई घटना न हुई। उस दिन उसकी विचित्र हालत रही। शाम को वह जुहरा को स्कूल से वापस जा रहा था, तो रास्ते में उस लड़की ने उसे मोटर रोकने के लिये कहा। उसने जब मोटर रोक ली, तो जुहरा ने बड़ी गम्भीरता के साथ उससे कहा—'देखो, नईम! भविष्य में तुम ऐसी हरकत कभी न करा। मैंने अभी तक श्रद्धा जान से तुम्हारे उस पत्र का जिक्र नहीं किया, जो तुम ने मेरा किताब में रख दिया था। लेकिन अगर तुम ने ऐसी हरकत फिर की, तो मुझे शिकायत करने के लिये विवश हो जाना पड़ेगा। समझे, चलो, थव मोटर चलाओ।'।

इस वातावरण के बाद उसने बहुत कोशिश की कि डिप्टी साहब की नौकरी छोड़ दे और जुहरा के प्रेम को अपने हृदय से हमेशा के लिये मिटा दे। मगर यह सफल न हो सका। एक महीना इस कशमकश में बीत गया। एक दिन फिर उसने हिम्मत से काम लेकर पत्र लिखा और उसको एक पुरतक में रख कर अपने भाग्य के निर्णय का प्रताप करने लगा। उस विश्वास था कि दूसरे दिन सुबह उसे नौकरी से जवाब दे दिया जायगा। मगर ऐसा न हुआ। शाम को स्कूल से जाते हुये जुहरा ने उससे बात की और कहा—'अगर तुम्हें अपनी इज्जत का ग्याल नहीं, तो कम से-कम मेरी इज्जत का तो कुछ खयाल होना चाहिये।' यह उसने एक बार फिर कुछ इस गम्मारता के साथ कहा कि उसकी समस्त आशाएँ नष्ट हो गईं और उसने निश्चय कर लिया कि वह नौकरी छोड़ देगा और हमेशा के लिये लगभग छोड़ कर चला जायगा। भदानी के अंत में नौकरी छोड़ने से पहिले उसने अपना कोठरी में, लाजटेन के मद्धिम प्रकाश में जुहरा को अन्तिम पत्र लिखा। इसमें उसने अत्यन्त करुण स्वर में लिखा—'जुहरा' मैंने बहुत कोशिश की कि तुम्हारे कड़न के अनुमार चल सकूँ, मगर हृदय पर मेरा अधिकार नहीं है। यह मेरा अन्तिम पत्र है, कल शाम को मैं खवनऊ छोड़ दूँगा। इसलिये तुम्हें अपने पिता से कुछ पढ़ने की ज़रूरत नहीं। तुम्हारा मौन मेरे भाग्य का निर्णय कर देगा। मगर यह खयाल रखना कि तुम से दूर रह कर मैं तुम से प्रेम नहीं करूँगा। मैं जहाँ कहीं भी रहूँगा, मेरा दिल तुम्हारे चरणों में होगा। मैं सदा उन दिनों को याद करता रहूँगा, जब मैं मोटर को केवल इसलिये धारे धारे चलाता था कि तुम्हें पकाने लगे। मैं इसके अतिरिक्त और तुम्हारे लिये कर ही क्या सकता था।'

यह पत्र भा उसने मौजूदा पा कर उसकी किताब में रख दिया। सुबह को जुहरा ने स्कूल जाते लये उससे कोई बात न की, शाम को भी रास्ते में उसने

बुद्ध न बड़ा। अतः यह विद्वह्वल निराशा हो कर अरनी कोठरी में चला आया। जा थोड़ा-बहुत अमवाक उसके पास था, बाँध कर उसने एक चार रण दिया और लाकटन का चन्धी रोशनी में चरपाई पर बैठ कर सोचना लगा कि जुहरा और उसका बाप में कितना अन्तर है !

यह अत्यधिक दुखी था। यह अरनी स्थिति से चरपाई तरह परिचित था। उस दिन थात का अनुभव था कि वह एक निम्न श्रेणी का नौकर है और अरनी स्थानों का लड़का स प्रेम करने का अधिकार नहीं रखता। लेकिन हम पर भा यह कभी-कभी मानता था कि अगर वह उससे प्रेम करता है, तो हममें उसका क्या दाप ? और फिर उसका प्रेम भंग्या तो नहीं ? वह हम अर्धेदुख में था कि चाची शा के जगह उसकी काठरी का दरवाजा किया न बरतगया। उसका हृदय चक स रह गया। लेकिन फिर उसने सोचा कि माला हागा। सम्भव है, उसके घर में कोई फकाफक बीमार पद गया हो चार यह हमसे सहायता लने के लिये आया हो। लेकिन जब उसने दरवाजा खोला तो जुहरा सामने खड़ा थी—जा हाँ, जुहरा ! विमर्ष की तरफ़ों में वह बिना हाथों के उसके सामने खड़ी थी। उसकी हृषान गूँगा हो गई। उसका समझ न नहीं आता था क्या बहे। बुद्ध अण रमगात का सा निश्कल्पता में थात गये, चाँदिर जुहरा के थोठे मुखे और अरनी अरमराने दुये स्वर में कहा—'नईम ! मैं तुम्हारे पास आई हूँ। बताओ अब तुम क्या चाहत हो ? लेकिन इसका पहले कि मैं कमर में प्रवेश करूँ मैं तुम से कुछ सवाल पूछना चाहता हूँ।'

नईम चुप रहा। लेकिन जुहरा उससे सवाल पूछने लगा—'क्या तुम सचमुच मुझसे प्रेम करत हो ?

नईम को मानो गैस लगी। उसका चेहरा तमतमा उगा—'जुहरा तुम पूसा सवाल पूछ रहा हो जिसका जवाब अगर मैं दूँ तो मेरे प्रेम का अपमान होगा। मैं तुम से पूछता हूँ, क्या मैं प्रेम नहीं करता ?

जुहरा ने इस सवाल का जवाब न दिया और थोड़ी देर तक चुप रह कर अपना दूसरा सवाल किया—'मेरे बाप के पास काफ़ी धन है मगर मेरे पास एक पृग कौड़ा भी नहीं। जो तुम्हें मेरा कहा जाता है, यह मरा नहीं, उनका है। क्या तुम मुझे बिना धन के भा चैना ही प्रिय समझो ?'

नईम बहुत भातुक आदमी था। थत इस सवाल ने भा उसके भावों को चोट पहुँचाई। अत्यन्त दुखा स्वर में उसने जुहरा से कहा—'जुहरा तुम्हारे के लिये मुझसे ऐसे सवाल न पूछो जिनके जवाब इतने साधारण हो चुके हैं कि

तुम्हें थड-बलास की प्रेम कहानियों और उपन्यासों में मिल सकते हैं ।

जुहरा उसकी काठरी में दालिज हो गई और उसकी चारपाई पर बैठ कर कहने लगी—'मैं तुम्हारी हूँ और सदा तुम्हारी रहूँगी ।'

जुहरा ने अपनी बात पूरी की । दोनों लखनऊ छोड़ कर देहली चले जाय और विवाह करके एक छोटे से घर में रहने लगे । डिप्पी साहब हँदते हँदते उसके यहाँ पहुँच गये । नईम को गोशरी मिल गई थी, इसलिये वह घर में नहीं था । डिप्पी साहब ने ज़ुहरा को बहुत पुरा मजा कहा । उनकी सारी इज़्जत मिट्टी में मिल गई थी । वह चाहते थे कि ज़ुहरा नईम को छोड़ दे और जो कुछ ही चुका है, उस भूटा जाय । वह नईम का दाँतों हज़ार ररया देने को भी तैयार थे । मगर उन्हें असपन्न लौटना पड़ा । इसलिये कि ज़ुहरा नईम को किसी मून्य पर भी छाड़ने के लिये तैयार न हुई । उसने अपने पिता से कहा—'शब्दा जान, मैं नईम के साथ बहुत प्रुश हूँ । आप उससे शब्दा शौहर मेरे लिये कभी न हँद सकते । मैं और वह आपसे कुछ नहीं माँगते । अगर आप हमें आशीर्वाद द सकें, ता हम आपक कृतज्ञ होंगे ।'

डिप्पी साहब ने जब यह बात सुना तो बड़े रूठ हुये । उन्होंने नईम को ज़ैद करा देने की धमकी भी दी । मगर ज़ुहरा ने साफ़ साफ़ कह दिया—'शब्दा जान, हममें नईम का क्या कुर्र है ? सच तो यह है कि हम दोनों बंकरूर हैं । हाँ, हम दोनों एक-दूसरे से प्रेम जरूर करते हैं । और वह मेरा शौहर है । यह कोई कुर्र नहीं । मैं नाबालिगा नहीं हूँ ।'

डिप्पी साहब बुद्धिमान् थे । तुरन्त समझ गये कि जब उनका बेटी ही राज़ी है, ता नईम पर दोष कैसे लग सकता है ? अत वे ज़ुहरा को हमेगा के लिये छोड़ कर चले गये । लेकिन कुछ दिनों बाद डिप्पी साहब ने विभिन्न लोगों द्वारा नईम पर दबाव डालने और उसको रुपये पैसे की लाजक देने का कोशिश की, मगर फिर भी असफल रहे ।

दोनों का जीवन बड़े मज़े में बीत रहा था । यद्यपि नईम की आमदनी बहुत कम थी और ज़ुहरा को, जो लाइ प्यार में पली था, शरीर पर खुरदरे कपड़े पहिनने पड़त थे, और अपने हाथ से सब काम करने पड़ते थे । मगर वह प्रसन्न था । वह अपने को एक नई दुनिया में पाता था, जहाँ ब्रदम-कदम पर नईम के प्रेम के नये नये पहलू उस पर प्रकट होते थे । वह बहुत सुखी था—अत्यन्त सुखी । और नईम भी बहुत प्रुश था । लेकिन एक दिन भगवान् ने कुछ ऐसा किया कि ज़ुहरा के सीन में एक दर्द उठा और इसके पहिले कि नईम

उसके जिय बुढ़ का भा सरे, वद इम संसार से त्रिदा हो गई । और नईम का समार सदा के जिये दुखमय और शंयकारमय कर गई ।

यह कहती उसने एक एक कर और स्पष्ट गता ल ले कर प्राय चार घंटों में सुनाई । जब वद अपने दिख का हाथ धूना शुद्ध ता उमका धरता बजाय वाला पपन के समतमा उठा । तेरे उसक चारर भार पाई कि ता ते रून शक्ति कर दिया हा । लेकिन वसका आँवों में आँसू थे और उसका गला सूख गया था ।

कहाना जब समाप्त हो गई ता वह सुरा उठ सका हुआ जैस उसे बहुत आदा है और वदना खगा—'मने बड़ा मूझ की कि अपनी प्रेम-कहानी आपकी सुना दा मैंन बड़ा मूझ का । तुहरा का चर्चा केवल मुझा तक मामिल रहना चाहिये था लेकिन लेकिन "

उसका स्वर भारी गया—'मैं पीवित हूँ और वद यह " वद हमारे साग कुछ न कह सका और नदी से गरा हाथ दबा कर कमरे से बाहर चला गया ।

×

×

×

नईम ने फिर सेना सुजाजल न बुढ़ । मैं अयोजी चारर पर कई बार उसका हलारा में गया मगर वद न मिला । धु पा सात महीने के बाद उसका एक पत्र मुझे मिला । जिसकी मैं उद्गन करता हूँ—

"प्रिय—ती ।

आपको बाद होगा मैंने आप के मकान पर अपनी प्रेम-कहानी आप को सुनाई था । वद केवल कहानी थी—एक मूठो कहानी—न कोई तुहरा है और न कोई नईम, मैं वैस मौजूद ता हूँ । मगर वह नईम नहीं हूँ जिस तुहरा म प्रेम था । आपने एक बार कहा था कि कुछ लोग प्ये भा होने हैं, जो प्रेम के मामले म बौद्ध होते हैं । मैं भी उन अभागो पुरुषों में से एक हूँ जिसका पूरा जवानी अपना मन बहलाने में बात गई । तुहरा से नहा का प्रेम एक मन बहलाव था । और तुहरा का शत्रु मैं अभी तक नहीं समझ सका कि मैंन उतरे क्यों मार दिया । बहुत सम्भव है कि हमम भी मेरे जीवन का स्वाहा का हाथ हो ।

मुझे मादूम नहीं, आपने मेरी कहानी मूठा समझी या सधी ? लेकिन मैं आप को एक विचित्र बात बताता हूँ कि मैंने याना उस मूठा कहाना के गदने

वाले ने, यह बिल्कुल सचो समझी। सो प्रतिशत सच ! मुझे ऐसा अनुभव हुआ कि मैंने सचमुच जुहरा से प्रेम किया है और वह वास्तव में मर चुका है। आप को यह सुन कर और भी आश्चर्य होगा कि जैसे जैसे समय कन्ता गया, इस कहानी के आश्चर्य वास्तविकता अधिक होती गई और जुहरा की आवाज़, उसकी हँसा भी मेरे कानों में गूँजने लगी। मैं उसकी साँस की गर्मा तक महसूस करने लगा। कहानी का प्रत्येक कण जाविज हो गया और मैंने और मैंने यों अपनी क्रम अपने हाथों से धादी

जुहरा कहानी न सही, मार म ना कहानी हूँ। वह मर चुकी है, इस लिये मुझे भी मर जाना चाहिये। यह पत्र आप को मेरा मृत्यु हो जाने के बाद मित्रेगा विदा जुहरा मुझे ज़रूर मित्रेगा कहीं? यह मुझे मालूम नहीं।

मैंने ये कुछ पत्तियाँ आप को सिर्फ इसलिये लिख दी हैं कि आप कहानी खेसक हैं। अगर इससे आप कहानी तैयार कर लें, तो आप का सात आठ रुपये मिल जायेंगे, क्योंकि एक बार आप ने कहा था कि एक कहानी का पुरस्कार आप को सात से दस रुपये तक मिल जाया करता है। यह मेरी भेंट होगी। अच्छा विदा !

आप का—नईम”

×

×

×

नईम ने अरने लिये जुहरा बनाई और मर गया—मैंने अरने लिये इस कहानी की रचना का है और मैं जीवित हूँ—यह मेरी इयाश्ती है।

—श्री सघादत हसन 'मय्यो'



## ढाई-सेर आटा

पुरवाई चल रही थी। मौला को बाइ ने पकड़ रखा था और वह चाठ दस रोज़ से काम पर जान कं क्राबिल नहीं रहा था। दो तीन राज़ तक, जो दो चार पैसे धमा थे वे ख़ूब हुए, फिर उधार पर काम चलाना रहा। दो चार दिन बाइ बनिया भा हाले हवाले करन लगा। छाचार हो कर मौला एक दिन टॉग में ज़रा आराम पा कर सुबह तकके टोकरी ले कर मज़दूराने बाज़ार गया। वह कई कारागरो के साथ काम कर ख़ुका था उन्हीमें से एक ने, जिसका काम ज़गा था, उसको अपने साथ ले लिया। दिन भर ईंट ढोता रहा। शाम को साढ़े चार आने पैसे मिले, जिन्हें ले कर वह घर चला। रास्ते में एक आना बनिये के उधार का दिया, एक आना घर के किराये के लिये रज़ किया और एक पैसा दूसरे दिन के ख़ेने के लिये बचा लिया। बाका नौ पैसों में से एक का आलू, एक का बाजरे का आटा, पाँच पैसे के खावल, एक पैसे की दाल और एक की लकड़ी ले कर एक लम्बी ली गली में घुस गया, जो आगे जा कर इतनी लम हो गई थी कि वहाँ खमा स चँपेरा ला गया था। इस गली में बाग़र-बराबर कई काठरियाँ बनी हुई थीं, जिनमें से दो एक से धुर्धो निकल रहा था, जो ठंडा हो कर गली में घुम रहा था और गली के अधिकार को और बढ़ा रहा था। मौला की घरवाली—मुसा, जिसमे बाज़ायदा विवाह तो नहीं हुआ था, मगर पन्द्रह बप स दोनों के सम्बन्ध पति पत्नी ही-सैम थे दो लड़कियाँ और उनसे छूटे दा लड़के जाड़े क मारे पास पास बैठे मौला की प्रतीक्षा कर रहे थे। मौला को देखत हा सब ने प्रसन हो कर उभ घेर लिया। वह थका हुआ बहुत था, पोटखी रख कर ज़मान पर बिछे हुए टाट पर जगते हुए बोला—“सब जेता आया हूँ।”

मुना चूल्हे के पास गई जो उसी कोठरी में एक तरफ़ बना हुआ था। बाग़ मुन्नगाई गई और दाल खावल पकने को बढ़ा दिये गये। लड़कियाँ और लड़के चूल्हे की घेर कर बैठ गये और दाल की ‘खदर पदर’ सुनना लगे। उन लोको के लिये हमसे सुन्दर कोई रागना हो हा नहीं सकती था।

कोठरी में सील और मैले कपड़ों का दुग ध पैली हुई थी। अब वहाँ धुर्धो भी भरने लगा, मगर सब का प्यान चूल्हे पर था। लड़के भूख से परेशान थे।

दाल चावल जल्दी से पक कर तैयार हो जाए, इसलिये वे बहुत-सी लकड़ी चूल्हे में लगा देते थे। यह देख कर डाकी माँ डाँगती—“दुष्टो, कल खाना कैसे पकेगा ?”

बड़ी लकड़ी चूल्हे के पास बराबर शरीर खूजलाये जा रही थी और थोड़ी-थोड़ी दर बाद लकड़ी की ढोई से दाल और चावल निकाल कर चुटकी से मज्ज कर देखती भी जाता थी। जबक यह देख उनसे पूछते—“कितनी दर है ?”

“बस ज़रा सी कमर है।”

यही एक उत्तर आध घंटे तक दोहराया जाता रहा। मौला एक पुरानी दरो भाड़े, जिसमें सैकड़ों छेद थे टाट पर चुपचाप पड़ा था। थोड़ी दर बाद वह भी बोला—“ऊँह ! नींद भा सुसुना नहीं आती।”

इतने में किसी के रोने और चीखने की आवाज़ आने लगी। कोई मजदूर था, ताड़ी पी कर आया था और जो अपना खी को मार पीट रहा था और खी विल्खा रही थी। जब शोर अधिक हुआ तो मुला बोली—“इन लोगों के यहाँ रोज़ यहा रहता है। त जान कैसे कमाने हैं ?”

मौला जैसे उसकी बात सुन कर चौंक पड़ा और बोला—“ऊँह ! चावल नहीं पका अब तक ?”

मुनी ने देखा, चावल गल गये थे। अस्तु हाँकी उतार ली गई। हाँकी दरकन से बन्द थी, मगर डबाल में हाँकी का कगारों पर कुछ चावल आ गये थे। क्षण लड़का बच्चा ने उससे दो चावल पोंछ कर खा लिये, यह देख उससे छोटा लकड़ा मुनू तुरन्त बोला उठा—“हूँह ! मैं भी।” और यह कह उसने और अधिक चावल पोंछ लिये। हम पर दारों में भगदा हा होने वाला था कि मुनी ने दोनों को हपटा—“अभागा को ज़रा मज्ज नहीं ! मैं कहनी हूँ।”

थोड़ी दर जबके मुला की बात पूरी होने का मनोसा करते रहे और जब यह कुछ न थाली तो फिर खान की ओर आकषित हुए। अब मज को दाल पका का बड़ी बचेनी से इनज़ार था। आग्रिण एक लकड़ी गुरी—“दरगाँ अब घाट दा।”

माँ ने दाल देखी तो वह थोड़ी गल गई थी। अब अधिक मनोसा और करता, उमन दाल घोट कर नमक डाला और हाँकी उतार ला। फिर तामचानी की तान प्लेटें, तिनकी धानी ज़ाव गीय सिद्धुल उड़ चुका थी, और वह तिही की रक्षा सामने रखी। पहिल एक बड़ी प्लेट में चावल निकाले और उस पर खान के सामन रख दिया। मौला

खाने लगा। यह सब करते-करते टकटकी बाँध कर मुन्नी के हाथों की हरकत देना रहे थे। उसने मिट्टी की रक्वाबा में चावल दाख निकाल कर दानों छद्कियों को दी और फिर तामचीनी की दोनों प्लेटों में बराबर-बराबर चावल निकाल और उत पर दाख दाख कर दानों छद्कों को दिये।

बच्ची ने एक बार अपनी प्लेट देखी और फिर बहिनों की रक्वाबा देना कर बोला—“अम्माँ उसकी प्लेट में इतना और हमारी में इतना ?”

मुन्नी ने ज़रा सी दाख और उसकी प्लेट में दाख दी।

मुन्नी यह देख अपनी प्लेट उसके सामने धरा कर बोला—“अम्माँ हमें मा।

माँ ने दो बार चावल उसकी प्लेट में भा दाख दिये और बाकी चावलों को हाँकी में दाख दाख कर खुद खाने लगी। सभी बच्चे में कुछ कायले बाती थे जिनके हल्के प्रकार में इन खोगों के खड़े और खभते हुए मुह दिखाई पड़ रहे थे। खाट खड़े खात जाते थे और प्लेट का तरफ़ देना कर अदाता करते जाते थे कि अभी इतना और बाती है, इतना और बाती है। अंत में मुन्नी अपनी प्लेट पोंछ कर बोला—“बस था लुके।”

मौला भी चावल समाप्त कर लुका और बोला—“चावलों में प्रुदा ने बही बरकत दी है, ज़रा-स हा खिच और पेट भर गया और राती ता सर भर खाट की हो, तो कुछ नहीं और दो सेर भाटे का हो, ता कुछ नहीं।”

बच्ची पाना पा कर बोला—“अम्माँ, सुपह क्या पकेगा ?”

मुन्नी—“मैं कहती हूँ इन खोगों का मन कभा नहीं भरता, कभी नहीं भरता। अभी था लुका है और अभी से पूछ रहा है कि कज क्या पकेगा ?”

मुन्नी ने पलंग के गाचे स, जो कोंदरी क नाच का चौथाई हिरसा घरे हुए था, एक पानदान निकाला, जिसका पेंदा थिम गया था और सब कुल्हियाँ एक दरती पर रली हुई थीं। यह पानदान मुन्नी को माँ का था और उसे बहुत प्रिय था। यह साचा करती थी कि मैं किसी घर में ऊपर का काम धंधा करने पर नौकर हो जाऊँगी, तो सब से पहिल इसको ठीक कराऊँगी। उसने एक पान के चार टुकड़े किय एक खुद खाया, एक मौला की दिया और दो दोनों छद्कियों को दिये। इसके बाद कोंदरी के बाच में एक परदा टोंग दिया गया, जिससे उसके दो भाग हो गये। एक और पलंग हो गया और दूसरा और शट का फराँ। पलंग पर मुन्नी और मौला छेद गये। और टाँ पर दोनों छद्के छद्कियाँ। ताबा लेज़ हो गया था। मौला और मुन्नी ने वही दरी छोड़ की

और लड़के लड़कियों में से भी किसी ने मोटी चादर और किसी ने टाट का टुकड़ा दोहरा कर ओढ़ लिया और फिर चिड़ियों के बरचा की तरह एक-दूसरे से लिपट कर लेट रह। कोठरी के दरवाजे से ठंडा हवा आ रही थी, इसलिये मौला ने उठ कर द्वार बन्द कर दिया। हवा आनी बन्द हो गई और कोठरी में उमम के कारण गरमी हो गई। थोड़ी देर की निस्त-भता के बाद मुन्नी बोली—“आज मुशी जी आए थे और कह गये हैं कि नवाब साहब ने हुक्म दिया है कि जिसपर किराया बाकी हो उसे निकाल दिया जाय।”

मौला—“निकाल दोगे—निकाल दोगे ? हुँह ! जब सुनो यही। आएँ, निकालें आकर। हम जहाँ में बरचों को ले कर कहीं जाएँ ? हुँह करे वह बड़े आदमी। हम तो नहीं निकलेंगे। कह दो जब किराया जमा हो जायगा, तो दे दोगे। ले कर भाग न जाँगे। मर जाएँ तो बात दूसरी है, बड़े आये कहीं के निकालने वाले !”

इसके बाद थोड़ी देर के लिये मौन छा गया। फिर मौला बोला—“मुशी जी के यहाँ की नौकरी का पता चला ?”

मुन्नी—“वह कहते हैं कि छोटा लड़की से काम नहीं चलेगा। ऐसी लड़की हो, जो फाड़ू बहार करे और दो घड़े पानी बहा सके।”

यह कह कर मुन्नी ज़रा रुकी और फिर ज़रा आवाज़ जोषी करके बोली—“मैं कहती हूँ मयानी लड़कों को कैसे भेज दूँ ? इस निगोड़ी के दीदे भी तो हवाई हैं। पानी भरने जाती है, तो ठट्टे करती है।”

मौला—“जायेगी हरामज़ादी तो अपने से जायेगी, एक खली गई, तो क्या कर लिया, लड़का होती तो चार आने रोज़ कमा के लाती।”

मौला की बड़ी लड़का भाग गई थी और उसका साल भर से कहीं पता नहीं था।

मुन्नी—“करते क्या ? निगोड़ी था ही ऐसी। ऐसी न होती, तो भागती हो क्यों ? सब लड़के कब अच्छे निकलते हैं ? किसने खा कर माँ बाप की खिलाया है ? इधर कमाने लायक हुये उधर खल दिये। भूरे को देखो, ठेला चलाता है, दस आने रोज़ पाता है और सब उड़ा देता है।”

मुन्नी एक ठड़ी साँस भर कर चुप हो गई और फिर निस्त-भता छा गई, जिसे कभी-कभी इन खोगों की खींसी की आवाज़ भग कर देती थी। अभी आठ हो गजे थे और बाज़ार में पहल पहल थी, मगर यहाँ मौला का नाम गया था।

( २ )

सुबह जब मौला को और सुन्ना तो उसने गुम्ना को जागने पाया। वह पौष मिनट तक पनप पर खड़ा रहा। फिर कराहना हुआ उग्य और बोला—  
‘सर्दी के मार जान निकला जाता है, क्या तैय जल्दवा हा गया। बादा कहीं है ?’

सुन्ना ने उठ कर एक काम से बादा का पटन और दिलामझाड़ का दिविया निकाल कर दी। मौला ने एक बोझा गुलगाड़ और पान लगा। और बादा जब तक धु धा से पकड़न लायक रहा उसने हाथ से नहीं छुटा। फिर पलंग से उग्य और खाटा ले कर बाहर खड़ा गया। पन्द्रह मिनट बाद सर्दी से करिंगा पुआ आया और खोला रख कर बोला—‘एक बादा और। दलता दिन पद आया और धूप का कहीं पता नहीं।’

मौला ने एक बाका और सुत्रपाई और फिर टाकरी बठा कर बोझा पीठा हुआ बाहर खड़ा गया।

मौला के जाने के दो घण्टे बाद मुन्नी लडकी और लडकियां को ख कर बाहर निकली और कोरा में कुटा लगा कर टडजन खगो। कुछ दूर पर शम्य सज़दूरों का खियाँ धूप में धेगा बाते कर रहा थी। यह भा जा कर बादा में नमिमलित हा गइ। लडके और छोटी लडकी खोल घना कर हथर-उपर हो रहे।

तीन चार घण्टे बाद मुन्नी आया और माँ से कहने लगा—‘भग्मा, भूख लगी है।’

मुन्नी उसी तरह बानों में खान रहा, तैय यह गुनने की बात ही नहीं थी। बोझा देर के बाद बादा आया और उसने भी यहा शब्द दादराये, लेकिन उसने शय भी खान नहीं दिया। उस समय लड किसी बड़े घराने का खियों की बदबलनों का बड़े उरसाह के साथ खरसा कर रहा था। हम उरसाह में यह गव खिया था कि यद्यपि हम हैं छोटा पाति के लेकिन धने नहीं हैं। बोझी बोझा देर बाद एक लडका या दोनों घरना घरना सदा लगा दत। इस प्रकार एक घग बीत गया। शय छाग लडका भा कहीं से धाई और माँ के पास बैठ कर सुपके से बोझी—‘भग्माँ खला।’

मुन्नी—‘भग्मी सवेरा है, जारा रहरो।’

दस मिनट और बीत। शय बादा माँ का कथा पकड़ कर खड़ा हो गया

घोर रोती आवाज़ में रट लगा दी—“अम्माँ खाना दे, अम्माँ खाना दे, अम्माँ !”

मुन्नी थोड़ी देर यह रें रें सुनती रही। फिर उसको उँट दिया। यव्वू यह उँट सुन कर रोने लगा। अन्त में वह यदयदाती हुई उठा—“मैं कहती हूँ, या ये सब मर जायें या मुन्ना को मौत था जाए, जिन्दगी इनके कारण दूमर हो रही है।”

मुन्नी ने कोठरा में था कर आग सुलगाई और बाजरे के आटे की पाँच टिकियाँ पकाई। दो छाग और तान बड़ा, उन पर ज़रा ज़रा सा गुद् रख कर छोटा टिकियाँ खदकों को दीं और बड़ी एक भाप ली और दो दोनों लदकियाँ को दीं। इन लोगों का खाना तान चार ही मिनट में परम हो गया और फिर सब घूमने चले गए।

शाम को जब मौज़ा मज़दूरी के पैसे लिये लौट रहा था, तो उसकी नज़र गली के कोने पर पड़ी। उसने देखा कि दा डाई सेर आटा यों ही पड़ा हुआ है। उसने पाम जा कर आटा चुटकी से उग कर देखा कि कहीं उसको अखें धोखा तो नहीं स्वा रही हैं। और जब बिरवाम हो गया, तो चकित खड़ा रह गया। मन कहता था उठा ले चलो, मगर एक तो यह डर था कि शायद कोई कुछ कहे और दूसरे यह भिन्नक कि उसके दूसरे मज़दूर साथी भी पीछे आ रहे होंगे। यदि वे मुझे आग उठाते देखेंगे, तो क्या कहेंगे। आखिर आटा उठाने का साहस न हुआ और वह खल पड़ा। मगर हर क्रदम पर चाल धीमी होती जाता थी। अन्त में दम ही क्रदम पर जा कर पैसा भोंबका सा खड़ा हा गया, जैसे चौराहे पर पहुँच कर राह भूल गया हा। वह सोच रहा था कि कोई दूसरा मज़दूर इस आटे को उठा लेगा, यह मुन्नाको न मिलेगा और उसको मिल जायगा। क्रमश यह विचार इनना प्रबल होता गया कि मौज़ा काल्पनिक आटा उठाने वाले मज़दूर को हद से ज़्यादा ईर्ष्या से देखने लगा और यह सोचता हुआ आटे की ओर पलटा—“उँह ! कोई हूँसेगा तो हूँस लेगा, बाल बच तो आटा पा कर पृथ होंगे।” अत्र का मौज़ा के क्रदम पैसी कुर्ता से उठ रहे थे, जैसे वह किसी हृषते हुए बच्चे को नदी से निकालन जा रहा हो। आटे के पास पहुँच कर वह हतमीनान स बैठ गया, अरना अगोड़ा फैजाया और आटा उठाने लगा। साथ साथ यदयदाता भी जाता था—“न जाने कैसे लाग हैं। अनाज इस प्रकार पँक दिया है कि पैसा के पाचे अलग जाए और नाकी में अलग भाप इससे तो अच्छा है कि मुन्नी बर्गी खा ल।”

जिस बात का भय था वही हुआ। पॉषण्ड मज़दूरों की टोली पास से गुज़रा, और वे सब यह विचित्र तमाशा देख कर खड़े हो गये।

एक ने कहा—“क्या मिल गया दोस्त मौला ?”

मौला—“कुछ नहीं, प्रयाग थाग है। मगर है तो आज़िर अनाज़, पैरों तले आएगा। मैंने कहा उठा लूँ मुर्गा बकरी खा लेंगा, ता स्वारथ हो जायगा।”

दूसरा मज़दूर बोला—“अरे, गधों का पकी हुई चीज़ ! कहीं दोना-टोटका न हो ?”

पहिला बोला—“उठा जे, मौला, उठा ! इसे बकने दे, काम ही आ जायेगा।”

मौला सिर मुकाए अपने कार्य में व्यस्त रहा। ये लोग चल खड़े हुए। कुछ ही दूर पहुँच कर एक मज़दूर ने तान लगाई—

“सौ से बुरा तो एक से बहतर बना दिया !”

दूसरा उसकी तान के बाव ही में बोला—“शरीर हैं सही, मगर हम गली का गिरा पड़ा सो नहीं उठाते।”

ये मज़दूर जैसे तो दून की ले रहे थे, पर वास्तव में उनमें से प्रत्येक को मौला के भाग्य पर ईर्ष्या हो रही थी कि उसे इतना आटा यों ही पड़ा मिल गया।

इस थाग का भी विचित्र क्रिस्ता है।

( ३ )

दस बजने के करीब थे, मगर अभी तक खाना तैयार नहीं हुआ था। शौकत मियाँ स्कूल जाने को तैयार हुए थे। उनकी लुभा ने दो चार रोमियो जल्दा जल्दी डलवा दी और चार कबाब तब दिये और जल्दी से सफ़्त पर खाना परोस कर शौकत मियाँ का खाने क लिये आवाज़ दा। शौकत मियाँ एक हाथ में पुस्तकें लिये और एक हाथ से शरवानी के बदन अगाते हुए खाने के कमरे में घुस गये और बिना हाथ धोये खाना शुरू कर दिया। मगर उन्होंने पहिला हा और मुँह में रखा था कि ऐसा मुँह बिगाड़ लिया, जैस कुनैन खा गये हों। जल्दी से वह कौर पानी के सहारे पेट में पहुँचाया। और फिर रोटी का एक छोटा-सा टुकड़ा तोड़ कर मुँह में रखा, चबाया और फिर मुँह बिगाड़ कर बोले—“कृष्णजान ! आटा खराब है।”

“आग प्रयाग है ! क्या ?”

“शायद अकरा गया है।”

पूफो ने भी रोटी का ज़रा-सा टुकड़ा मुँह में रखा और फिर बोली—  
“तुम्हारी बातें कहीं अकराया है ? रोटियाँ जल्दा पकने में कुछ छुँवाँ गई हैं।”

शौकत मियों ने कुछ जवाब नहीं दिया। जल्दा से कितारें ढटा कर भागते हुए बाहर चले गये।

वेगम साहवा धूप में बैठी कुछ सो रही थी। पुत्र को इतना जल्दा जाते देख कर बोली—“क्या बात है ?”

शौकत मियों की बुधा बोली—“कुछ नहीं, ज़रा रोटियाँ छुँवाँ गई हैं।”

वेगम सहवा—“मेरी समझ में नहीं आता कि शौकत मियों कब तक फ्राँजे करके खूँ जाते रहेंगे। ज़रा मैं तो देखूँ वे रोटियाँ।”

बुधा एक प्लेट में रोटी रख कर सामने लाई। वेगम साहवा ने ज़रा-सा टुकड़ा मुँह में रखा और थूक कर बोली—“ये छुँवाँ गई हैं ? मैं कहती हूँ बहन ! तुम्हें कब अज़ब आणगी ? अकराया हुआ आटा मेरे बच्च के सामने रख दिया। जहाँ मेरा ध्यान हटा और दखिहरपना होने लगा।”

इस वाक्य का लक्ष्य बुधा थी। यह बेचारी शौकत मियों के बाप की मौसेरी बहन थी। इस वप हुए विधवा हो गई थी और उनका या उनकी लक्ष्मी का इस घर के सिवा कहीं ठिकाना नहीं था। प्रगट रूप में तो वह एक शरीर बहन की भाँति रखी जाती थी, पर वास्तव में वह एक हेडमामा या नीकरों के इज्जत का काम करती थी, और हर प्रकार की प्रबन्ध-मन्बन्धन द्वारा बियों का उत्तरदायित्व उन्हीं पर था। वेगम साहवा का आरोप सुन कर बोली—  
“ए मैंने तो भले की सोचा थी, छोटी मटकी में भाग था, मैंने सावा क्यों पका रहे काम ही भा साथ।”

“वह न हुआ कि देख लेती, आटा है कैसा ? वह तो रोटी की सुरत से ही मालूम होता है, ऐ नैरातन !” उनकी आवाज़ पचोस गज़ का फ्रासखा सप करके हमों कदक के साथ रसोई घर में पहुँची।

नैरातन घबरा कर बोली—“जो, वेगम साहवा, पका रही हूँ।”

“सब आटा नाले में फेंक दे, बड़े गगरे से भाग निकाल कर पका।”

शौकत मियों की पूर्ण इस आला का पालन कराने दीर्घ और रसोई घर आ कर बहवा—  
“नाली में फेंक दो, नाली में फेंक दो। सब है



पर मैं बाज़ होनी है, तो उसका आदर नहीं होता, अनाज बड़ी चीज़ है बहन, क्या बाज़ !”

शैलानन—“हाँ, मुँह मुँ मया आटा, सब मेहनत खड़ाय—”

“तुम कैंका कैंका नदी, खेता ज़ायो बकरी का गिरा देना । हँ, और देखो, मटका में अमा दा डारै वेर आग और हागा दा आने दम पैंने का माह है, वह भा जता ज़ायो मैं पैंक्या का क्या करूँगा ?”

शैलानन आग छे तो आना चाहता था, मगर यह पून कर कि पूजावान मरा बलिया मण्डल के नाम कर पढ़सान करना चाहती है, बोला—“हाँ, आटा छे जा कर किसो कान में डाल दूँगा । पैंतो तज़े न पड़े, अब यह है किम काम का ?”

फुफ़ाजान ने इस दर से अधिक बातें नहीं कीं कि कहीं शैलानन स्वयंभू आटा ख जाने स शूकार न कर दे । और इस प्रकार ज़रा-मा पढ़सान करने का जो अखतर मिळ रहा है, वह भा हाथ से चला जाय । वह तुरन्त खोली में आ कर अपने एक मजे दुपट्टे में आटा बाँध लाई और बोलीं—“दुपट्टे का प्रयाज रचना करने न पाय और शाम को अपने साथ हा जता आता ।”

शैलानन ने आटे की तरफ एक बार दृष्टा और फिर अपने काम में लग गई । जब घर जाने लगा तो पकी हुई गोटियाँ गुधा गुधा आग और आटे की पोन्ना सब सामान छे कर घर आई । शैलानन की बका खडका ने, जो पति से ऋग्ना हो जाने क कारण मीं हो के पास रूपाया दर से रहता थी इस सब सामान के विषय में पूछा । तब शैलानन ने सारा विवरण सुनाया तो उसने रोटी खला और बोला—“खान छायाज नहीं है, आटा कटुवा हो गया है ।”

“बकरी खा खेतो !”

“उसका दूध त घट जायेगा ?”

शैलानन न उठ कर रातियाँ बकरी के पास डाल दीं । उसने एक रोटी तो खा खा मगर फिर मुँह दग लिया । उन खोलीं ने बहुत कुछ चुमकारा पुन लाया मगर वह उम आर आकर्षित न हुई । और हातां भा कैसे ? वह तो बेगम क यहाँ के बच-मुचे मजेदार भाजन पर पकी था । इस समय भी वही स पं भरा था ।

अब शैलानन साचने लगा कि आटे का उपयोग कैव हो ? बेटी ने साथ दा कि दुलारे ( अपने पुत्र ) का नज़र उतार कर चौड़ाई पर फेंक दो ।

यह प्रस्ताव उपयुक्त था । अगर आग आर सेर उरु हाता, तो यह प्रस्ताव

अवरय ही स्वीकृत हो जाता, मगर एक दम डार्ई सेर आटा इस प्रकार फेंकने पर खैरातन तैयार न हुई ।

रान को जब खैरातन काम पर से लौटी और खा पी कर निरिच न हो कर खटी, तो फिर यह प्रश्न उपस्थित हुआ कि आटे का क्या हो ? मित्रों और सम्बन्धियों का सूचा दाइराई गई, मगर काम का कोई आदमी समझ में न आया । प्रात काल एक भिखारी ने आवाज़ लगाई । खैरातन ने मौजा शीमलत जाना । पाव भर आटा निकाल कर भीड़ देने लगी । भिखारी था शहर का, आटा देख कर बोला—“माई, फ़कार को ख़राब चीज़ न दिया कर । अरजाह भला करे !”

वह यह कहता हुआ चला गया और खैरातन बदनदाती हुई अन्दर आई—“मुए, मोटे फ़कार ! भीख माँगने चले हैं ।”

अब फिर वही समस्या उपस्थित हुई कि आटे का क्या हो ? तीमरे पहर एक खा दो बच्चों को साथ लिये हुए उनके घर आई और अपनी कथा इस प्रकार सुनाई कि मैं कंटे की रहने वाली हूँ, भूकम्प ने मेरा सब कुछ नष्ट कर दिया । भर कई बातें थे, बड़े बड़े मकान थे, कई नौकर चाकर थे, पति थे, और कई बच्चे थे, पर अब कुछ नहीं रहा, भूकम्प ने सब कुछ छीन लिया और अब मैं दुखियारा हूँ बच्चा के साथ दर दर मारा मारी फिर रहा हूँ ।”

खैरातन और उसकी बेटी को उस बेचारी पर बड़ा तरस आया और सब आया एकदम उठा कर उन बच्चों को दे दिया । वह खी शरीब आदमी के घर से इतना आग पा कर बड़ी चकित हुई । मगर थी वह भी खी—इन बच्चों की सहायुभूति पर उसे सदेह हुआ । ज़रा दूर गला में जा कर उसने पोटी खी खी आग देखा और जब वास्तविकता का ज्ञान हुआ, तो खूब बड़ बड़ाई, कोमन लगी और आटा गली में टाक कर खलता हुई । उसे भला ख़राब आटे का क्या परवाह ? उसकी जेब में आज की आमदना के पैसे खनक रहे थे ।

( ४ )

सप्या समय मुझी मौजा की प्रताछा कर रही थी और बन्दू उसके कंधे से लगा रें रें कर रहा था—“धर्मों भूल लगी है ।”

मुनी—“दीपहर को मुहें और मुन्नू को बराबर की टिकियाँ दा थीं, देखो, वह कहाँ रोता है ?”

मुन्नू एक लाल पत्तन का फग काताज़ सिर पर छपेटे एक लकड़ी हाथ में

खिप सिपाही बना टहल रहा था। यह सुन कर बोला—“धम्मों, हमें कुछ शौर भा धम देना तब भी हम न शोर्गो, अर्या !”

मुखा—“अब क्या बन्नु ! दस, मुन् कितना अर्या जन्का है ?”

बन्नु शर्मा कर चुप हो गया, अगर फिर मोहा दूर बाद पैसा हा रें रें करने लगा। यह सुन मुन्नी बोला—“रो नहीं, दसो, यह जाने होंगे और तुम्हारे जिपे पाज खाते होंगे, अर्या !”

हनुने में मौला आटे की पोटली जिपे टुप कागा में घुसा। मुखा न पोटली घाली और दस कर आरघप से बोली—“गेहूँ का पाग कहीं मिला ?”

जब से मौला धामार था, इन जागी न गहूँ की राता नहीं खाइ था; आज आग देख सब प्रसन्न हो गए।

मौला—‘मिल गया। दसो कितना है ?’

मुन्नी दौड़ कर कहीं स तराजू माँग लाई और आटा तौलने के जिपे बैठी। एक सेर तौला और अम्को एक करद में रम दिया फिर दूसरी थार तराजू भरा, परियास देखने को सब आधन टामुक ये, हसी प्रहार जैसे खदके मूल में परोपा का गतीजा मुनने को उधुक हात हैं। आदि मुखा बोला—‘यह सवा दो सर स कम न होगा, कितना अर्या आग है खज घोडरी, पैस, इसके मुन मुन खे पहिले चिगा जजा, अंधग बहुत है।’

एक खदकी ने दौड़ कर एक मैजो जालटेन उठा कर प्रधाई और फिर दोनों बैठ कर घुन घुनने लगी, दोनों छोटे खदके शौर मचाने लगे—“गेहूँ का आटा, गेहूँ का आटा !”

मुन्नी घोड़ी देर चुप रही, फिर पिशा कर बोली—“चुप रहो अभाती ! कान फाड़े खलते हो !”

इसके बाद निस्त-घना छा गई। घोड़ी देर तक छोटी खदकी के सॉपने या बड़ी खदकी के शरीर सुतलाने का शर-शर के अतरिक कोई शब्द न सुनाई दिया। पाँच मिनट बाद मुखा ने हुक्म सुनाया—‘बस, अब साक हो गया, आधा आटा कल के जिपे रख दो।’

मौला—‘अब रखोगी क्या, सब आज ही पका जो जी भर के खा लें !’

दोनों खदके—‘हाँ हाँ मेरी धम्मों !’

मुन्नी आग गूँधन लगी। आटे में अब भी घुन था। गूँधते समय उसे कुछ संदेह हुआ, उसने आटा निकाल कर चखा। फिर मुँह विचका कर बोली—“नमक टाल कर पकाने वाला है, दो पैसे का तेज खे आधो, तो आज

पूरियाँ पकें। दो पीसे के आलू भी खे आधो, और ज़रा बक्राती के पहाँ से कढ़ाई भी खे आधो।”

दोनों छद्दके घट उठ कर कढ़ाही लेने दौब गए, उनके पीछे छोटी लड़की भी चली। मौला बनिये के यहाँ सामान लेने गया। मुन्नी ने आटा गूँथ कर रखा, इतने में लड़की कढ़ाई खे कर आ पहुँची। मुन्नी ने कोठरी क बाहर निकल कर कढ़ाई मॉजी। मौला लड़की और तेल बगौरह ले कर आया, लड़कियाँ ने आग जलाई, सब लड़के नूट्टा घेर कर बैठे, कढ़ाई चढ़ाई गई। मुन्नी ने एक मिट्टी की रकबा में एक बकरी की राटी बढ़ाई, कढ़ाई में दो वूँद तेल टपकाया जब बड़ कढ़कढ़ाने लगा, तो उसने रोटी टाज दी। वह छुप स बोली, तेल की गंध काठरी में फैल गई। लड़के खाँसने लगे। पूरियाँ पकते दूध कर सब के चेहरों पर प्रसन्नता छा गई।

मुन्नी बोला—“आहा! कैसा अच्छी महक है?”

मुन्नी ने रोटी दूसरी ओर पलंगी। मुन्नी बोला—“कैसी खाल-खाल है? अम्मी यह हम खाँयेंगे।”

‘बबू—नहीं अम्मी, हम! हम!’

मुन्नी ने पूरी उतारी फिर कढ़ाई में दो वूँदें टपकाई और दूसरी पूरी खाल दी। इमा प्रकार उसने एक घंटे में धीमी धीमी आँव में सब पूरियाँ निकाल लीं। खाने में देर हो गई थी, मगर यह बिलम्ब खुशी के कारण किसी को महसूस न हुआ। पूरियाँ पका कर मुन्नी चिह्लाई—“अरे आलू आधो, आलू! किसीने अभी तक काट ही नहीं, मैं कहता हूँ ये छाकरियाँ किसी काम की नहीं हैं, देखो तो, सब रखी तमाशा देख रहा हूँ।”

जल्दा जल्दा आलू के पतले तले कतले काटे गए और फिर कढ़ाई में पकने के लिये चढ़ा दिये गये। यह बिलम्ब बेशक खल गया। सब खुप बैठे रहे। इम निस्तब्धता को कम्मा-कम्मा खाँसी का आवाज़ भंग कर देता थी। आधिर आलू तैयार हो गये, तैयार क्या हो गये ज़रा मुत्तायम पड़ गये। मुन्नी ने मिट्टी की रकबावियाँ, निकाली और सब में दो दो पूरियाँ और उन पर थोड़े थोड़े आलू रख कर सब के सामने बढ़ा दिये। अब जो इन खोंगों ने देखा, तो बबू सो रहा था।

मुन्नी ने उसे झँकोदते हुए कहा—“बबू बट! उठ देख, पूरियाँ तैयार हो गईं।”

बबू आँसू मजता हुआ उठा और रोने के लिए पूरा मुँह खोल कर एक

खीर खाना खाही, पर महमा उसकी दृष्टि पुरियों पर पड़ गई, जिसको देख कर रोमा भूख गया। सब हँस-हँस कर पुरियाँ खाने लगीं।

मुन्—“अहा हा हा ! कितना मजे की हैं !”

छोटी लड़की—‘अम्माँ, साजन होता ?’

बड़ी लड़की—“हाँ, और पुनायी शरदा न होता गया !”

फिर निरन्तर छा गई। ये लोग लूब मने लें लें कर भा रहे थे, जिससे अश्रु आसों शीर पैदा हो गया था। जब पुरियाँ खाम हो गईं, तो मुन्नी ने आधा आधा सब को और हीँ और फिर स्वयं भा ली। मौला ने आधा मिखने का फिरमा मुनाया। इस पर मुन्नी बोली—‘यह भी तुदा की देन है। मैं बल्लू स कह रही थी कि आज खन्धा चीज़ खाते होंगे।’

बल्लू—‘अम्माँ हम गरम गरम पूरी खाके बनेंगे और लूब पुरियाँ खाएँगे।’

मुन्—“हम सिपाही बनेंगे, सब को पकड़ पकड़ कर जेलखाने भेज करेगे।’

बल्लू—“हम तुम को पुरियाँ नहीं देंगे।”

मुन्—“हम तुम को रूर पीटेंगे और पकड़ कर धाने में बन्द कर देंगे।”

बल्लू—“हम हम तुम को ।”

बल्लू की समझ में नहीं आया कि क्या कहे। उसने मुन्नी को मुँह चिदा दिया। इस पर मुन्नी ने एक घूँसा रसीद किया। मौला ने दोनों को डाटा—“अभागो आज ही लूब हँस-हँस कर खायो है। आज तो खुप रहो !”

दानों खुप हो गये। मौला बोला—‘खुदा अब रोज़ पेट भर दे !’

जब ये लोग सोने लगे तो बल्लू बोला—‘अम्माँ कहानी कहे।’

“हाँ हाँ, शरदज्ञादेवाली।’ लड़कियाँ बोलीं।

मुन्नी का मन भी आज प्रसन्न था। वह कहने लगी—“एक था राजा, एक था रानी ”

—हयातुवला अन्तारी

## मुहल्ला

“मैं क्या परवाह करता हूँ मुहल्ले वालों की !”—मज़ूर ने गुस्से में कहा—“आखिर वह हमारा अपना मुहल्ला है और एक न एक दिन हमें वहाँ जाना ही होगा ।”

जवाब में सुरैया ने तिर मुका दिया और चुपचाप खड़ी रही ।

लेकिन वह कहने पर भी वह सुरैया को मुहल्ले में ले जाने में घबराता था । चूँकि वह मुहल्ले का लड़की न था थोर चौगान में खेल खेल कर और खिड़की में चौकी पर बैठ कर मुहल्लेवालों की बातें सुन-सुन कर जवान न हुई था । मुहल्ले की लड़कियाँ ! गोरे चिट्टे बदनो से भरी हुई चौकियाँ, चोरी चोरी ताकने वाला सादा नज़रें, चढ़े हुए पायच ! मज़ूर ने भुर भुरी ली । उसकी दृष्टि सामने सुरैया पर जा पड़ा, जैसे हवा में एक छोटा, विन्दु रगदार सा जाला तना हुआ था । आश्चर्य भरी आँखें, पतले और मुके हुए घोंठ, जर्न और उदास सौंदर्य, पतला सा सुराहादार शरार माना किता ज़द बोतल में जान पड़ गई हो या ‘मुग्धका गालिब’ की छोई तस्वीर चुपड़ में निकल कर उसके सामने आ खड़ी हुई हो । हाँ, मुहल्ले की लड़कियों ने कितनी मित्र थी वह ! और फिर शादा में उसने मुहल्लेवालों की रज़ामन्दी लेना तो दूर, उन्हें बुलावा तक न भेजा था । मज़ूर की बहिन ने आ कर चट मँगनी पट व्याह कर दिया था । यों मुहल्ले में एक नई लड़का ला कर बसाना, पत्नी के चुनाव में उनकी बिल्कुल उपेक्षा करना, मानो वे मुहल्लेवाले ही न हों ! मुहल्लेवालों के लिये यह एक अनसुना सी बात थी । इसके अतिरिक्त अपनी सर्गि चाचा, जो मुहल्ले में सब का प्रधान थीं, उनकी धान को इस प्रकार रद्द कर दे ! मुहल्ले में ऐसा कौन व्यक्ति था, जो यह न जानता हो कि चाची बातों-ही बातों में कई बार अपनी बटी जुबैदा को मज़ूर के नाम का चुका थीं । इहाँ बातों के कारण वह सुरैया को मुहल्ले में ले जाने से घबराता था । लेकिन बेचारा जाचार था । दा महाने का हुर्दा कहाँ बिताता ? इसलिये उन्हें मुहल्ले में थाना ही पड़ा और वे दानों वहाँ आ गये ।

मुहल्ले के बीच में एक चौगान था, जिसमें से तीन चार सँदरा अँधेरी गलियाँ बह जाती हुई, दूधर-दूधर की निकल गई थी । चौगान के चारा छोड़

काली काली झुकी हुई तान मज़िली दीवारें घेरा ढाले खड़ी थीं। शताब्दियों के बोझ से वे झुक गई थीं और यहाँ वहाँ कई एक जगह से हूँटें निकल आई थीं, लेकिन वह झुकव और छेद दाघ काज सह इन दीवारों के अंश हो चुके थे। चौगान में कुछ छोटी छोटी मेहराबदार खिड़कियाँ खुलती थीं, जिनपर मैजे से टूट-भूट सरकण्डे लटक रहे थे जो शायद किसी समय में धिकें रही हों। चौगान के बीच में एक कुबड़ा कुबड़ी लाजटोन मुका मुका खड़ी थी और रात का तिमटिमा कर अंधकार को भीर भा स्पष्ट किया करता। दाईं ओर मुहल्ले की मसजिद का सिलेटी गुम्बद उभरा हुआ था, जो क्यूतुरों और चमगादड़ों की आवाज़ों को खड़ा कर मुहल्ले में फैलाया करता।

दिन के समय मुहल्ले-वालियों अपना अपना काम ले कर चौगान में आ बैठतीं। घरघों की रोयें रोयें में कोई न कोई बात खिड़ जाती। विवाह धामारी या मौत की खान या कोई पुरानी शिकायत किसी के हृदय के धारों को हरा कर देती। एक हाथ चमका चमका कर कुछ कहती, दूसरा नाक पर खँगुली रख कर सुनती। कोई बाध में बोल उठता। उस समय बाघी का कड़ा स्वर इन दीवारों से टकरा कर गुम्बद में साये हुए क्यूतुरों और चमगादड़ों को जगा देता। वे घात्रने लगते। घरघों की मद्धिम गुनगुनाहट में वह कड़े और भयानक स्वर सुन कर यों महसूस होता, मानो किसी निर्जन खण्डहर में ऊँच ऊँच खम्भे भूता का तरह चल फिर रहे हों।

खिड़कियों में चौकियों पर बैंग जवान लड़कियाँ ध्यान से उनकी बातें सुनती और कभी-कभी वहाँ से किया न किसी बात पर टाकता रहतीं। चौगान में वच्चे खेळते रहते और थक जाते, तो किया देहलाज़ पर बैठ कर इनका धारें सुनते और आपस में कुछ न कुछ कह कर चारों चोरा इनकी चिदात। कभी कभी किसी मुहल्ले वाले का खेतार सुनाई देता और काई पुरूप सिर मुचाये दूध पॉव चौगान से निकल जाना। या हा दिन घान पाता, साज बोल जाते; चौगान में खेळने वाला लड़कियाँ जवान हा कर खिड़का में चौकी पर जा बैठतीं और मुहल्ले वालों का धारें सुनन लग जातीं। बडुएँ पुरानी हो कर नाचे चौगान में उतर आतीं। लड़के जवान हो कर खेतारना और खिर मुका कर दूध पॉव खलना साख कर अन्दर घरों में जा बैठते। छुटे छुटे मच्चे बसिण घसिठ कर देहलाज़ों से उतर आते और चौगान में जा पहुँचते। इनका काला काली दीवारों में एक आध झुकाव और पड़ जाता और यह और भा काली हो कर उस कुबड़ी लाजटोन को कुछ और थपी कर देतीं। मसजिद के गुम्बद में खे

मह-नई, कदा आवाज़ों गूँजतीं लेकिन मुहल्ले के जीवन में कोई अन्तर न पड़ता। यों ही दिन बीत जाते, साल बात जाते।

मुहल्लेवालों ने बड़े तपाक से उनका स्वागत किया। चाची ने दौड़ कर देहलीज पर तल टपकाया और सुरैया को गोद में उठा कर ऊपर ले गई, और मुहल्लेवालों ने बड़ कर उमके चारों ओर घा डाल लिया। चौगान में बरबे शोर मचान लगे। चाची बाली—“बिरिमल्लाह, दुलहिन अपने घर आईं!”

मुहल्ले के बीच जाति क लोग पारी पारी सलाम करने को आये। लेकिन इन बातों के होते हुए भी म-ज़ूर दो-एक दिन परेशान-सा रहा। फिर धीरे धीरे घर की काली काला दीवारों ने उसके चारों ओर नाच कर, चरन्वाँ ने गा गा कर और चौगान की बुबकी लालटेन ने मुस्करा मुस्करा कर न जाने उसके कान में क्या कह दिया। उसकी गदन मुक गई और वह अ-दर-बाहर दबे पाँव यों चलने फिरने के लगा, मानो किसी बतक को कोई तालाब मिल गया हो।

सुरैया को तो चाची ने इतना अधिक अपनाया कि वह सदम-सी गई। उसके हर इदम पर ‘बिरिमल्लाह’ और छीक पर ‘अल्लइन्द्रोल्लिह्लाह’ पड़ती और बात बात पर बोल उठता—“क्यों बेटी, प्रैर तो है, क्या हुआ तुम्हें? शय्या की तबीयत प्रराच है क्या?” या मुहल्लेवालों को चारों ओर घेर रहते, कहती—“अय है! तुमने बेचारी को घेर कर परेशान कर रक्षा है। ज़रा हवा तो लगने दो। लड़की की तबीयत अच्छी नहीं। देखो, ज़रा-सा मुँह निकल आया है, सूख कर काँटा हो रहा है।” फिर वह गुस्से में हाथ घला कर कहती—“तोषा, इन जवान लड़कों का तो कुछ पछो हा नहीं बस ब्याह करने ही के भूखे होते हैं। देखो तो मामी, एक हा साल में लड़का को क्या कर दिया है। मुँह हृदय की तरह पीजा हो गया है और चलता है बहिन, तो मरके लगते हैं। अय तो आप आराम से अ-दर बैठा रहता है। न दवा, न दारू, अल्लाह करे मेरी बच्ची को आराम हो जाय, तोषा! माँ का दिल भी कैसा होता है, हाँ! आग्रिअर मेरे लिये तो अपना ही बेटा है न, और जैसी मरी कूबेदा, धैली ही दुलहिन!”

चाची के मुँह से यह बात सुन कर बड़े एक ने हाँ में हाँ मिलाई। एक बोली—“बेचारा को चार दिन भी दुलहिन बन कर बैठना नसाब न हुआ। नर्नद ने तो चार कलमे पढ़ा कर मुँह खाल कर लिया और अपने मिर्चों के पास जा बैठी।”



दूसरा कहने लगा—“आत मजूर की माँ जिन्दा होना, तो देखत कि कैये जाइ से अपनी अपनी बहू को !”

तामरा ने कहा— मैं कहता हूँ चाचा, बम घरनी जुबेदा की उम्र के बराबर हो गई; पर उसे देखो तो इस 'पर' में है। जरा सुने तो मुँह बनार की शर्माता है, लेकिन दुग्दिन ।”

चाचा बात काट कर बाली—“त बहिन पना बान न कहे। असाह चाहेया तो बिअकृत राजा हा जायेगी। मैं तो मुबद शाम यहा दुघायें मौतता हूँ। मजूर की बहिन चाह जाने या न जाने पर मुझे इनसे बड़ कर और कीन प्यारा है ? क्यों मामा तू अगने इमान स कहियो, है न यही बात ।”

सुरैया के लिये वह मुझा बड़ काजा काजा दाशरें और उन औरतों की बातें अजाब सी थीं। उनके झुंझु में वह और भा परेशान हो जाती और उसके मजिन मुल पर इराना छा जाता। उस समय उसे देख कर यों महसूस होता, मानो कोई गुप्त बात सच सागरण में प्रकट कर दा गई हा।

मजूर ने अन्दर बैठे हुए सब मुझाते बालियों—विशेष कर चाची की बातें सुनी और बहुत अमश दुघा कि वह सुरैया को अरना रहा थी। चाची तो बिलकुल उम पर जान दनी थी। यद्यपि उसका विचार था कि चाची उनसे सीधे मुँह बात मो न करेगी। आखिर उन्हें दुख तो हुआ हागा लेकिन कैसी अशदा चाची थी। उन्होंने वह बात नताई हा न थी उसे। मजूर दिज ही-दिज में अपन पड़ये मरहों पर पद्यता रहा था। उसका जी चाइता था कि जा कर चाचा के पाँव पड़ जाये और उनस अमा माँग छ। उसे सुरैया के विषय में एक विरवास सा हो गया। यद्यपि इसके अतिरिक्त चाची की बात ने उस पर और काई असर न किया। बामारी के बाँ में सुन कर वह मुझकर पदा— औरत है न ! छोगेना यान पर चबरा जाता है। शायद सुरैया सरर का परेशाना स उरास सी दिखता हो।

लेकिन वस दिन पर चाची सुरैया के लिये मजूर से लड़ी, तो उसे महसूस होना शुरू हुआ कि सचमुच सुरैया को किसा डाकर की दिखाना चाहिय। चाचा कहने लगी— यह भा काई दग है वेग कि पराई वेग को घर का कर उसका यह हाज कर दो। उसे देखो तो हवरो का तरह पीली हो रही है। बम इसालिये व्याज कर जाये ये उसे ? अचना मतलब निकल गया तो चाचा गई भाइ में। पर मैं ता एवा न होने दूँगी। आखिर वह भी किसी की घटा है। उसका माँ का भा दिज है। उसे कितना दुख हागा, और फिर न

दया न दारू ! मेरी अपनी जुबैदा है उसी की उम्र की होगी, किन्तु देखो, तो कैसी जवान निकली है । और इन मुहल्लेवालों का नहीं जानते तुम ? वे तो पहले ही हम बात को भूखी बैठी हैं । जयाने केंची सो चकनी हैं । खुरान कर, कोई ऐसा बैसी जात हो गई, तो कहेंगा, आखिर, पराह लड़की या न, इनको क्या पड़ा थी कि उसकी क्रिक्र रखत ? मर गई, चलो छुटी हुई, जान छूट गई । पर बेटा, मुझमें तो यह सुना न जायगा । अगर मेरे बेटे हो, तो अब भी चेता, भ्रमा हाथ से कुछ नहीं गया । हाँ, और उसे इस हालत में काम काज तो न करने दूँगा, सुना तुमने ? मुझे बिराना में अपनी नाक नहीं कन्वानो है । जब तक वह तदुरस्त नहीं होती, जुबैदा यहाँ आ कर रहेगी । आखिर तुम्हारी बहिन हा है न ! घर का काम भा कर दिया करेगी और दुखिहन का स्रयाल भा रयेगी ।”

उस दिन वह दिन भर बेचैन फिक्ता रहा । बार बार सुरैया की ओर देखता और जाने क्या सोचता । फिर सुरैया को उठते बैन्त देख कर एक टपटा सी आह भर कर कइता—“ज्यादा चलो फिगो नहीं । यहाँ भी आराम न किया तुमने, तो होगा क्या ?”

उस समय सुरैया का उदाम चेहरा और भी उदास हो जाता और वह आह भर कर लेट जाती । रात को जब वह सो गई तो मन्ज़ूर बठ कर सहन में फिरता रहा, मानो कुछ खो बैंग हो । चाँदना में सुरैया का रंग और भा पीला दिख ई देता और वह बघों की तरह चारपाई पर गठरी बना पड़ी थी । ‘जाने क्या हुआ है इस ?’ उसने गौर स देखा और उसे चाची का वह बात याद आ गई—‘यह शहर की लड़कियाँ ! बस, देखते रहो इन्हें ! हाथ खगाया और छुईं मुईं हो गई !’ वास्तव में चाची सच कहती थी । एक हा साल में कितनी कमज़ार हो गई है, अब क्या होगा ?—किसी विचार पर उमने एक भुआकुरी का और निगाहें फेर लीं । दूसरी चारपाई पर जुबैदा पड़ा थी । गुलाया गुलायी यदन स चारपाई भरी हुई थी । शखवार के पाँचचे चढ़े हुए थे और क्रमीज का गला सुला था । लाहौल विलाश्रुवत ! कह कर बठ और इधर उधर घूमने लगा । चाची न होती, तो मुझे इसकी यामारी का पता ही न चलता । उसने सोचा—‘मैं भला क्या जानूँ क्या होती है इनका यामारियाँ ? येचारी इलाज के बिना हा तोधा है !’ उसन त्विकी से नाच भौंका । चौगान में कोई बुदिया मिर पर दिया रन्व नाच रही था । चारों ओर फाली काजा गदरी हायारे हाथों में हाथ दिये घूम रहा थी । सुरैया ! सुरैया ! कोई काजा सी चाज चाँज थील

— चारों ओर कदकदा रहा थी ।

जुबैदा ने आ कर घर का सारा काम सँभाल लिया था। यदि सुरैया उसका हाथ बँटाने के लिये कुछ करन लगती तो वह चर धौल डटती—“न बहिन, अम्माँ को मालूम हो गया, तो मैं उसे क्या जवाब दूँगा।” या तो सुरैया सार दिन लोग रहती या कमा उरुना कर कोरे पर बंद जाता। उस समय अचा नक जुबैदा को ठम आलमारा स कोई बरतन निकालन का ज़रूरत पड़ जाती जिसके निकट म जूर कुरसा पर बैठा करता था। उसे देख कर मजूर साच में पढ़ जाता—‘कैसा अच्चा स्वास्थ्य है ! बस, स्वास्थ्य क सिवा जीवन में और है हा क्या ?’ फिर उसे ग्याल आता कि वह टकटकी बाँध कर उसे देख रहा है और वह घबरा कर अरिँ भुना जाता।

उस समय जुबैदा मुस्करा कर उसका तरफ़ दगती। उसका पल्लू या उसका हाथ, या बदन का कोई हिस्सा सयोगवश उससे छू जाता। सुगधि की एक हल्की-सी लपट उस घर लेती। जुबैदा तो बरतन ले कर, मुब कर, मुस्करा कर खड़ी जाता लेकिन वह देर तक अपने विचारों में खोया रहता या निरव व्यायाम करने का हृद्य करता। अगर सुरैया आ जाता, तो इसको देख कर उसकी आँखा में दया झलकता और वह मन हो-मन सोचता कि अगर सुरैया का स्वास्थ्य भी अच्चा होता अगर उसका शरीर भी भरा भरा होता ! मजूर की नज़र में सुरैया के चेहरे-नले एक थीर ही गोरा-गारा, भरा हुआ शरार आ जाता। उन पतली पतली बाँहों की जगह दो भरी हुई बाँहें उसकी तरफ़ उठतीं। फिर इसका आँख खुल जाता और वह एक आइ भर कर कहता—  
“सुरैया, तुम ज़्यादा चला फिरा न करो। हाँ, और वह दवाई खाई था ?”

जब स ये मुहल्ले में आये थे, मुहल्लेवालिचा को जैले किसी और बात में दिलचस्पी ही न रही थी। चौगान में बैठ कोई-न-कोई सुरैया का बात छेद देती और नहीं तो चाचा स्वयं कुछ न कुछ कह देता। और जब चाची आप कोई या न छेद दें, तो किसका मजाज था कि उनका हाँ में हाँ न मिलाय या उनका बात काट कर कोई और बात छेदें।

वह मजूर हा का चाची न थी, बल्कि सारा मुहल्ला उनको चाची कह कर बुलाता। यहाँ तक कि मुहल्ले के बड़े-बूढ़े भी चाचा कहते। कोई भगदा हो मुख हो या दु ख हर मामला चाची के सामने पदा किया जाता था। चाचा आँठ पर शँगुला रख कर गौर से सुनती रहती थीर फिर हाथ खला चला कर अपना निरव सुनाती थीर अर्य सब औरतें चुपचाप रंगी सुनता या कोई साच में बोल कर उनकी हाँ में हाँ मिलाती जाती। यात्री रहे मुहल्लेवाले, उन्हें

तो ऐसी बातों से कोई मतलब ही न था। वे समझते थे कि घरों की बातें औरतें ही जानती हैं और औरतों के मामले में बस उनका यही काम था कि खँपार कर, मिर झुका लें और दूधे पाँव पास से निकल जायें या कमा कर लायें, तो उनका मोली में डाल दें या आवश्यकतानुसार लड़ाई में या बाढ़ पर किसी कठिनाई के समय उन्हें जुता कर पूछें कि ऐसी परिस्थिति में उन्हें क्या करना चाहिये और उनके बड़े क्या करते थे ?

हाँ, तो चाची की बात को मूठ कहना कोई सरल काम न था और फिर जब चाची स्वयं सुरैया से इनकी दिलचस्पी लेतीं, तो फिर भला, वे कर ही क्या सकती थीं। कई एक का विचार था कि चाची मजूर को मुँह तक न लगायेंगी। उसन जो ब्यवहार चाची से किया था, वह किसीसे छिपा हुआ न था। सभी जानते थे कि वह शुरू से ही मजूर को अपना भावा दामाद समझती थीं। लेकिन यह होते हुए भी मजूर का बहिन ने उसे यों निकाब कर रख दिया, जैसे दूध का मक्खी। इन बातों के होते हुए भी जब वे चाची की बातें सुनतीं और देखतीं कि वह सुरैया के नाम पर बिरिमझाह पढ़ती हैं, तो मन ही मन उनकी प्रशंसा करतीं।

“तू नहीं जानती भाभी !” चाची ने रहस्यपूर्ण ढंग से कहा—“ये आज्ञा-कल के नीजवान भला औरता की बामारियों को क्या जानें ? ये तो बस, कधी पट्टा करके टहलना ही जानते हैं। बस, जाने दे तू इस बात को !” लेकिन वह बात को जान कैसे देतीं ? वह क्या जानती न थीं कि जब चाची ‘जाने दे इस बात को’ कहें, तो उसे जारी रखना अत्यन्त आवश्यक हो जाता है।

भाभी बोली—“ले चाची, मर्दों को क्या पढ़ा है कि यह जानें ? उनकी बला से एक न सही, दूसरी सही। बीबियों का क्या काज है ?”

“न भाभा यह न कहा !” चाची ने ज़बान थोड़ा में दबा कर कहा—“अज्ञाह न कर, हमारे मुँह से ऐसी बात निकले। मर्दों का क्या कुसूर ! ज़ुद अज्ञाह मियों ने चार करन की इजाज़त दी है, हसीजिये न कि एक बामार ही जाय या बाल यचा न हो। आखिर हज़ार बातें होती हैं। शरीफत (धर्म सम्बन्धी कानून) का धान पर टोका पिपणी करना, तोबा मेरी हज़ार बार तोबा !” उन्होंने कानों पर हाथ लगा कर कहा।

“लेकिन चाची दुल्हिन को है क्या ?” किसी ने पूछा।

चाची रहस्यमय ढंग से कहने लगीं—“वही अपना बड़ी वाली बीमारी। देखा नहीं, रंग हल्दी की तरह पीला होता जा रहा है। यह भा तो इसी

तरह" उन्होंने यह कहते हुए अँगुली उठाई—'सूय कर काँटा हो गइ थी। छ महीने मुश्किल से खात होंगे क्यों माभा ? पर सोचा मेरा ! अज्ञाह अपनी महारानी रखने ! कौन सा बीमारी है जिसका इलाज नहीं। लेकिन अब तु यहाँ जा कर उससे न कह देना। रोगी से ऐसी बात दिना कर रखते हैं।' अदर मजूर न मुता, तो वह घणों गुम गुम बैग, न जाने क्या सोचता रहा।

यद्यपि मुहल्लेवाजियाँ सुरैया से वह बात न कहती थीं, फिर भी थाप जानते हैं जब मुहल्ले में कोई बामार हो तो दिन में एक बार तो उसका तबियत का हाल जानने के लिये जाना ही पड़ता है और यह भी पूछना ही पड़ता है कि ये ? अब क्या हाल है ? और अपना हादिक सदानुमूति प्रकट करने के लिये—'देखो, ता मुँह कितना उतर गया है।' कहना अनिवाय हो जाता है। मुहल्लेवाजियाँ अपने कक्षय के पालन में सुस्ती नहीं करती थीं। दिन भर घर में खाना जाना लगा ही रहता। सुरैया तो चुपचाप लेटी रहती लेकिन ज़रूरत हर खाने-जाने वाली के सवाल का जवाब देती। या बहुधा चाचा आप बैठी होती और कोई पूछने आती तो वह चट बोल उठती—'अभी तो कुछ अर्धी नहीं हुई लेकिन अज्ञाह अपनी मेहरबानी करगा ! उसका कृपा से मायूस होना सब से बड़ा पाप है। आतिर होते होते हा आराम होगा।'

अन्तर मजूर या तो चाची का बातें सुनता रहता या अपना स्वाम्य गोक करने के लिये कोई न कोई व्यायाम करता और या कितना भरे हुए शरीर क निवट होने का कामना करता। सुरैया का उदास सँदिय उसकी निगाह में किसी बामारी के लक्षण के अतिरिक्त और कुछ न रहा था। यों ही दिन बातते गये। यहाँ तक कि मजूर की तान चार दिन सुट्टियों बाकी रह गई।

चाचा को चुपचाप धैरे हुए देख कर मजूर ने पूछा—'किस क्रिक म हो चाचा ?'

चाची ने एक आह भरी। कहने लगी—'वेग, मुझे कैसा क्रिक ? बस, यहाँ सोच रहा हूँ कि अब क्या होगा ?'

'क्या होगा ? मजूर ने हैराना से पूछा।

चाचा बोली—'दुखिन को आराम हो जाना तो मुझे क्रिक न रहती। यहाँ गुम जाने सारे दिन कहीं फिरते रहते होंगे। खुदा की मार दफ़र का काम भी तो प्यम होने में नहीं आता होगा। और घर में वह अकेली बैठा रह करेगा, इतना भी नहीं कि किसीस बात ही करे। ऐसे भरे घर से यहाँ उजाड़

में जा पड़ना, मुझे तो इसका खयाल आते ही होल उठने लगनी है। खुदा करे तुम्हारी तरफकी हो जाय, तो नौकरानी ही रख लेत। पर चालीस रुपये में आज कल क्या हाता है? फिर परदेश का मामला ठहरा और आजकल का जमाना। मैं तो जुबैदा को साथ हा भेज देता, पर तुम जानती हा, मुझे खालियों की गज्र भर की जमान हाती है, जान क्या कहती फिरें। तुम्हारे घर में कोई बधावाला होता, तो भी हर्ज नहीं था। कहते हैं, अबेला एक और दो ग्यारह, पर बच्चे की इविश तो उम्र भर रहगा। पर अब इस कामारी में कहां? घरकत को भी यही बामारी थी न, सारा उम्र बच्चे की तरमती रही। अब उस घर का नाम हो बाग्री न रहा। मुझे तो यह दुख घाये जाता है, फिर खयाल आता है, यह कह कर वे रुक गई, फिर बाली—“बलो, छोड़ो, इस बात को, जो अल्लाह को मजूर होगा, वही हागा। रिजूल जिफ्र करना है।”

“तुम बात तो करा चाची।” मजूर बोला।

“बात क्या करूं, माँ का दिल तो तुम जानते ही हो, खालिर मैं तुम्हारी माँ का जगह हुई न। सोचती हूँ और कुछ नहीं तो बच हा के लिये दूसरी शादी कर लेंते। कम से कम घर का नाम ता रहता। इसके अलावा वह तुम्हारी पत्नी का भी खयाल रखता। रोगा को जितनी भी सेवा हो, कम है बटा।”

“बात तो ठीक है चाची।” मजूर ने सिर पर हाथ फेरते हुये कहा—“मुझे सोच खेने दो चाची।”

“बल पगला।” चाची बोली—व्यर्थ सोच साच कर अपने आपको हल कान करना। यह याद रख कि जो होना है, वह न तर बस में है, न मेरे बस में। जो अल्लाह को होगा, वही मजूर होगा। वैसे अगर यहा बात ठहर गई तो बेग, तू साच तो सही, यह कौन सी माँ होगा जो अपनी बेगी को सौत के भाइ में लौक दे? किसका जी चाहता है? मैंने मान लिया कि अल्लाह रये, तेरो पीया मिजाज की बड़ी अरुणा है, पर लोग तो सौत के साथे स भी दूर भागते हैं। हाँ, कोई अपना रिश्तेदार गवारा कर ले ता कर ले, विरादरी के लोग कहां ऐसा खलिदान करने लगे—खलिदान ही है न यह! बयों यग तू तो आप सदाना है। फिर वह मुहल्ले का खदका भी न हुई। मैं तो बस, तेरी ही जिम्मे में पुल रहा हूँ।” चाचा न एक आह मारी—“हमाग स, मजूर, जी चाहता है कि जैसे भा हो, मुझे सुखी देखूँ। अगर मुझे जरूरत हो, तो मैं अपने कलेने की बोटा भी काट कर दे दूँ।”

रात को मञ्जूर को नींद न आता थी। 'कोई बधा न होगा!' उसके कानों में गूँघटा और मधुमा उभर वे होयारों और मछान एक स्पर्श मा पीताव दिखाने परत मानो उब घर के प्राय विह्वल चुके हों और अब वह घूने का एक निर्विकार न रह गया हो। यह सिद्धका में जा बैठा। नाथ चौगान इस प्रकार मुँह खाल देगा या मानो कोई गइया गुफा हो। उमने अनुभव किया कि वह उम गुफा में गिरा जा रहा है—गिरा जा रहा है। यह उठ बैग और इधर अधर विरम लगता। जुबैदा का सख्तेद सख्तेद घहरा और बाँह लँपेरे में भिन्न भिन्ना रहा थी। मुरैया तो सादर छोड़ कर पड़ी हुई था। यह मुरैया की बाँधों पर जा बैग। जुबैदा की चारपाई पर कोई भरे हुए शरीर का दबा घबने हाथ उठा कर रो रहा था—“हाँ हाँ वा हाँ।” गुग्गद ने कोई कतूरर शिवाय — गुदुगुँ।’ उसने उस ओर दखा। गुग्गद पर कतूररों का एक जोड़ा बैठा हुआ दिखाने दे रहा था। फिर उसका निगाह जुबैदा पर जा पड़ा। ठीक उसी समय जुबैदा न करण ली और उसकी बाँह मञ्जूर की गोद में धा गिरी। गोरो-गोरी गम गम बाँह। उमका झॉल जाने क्यों चमक उठी। उसके झोंठ उस बाँह पर मुके किर यह रुक गया और उठ कर कोम पौंद कर चाची के पास चला गया। उस समय बड़ा कोई ख्याद का समय डोगा। चाचा बैठी इज़ारबन्द चुन रहा थी—“क्यों और तो है?” यह उसे दख कर घबरा कर बोली।

“नहीं, बात तो कोई नहीं।” मञ्जूर ने क्लिक्क कर जबाब दिया—“वैसे ही चाची, मुझे तुमने कुछ कहना है।”

“हाँ हाँ, शौख स कहा।” चाची बोली।

“मेरा मतलब है।” उसने कहा—“तुम जानता हा हो चाचा, इस हालत में मुरैया को साथ कैसे ले जा सकता हूँ; लेकिन साथ न ले जाऊँ, तो मुझे रोटी की बहुत तकल्लार दोगा।”

“हाँ, बग।” चाचा कहने लगी—“बाज़ार की रोटी किय काम की, उससे तो नूखा रहना अच्छा है।”

‘तो चाचा, मेरा मतलब है, अगर तुम धुरा न मानो तो ’’

‘ले पागल, मैं क्या तेरी बात को धुरा मान सकता हूँ! तू जो जी में धाये कह।’

‘मेरा मतलब है।’ मजूर ने फिर दोहराया—“अगर चाची तुम मुझे अपना गुलामी म ” वह कहते रहते रुक गया। चाची भी यों खुप बैठी रहीं, जैसे किसी सोच में पड़ गई हों।

‘तुम्हारा मतलब जुर्नैदा के रिश्ते से है?’ चाचा पूछने लगीं।

“चाचा, मैं जिन्दगी भर तुम्हारा पहसान मानूँगा,” मजूर ने मुका मुकी शौखों से कहा।

“ब्रैर, पहसान को तो खू जाने द,” चाची योजीं—“मुझे तो शायद इस बात में भी कोई पतराज न होता था। फिर तुमसे बढ़ कर मुझे कौन प्यारा है येग, पर मुहल्लेवाले क्या कहेंगे?”

“मुहल्लेवाले!” मजूर ने सिर उठा कर गुस्से में कहा—“मुहल्लेवाले!” वह धृणा में बोला और हँस पड़ा—“मुहल्लेवालों की मैं क्या परवाह करता हूँ, सुना तुमने चाची?”

“मुहल्लेवाले!” मसजिद का गुम्बद चित्ता उग। नीचे चौगान में कोई बूझी जादूगरनी सिर पर दिया रक्ते किसी चरले की लय पर नाच रही थी। उसके चारों ओर काला काली मुका हुई दीवाँ हाथ में हाथ ढाले भूम रही थी। कोठे पर अंधेरे में चाची के सकेद सकेद दौत चमक रहे थे।

—श्री मुमताज मुश्री



## नयना

शहर के घूँटों के तटनों में लौह के ताल चढ़े हुये थे इसलिये वह कितना बगल में दबाय, बहुत धारे धारे ऊँच उठता हुआ सादिमों पर चढ़ रहा था, ताकि दूसरे कमरों तक शोर न पहुँचने पाये ।

आज फिर उसकी देर हो चुकी थी ।

मौजाना बजास में जेवर दे रहे थे । कठने को तो मौजाना थे मगर दाढ़ी-भूँड़ साफ़, अच्छे कान गायब, चूहादार पायजामा नदारत बिलकुल अब टु-डेड, तेज़ क़ैचा का तरद खलती हुई ज़बान ! इसलिये पहिले दा आगरा को हम छोड़ दत हैं । 'नज़ीर' यशक करने ज़माने से कहीं आगे था, वह सदा मानो में पहिला हिन्दुस्तानी शायर था । मगर उस वक्त वदू सिवाय हिन्दा, फ़ारसी और अरबी अदब (साहित्य) के किछा अदब से मुनअस्मिर ( प्रभावित ) न हुई थी । इसलिये 'नज़ीर' को भा हमें छोड़ दना पड़ेगा । दीरेमदाद ( वक्तमान ) का साजारा, शायरे एशिया, एकनाल था

अएतर चुपके से बजास में दाख़िल हुआ, और सब से पिछला सीट पर ठबक कर बैठ गया ।

हुथा यह कि रास्त में जय वह चमारों के मुहल्ले में से गुज़र रहा था, तो उसने वहाँ एक बड़ा मामा देखा । वह भा रुक गया । पूछन पर मालूम हुआ कि एक स्त्री मरा पड़ा है—कूड़े करकू के ढेर पर एक मृत स्त्री का लाश एक मृत शिशु सहित रून में लपपय पड़ा है ।

यह नवयुवता कुम्हारिन नवाना के हाथों त्रिश हो कर एक ठेसा अघराध कर बैठा कि आज निरसहाय और निराधार वह साधारण रास्त पर एणियों रगड़-रगड़ कर प्राण देने पर बाध्य हो गई । जवानी में अधिक अपने सरल स्वभाव, चन्द टकों का लालच और एक सभ्य वायू की सभ्यता का शिकार था । अविवाहित खड़की के पेठ में गभ के चिह्न देख कर विरादरी वाला ने उसका विरादरी स निकाल दिया । वह रोई खीखी, चिल्लाई फिर पागल हो गई । और आन्वीर में यह उसके अरप जीवन का अन्तिम दृश्य था ।

अन्तर कालेज की ओर चल दिया। लोग घड़घड़ा रहे थे—“पापिन, कल-मुँही कलकिनी !”

कालेज बिल्कुल दरिया के किनारे स्थित था। जब अन्तर कालेज के पाठक के अन्दर दाखिल हुआ, तो बड़ की घना छाँट के नाचे नयना एक बकरा के कान पकड़े ठंडा चौदना रात की भौंति मौन खड़ी थी।

वह पीले रंग का एक लहंगा, धारीदार कुर्ती पहिने हुये थी। अन्तर को एकदम अपने सामने देख कर यह शमा गई। इस चित्तरूपक उत्सुकता ने उस और भा सुन्दर बना दिया। आज रात का अन्तर से मिनने का वादा था।

हाई स्कूल पास कर के जब अन्तर ने कालेज में प्रवेश किया, तो उसने देखा कि कालेज में नयना ही की धूम थी वह धोजन था। हम कथा कहानियों में कितना ऐसी मास्किन का क्रिस्ता, जिसके प्रेम में कोई राजकुमार पागल हो जाता है, पढ़ कर हँस देते हैं। चण्डादास का रामी के साथ प्रेम हमारे होंठों पर एक व्यंग्यमय मुस्कान पैदा कर देता है। लेकिन काश ! हम पहिले एक नज़र नयना को देख कर प्रतवा देत !

उसका असला नाम शाहज़ादा था। मगर नयना शायद उसे उसकी थाली के कारण कहा जाता था। कटोरा सी छाँटें छलकते हुए दो कंगोरे, भौंई थयधिक घनी और लम्बी, हतनी कि उनके बोझ से पपोटे सदा मुके रहते होंठों पर नमी सी और निचला होंठ दायाँ ओर से ज़रा भा नीचे की ओर मुका हुआ, बाईं छाँट के नीचे गाल के उभार पर नन्हा सा, काला तिल। उसका रंग खाल-सफ़ेद न था, बस मन्दल की तरह—छाँटें ऐसी कि हर समय रो पड़ने पर आमादा; लेकिन छाँटु पी लेने पर भा मजबूर, होंठ ऐसे कि कुछ कह देने के लिये बचैन, लेकिन कुछ न कहने में भी मसलहत समझें।

उसका माँ कहता—“हमारी बिटिया को तो नवाबज़ादी होना चाहिये था !” नयना भी यह बात अनुभव करती था। कल्लू मुचू, पुनुवा जैसे धोरी नव-युवकों को यह मुँह न लग ती था।

सारा कालेज उसके प्रेम का दम भरता था। घोषियों के घर कालेज के पास ही से नदी के किनारे किनारे फेजे हुए थे। क्रिकेट का खेल होते समय अनायास गेंद उड़ल कर नयना के अहाते में जा गिरता। कोई नौजवान लड़का जाता और दरवाज़े पर खड़ा हो कर पूछता—“क्या मैं गेंद उठा सकता हूँ ?” नयना चौंक कर चूदरी से सिर ढॉप मुँह फेर लेती। खाली घंटा में लड़के टोखियों में खड़े नयना के घर दख देख कर आहँ भरते रहते और

कहत कि कारा ! नयना स्वयं अपने हाथ से उनके कपड़े धोने पर थामादा हो, तो वे एक दिन प्रा कपड़ के हिसाब से पुलाई शुदान को तैयार हैं !

जमाना बात-चात के अतिरिक्त किसी प्रकार का कोई भी हरकत करने की किसी लड़के में हिम्मत नहीं थी। एक बार एक मनचला नवयुवक असम्पत्ता का सामा पार कर गया था तो नयना ने प्रियपत्न से शिकायत कर दी थी और प्रियपत्न साहब ने, जा इस विषय में बड़े कड़ थे उस लड़के को कालेज में निकाल दिया था। इसलिय अब नयना लड़कों के लिये सिर्फ एक सुन्दर स्वप्न बन कर रह गई थी।

मला अर्द्ध पर क्या मनुष्य न था कि नयना को देख कर उसका जो न मचलता ! वह स्वयं सुन्दर था—गौर वण बड़ी बढ़ा आँसू ममे तक भीगी भागा न था। मूँछों की जगह रोँठें थे। ये रोँठें, जो धू महाने के घस्ते के मुँह पर भी हाते हैं। पद्म या सोलह वर्ष की आयु होगी। यानी लगभग नयना के बराबर या साल छ महाने अत्रिक। इट्टे स का इम्तिदान देने के बाद उसने गमियों की दृष्टियों में कई प्रकार के कोकरास्य और कामरास्य द्विप द्विप कर पद डाले। उसके बड़े भाई के मित्र थात थे ता वद परदे के पाछे खड़ा उनकी बातें सुना करता। बेतड्टडुहा में वे लोग बड़े सुन्दर सुन्दर अनुभवों की चर्चा किया करते थे। किमा दूरको इन्डियन मिस को जॉसने के मन्सूवे किमा वकाल की सुन्दर लड़का पर डोर डालने के प्रोग्राम, किमा सुन्दर अभि नत्री के सुहोला शारारिक चर्चा का उल्लेखना बड़ाने वाले गरुड़ों में जिम्ह। ये सब बातें अर्द्धतर के मन में चुकियाँ जिया करती थीं। उसने अक्षिक्रलैला' पूण किम्सा चार दरवेश, 'चद्दका'ता, 'दरवार हसामपुर' इत्यादि किसी कई किनामें कई कई बार पद डालीं। इसके अलावा एक दिन उसने अपने भाई की मेज की दराज में एक अज्ञायम ससगीरों का भी देखा।

इद और दूसरे स्याहारों पर उसका माँ से मिलने के लिये औरत आती। उनके साथ नौजवान लड़कियाँ भी होतीं। वह उनको चुपके-चुपके किवाड़ों की दराज में से देखा करता था, लेकिन वह था बहुत शर्मीला। लड़कियों से बात करना तो बड़ा बात है, वह तो नवयुवता के सामने जाते ही काँपने लग जाता। ज्ञान पूल जाती, दिख धदकने लगता—यही हाल उसका अब हुआ।

वह लड़कों की उन टोळियों से अलग रहता, जो नयना के घर की ओर देख देख कर डठा आँसू भरा करते थे। वह अपना ज्ञान पर नयना का नाम तक न जाता था, मानो उसको नयना से कोई काम ही न था। मगर वह

निरस-देह नयना का सब स बड़ा प्रेमी था।

अप्रतर छिप छिप कर नयना के दर्शन करता। वह बकरियों को नदी-किनारे घास चराने के लिये ले जाता, ता यह खेता और भाड़ियाँ में दूधका उसको ताका करता। वह कुँ पर पानी भरने जाता तो, यह भी किसी न किमा पैड़ का आड़ में खड़ा उभे देखा करता। और जब कभा सयोगवश रास्ते में मुठभेड़ हो जाती, तो अप्रतर शरमा कर सिर झुका लेता और वहीं पर खड़ा का खड़ा रह जाता। उसके चौड़े माथे पर पमाने की बूँदें चमकने लगतीं— गर्व, गम्भीरता और सम्मान की मिट्टी से नयना का निर्माण हुआ था। वह सिर ऊँचा किये, मौन और घमण्ड के साथ रानियों की तरह ब्रदम उठाता हुई उसके पास से निकल जाती। उसके पाँव में पड़ी हुई पाजोष हर ब्रदक पर एक-रूपइली आवाज़ पैदा करती, और धीरे धीरे दूर पहुँच कर उाकी आवाज़ गुम हो जाती। उस समय अप्रतर सिर उठाता, कभा-कभी उसकी आँखें उन देखा आतीं।

नयना से उसके इस छोटे से प्रेमी के दिल का हाल छिपा न रह सका। उनकी पहिला भेंट मेले के अवसर पर हुई।

अब तो धारे धारे मेलों की जगह नुमायशों जे रहा हैं, और धियेगों का जगह बोलते फ़िल्म। लेकिन चूँकि यह एक धार्मिक स्थान था, इयलिये यहाँ के मेले का ढग ही थीर था। छ-सात दिन तक खूब चइज पइल रहती थी।

हवाइ पँगोड़े, चरखी, झूले, चाउ, कुल्की, मिठाइ कचौरी खिचौनों, पूलों और किताबों की दुकानें साधुगों का टोलियाँ, दगल और खेल-समाने, मोटी गरदनें टूटे हुए कान, मैली सुगदरी तहमदें माड़ियाँ, पान, मदारी, बन्दर, राइ बाज़ागर, रग बिरग की कपड़ों वाली धौगें, यिस्टर, विडिया घर कपुतलिया के गेज, गसों का रस और भनभनाता हुई मखियाँ।

अप्रतर मेले में घूम रहा था। गज़लो का दो पैस पाखी किताब हाथ में थी, और ऊपर मोटे शर्करा में लिपटा—

“क्यों न लूटे मझे घरले वार के।”

एक ओर कुछ नटनियाँ नाच रही थीं। कभी लम्बा घूँघर निकाल आँखल की आड़ से अपनी सुरमई कान्ठी काँला से इशारे करतीं, विदकुन नइ-नवत्री दुरिहन की तरह शरमातीं, लज्जातीं और यदन सुरातीं और कभी डोलक की एक हा थाप के साथ पाँव जोर जोर से जमान पर मारने लगतीं, घुँवरुधों की आवाज़ ऊँची

एकदम पाये कर देतीं, सिर नगे हो जाते.





अ इतिषीं कथों पर छोटकने लगतीं छ। य मार का तरह माना जाने मुय काला दुई कर्मा तो कभे बदनीं और कभा इनकार के तीर पर मिर दिखानीं दुई पाये हट जातीं । कभी मुई-मुई का तरह बजाय हो कर जमान पर गिरने जातीं, तो कभा लगला दिग्य का तरह गरदन और घागा लाक लेरीं, और जैसे तुझे श्रद्धों म जमान मायन लगतीं, घायला भमारी हो जाया मुन्दर कुन्दनों वाली लम्बी थोथियों तथा में उड़ने लगतीं, भागे माथे पर पलाने का मुँद पूर में चमकने लगतीं हृदयों म उपल पुषल मघने लगतीं, कामल मथुने पड़कने लगते । मुय के बीच जप काईं अपनि उनको पंमा या इच्छा दिमा दता तो यह बड़ नाज म पैया लगे क तिव आगे बन्नीं मया का उगलियों में उाही खाल-खाल उंगलियों उनक कर गइ जातीं और ताक सिद्ध, कमर मरका, बड़े नम्बरे के साथ 'हाय करके रह जातीं, पित महान स्वर में बजायग रोप के साथ मुँह विगुर कर कहतीं—'बयों जी हना। कजाईं तोक् ही जालोगे क्या ? और फिर एक तुर्को मार कर ताजा बजाता दुई पर भाग जातीं और कमर पर हाथ रख कर लिपनिखा कर हँसतीं दुई नाचने लगतीं । अउतर से भा ग रहा गया । उसने सब से कममिन नटिनी को इच्छा दिखाईं । मगर जैसे ही यह हमके पास पहुँचा, बट वहीं इकरा जमान पर फँक भाग लदा हुआ । अपने पाये पूर तक उभ मारगा के साथ ऊँध उठां और ताकियों का घायरों मुनाईं देता रही ।

जिस जगह शरों का भेमा घाना चिबिया-घर था, वहाँ पर एक दियटर कम्पना भा था । शरों के शरार की विशेष प्रहार का मय्य शरों घोर फिली दुई थी । एक बादमी भौदू मुँद से लगाये शरनी मोगी छेकिंग पैडा दुई आवाज में बाहर खड़ा चिल्ला रहा था । जवाश रोनक थियेग कम्पनी में हुआ करती थी । दिन क समय तो ताश और जादू के भेषों के अजावा गाना भी हाता और नाच भा दिलाया जाता था, जकिन रात क समय गुलबकावजी, लैला मजनूँ, शीरीं प्रहाद, ताजा कमाळपाशा, नख दमयंता, सीता हरण आदि खेज हुआ करते थ ।

यहूर यदा प्रेमा था । बाहर सघने आक कर स्नैप पनाया गया था । दरवाजे के एक और गिळ बेचने वाला अवकाश के समय लाह का पैग के पास बैठा उस पर अपने थँगुलियों स तयजा बजाया करता और दरवाजे क दूसरी घोर लड़क लड़कियों क करके पहिने, हागों और गाजों पर मुर्ती लगाय, कुल्हीं पर हाथ रखे, मटक मटक कर नाचते थे । और एक मसजरा लम्बा चाँदा खोगा

पहिने उनके माथ दिल्गि किया करता था।

जब अफ़्तर वहाँ पहुँचा तो ख़ैमा ज़रीय ज़रीय भर चुका था। बाहर हरतदारी नाच हो रहा था। सैकड़ों लोग खड़े उनको देख रहे थे। रगीन और तुर्रदार पगड़ियोंवाले नटखट देहाती युवक हाथों में लट्ट लिये, चमेकी के हारों में लिपटी हुई यस्तियाँ बगला में दबाये पान चबाते हुए बड़े ध्यान से उन लड़कों का तरफ़ देख रहे थे। कुछ उनको सचमुच की लड़कियाँ समझ कर घटों तेज़ घूप में खड़े एक घास आवाज़ में खॉसते और खँखारते और कई कई तरह से खँखँ लड़ाते और जब कभी पकौड़ा सी नाक वाला मसख़रा उन नाचने वाले लड़कों में से किसी के गाल को छू कर पर भाग जाता और दशकों को देख देख कर और शनको इशारे कर कर के अपनी अँगुलियाँ यों घाटने लगता जैसे उनमें मुरब्या लगा हुआ हो तो वे देहाती बेचैन हो हो कर पहलू बदलने लगते इतने में अफ़्तर ने नयना को देखा।

नयना वही एक मैजा सा पीला लहँगा और एक तग कुर्नी पहिने हुए थी। गर्दन में चौड़ी की हँसुली, पाँव में पाज़ोब, कलाहियों में माटे कगन, आँखों में सुमाँ, पिंडुलियाँ आधा के ज़रीय गगी, इज़ारबन्द के नीले पीले लाल फुँदन नाच कटक रहे थ। सिर के बीचोबीच माँग की धारी, काले और घने वालों का चोटी।

आज अफ़्तर ने अपना भाग्य अजमाने की कोशिश की। वह नयना के ज़रीय जा पहुँचा। नयना मसख़रे की हरकतें देख-देख कर मुस्करा रहा था।

अफ़्तर कुछ देर चुप खड़ा रहा, फिर धीरे से बोला—“नयना ! तमाशा देखोगी ?”

नयना ने मसख़रे पर से नज़र हटा ली। वह उस समय मिट्टी के एक ऊँचे ढर पर खड़ी थी। उसने ऊँचाई से अफ़्तर की तरफ़ ऐसे दखा, मानो सप्राशी अपने किसी तुच्छ दास की ओर दत्ते। एक क्षण के बाद कुछ जवाब दिये बिना उसने उसकी ओर से दृष्टि हटा ली और दूर आकाश में उड़ती हुई बालों का ओर देखने लगी तथा अपनी एक टाँग को धीरे धारे धरावर हरकत देती रही।

अफ़्तर ने जल्दी से दो टिकट ख़रीदे और नयना के पास जा कर बोला—  
“मैंने टिकट ख़रीद लिये।”

नयना ने घमण्ड के साथ उसकी ओर दखा और बिना कुछ कहे-सुने आगे



चल दा । अन्तर ने हकलाते हुए कहा—“नयना, मैंने टिकट खरीद लिये हैं ।”

मगर नयना ने कोई जवाब नहीं दिया । वह चलती गई और थियेटर हाल में शामिल हो गई । टिकट चेकर ने उसे रोकना चाहा । उसके हाथ में उसकी सूंदरी का श्रीचल आ गया । वह चिल्लाया—“धर, या छोड़ो ! कहीं घुमा जाती है ? टिकट निकाल !”

अन्तर ने वद कर टिकट उसके हाथ में दे दिये—“यह क्या बेहदगा है ? यह रहे टिकट ।”

नयना ने क्रुद्ध दृष्टि से टिकट चकर का ओर देगा और शायत पृष्ठा से भुत्का दे कर उसने अपना श्रीचल छुड़ा लिया ।

फ्रस्ट्र एंजास के टिकट और अन्तर का रहस्याना ठाठ लेख कर वह कुछ खचित-सा हा गया । अन्तर से बोला—“माफ़ काजिय, मालिक, मुझे मालूम नहीं था ।”

यह था उनका प्रथम मिलन । अन्तर की प्रसन्नता का ठिकाना नहीं था ।

X                      X                      '                      X

इस मिलन के बाद उनका मित्रता में उच्चति, कॉलेज के निष्ठा ही एक नया टाका हाउम खुलने पर, हुई ।

जब बिरिउग के बाहर रंग विरग का कल्पियाँ लग गई, तो बाजेवालों का शोर, मिस नाडिया की इद्घादन तस्वारों बड़े बड़े पोस्टर यह सब-कुछ देखने के लिये लड़के बच्चे हकट्ट हो जात, उनमें नयना भा शामिल होता था ।

सभ्या समय सिनेमा हाउस के सामने द्विष्काव हो जाता । दो एक लाज पगदियां वाले कानिस्त्रिबिल भी घूमने लगत । सीता गँडेरी चाला बड़े मधुर स्वर में धर्क म दबी और गुलाब में बसा हुई गँडेरियों के गाने गाता, चाट और उबले हुए चने, और एक पैसे में शरबत का गिलास बेचने वालों का भजमा होता गानों का छोटी-छोटा किताब बचने वाले छाकरे गला पाड़ फाड़ कर चिल्लाते । असाड़े में दो चार खड़न वाले हसाई-कॉर्ड काका नीली सहमद बांधे पठत हुए धर से धर मटरगश्ती किया करत ।

अन्तर ने एक गेट कीपर को गौंठ लिया । चार हू आने की घूस में यह और नयना दोनों येज देव आते । नयना सिनेमा यदे पाव स देखता था ।

इसी प्रकार दिन यातते गये । नयना अन्तर स हिल मिल गई थी । मगर उसने आज तक प्रेम न प्रकट किया था, न उसके घमय में कोई खास

परिवर्तन ही हुआ था। वह पूर्ववत् चुपचाप रहती, जो-कुछ कहती वह भी बड़े सचेप में। लेकिन अदतर जो कुछ कहता वह चुपचाप सुन लेती। उसके प्रेम के दावों को न तो उसने कभी झुठलाने की कोशिश की और न उसके जवाब में सज्य उसने किसी प्रकार के प्रेम का दावा किया। मगर उसको अदतर का साथ नापसन्द न था। आइ के पेड़ के नीचे, नदी किनारे, घर से दूर वह घंटों बैठी उसकी बातें सुना करती। उसके अपनेपन में भी एक प्रकार के परायेपन की झलक थी। जिसके कारण अदतर अपने मन की सुछली इच्छा भी पूरी करने से भिन्नकता था। क्या वह नयना की अत्यधिक उदारता और उसके साथ प्राप्त रियायत नहीं थी कि वह केवल अदतर ही से मिलती था। उसके पास जब तक चाहे वह बैठी रहती थी, उसके प्रेम की बड़ बड़ कर की हुई बातों को चुपचाप शान्ति के साथ सुना करती थी। और सम्भव है, वह उन पर विश्वास भी रखती हो।—नयना की ये बातें अदतर की इच्छा अग्नि को भड़काती ही चली गई।

×

×

×

गर्मियों की एक सभ्या की यात है—

अदतर नदी किनारे खेता में आइ के पेड़ के नीचे बैठा नयना की प्रतीचा कर रहा था।

सूर्य चित्तिज के पास पहुँच चुका था। उसकी किरणें पानी की लहरों पर नाच रही थीं। बड़ी-बड़ी नौकायें रेत की बोरियों से लदी हुई मन्दगति से बढ़ती चली जा रही थीं। चन्द्र पक्षी बड़ी तेज़ी से हवा में चकर लगा रहे थे। मीठा पा कर वे पानी पर झपटते और कुछ-न कुछ जे उड़ते। दा बाईं फ़र्लांग पर नदी का खाल रंग का लोहे का दोहरा पुल था। कभी कोई हज़न शय करता। ऊपर बाजे पुल पर मोटरों, जारियों, ट्रकनों और साइकिलों का ताँता बँधा हुआ था। कभी कभी तो ऊँचों की लम्बी कतार भी दिखाई दे जाती थी। नदी के किनारे किनारे दूर तक सफ़ेद सफ़ेद फव्वे बिल्ले हुये थे। घोबियों की 'बुधा छू' की मद्धिम आवाज़ें सुनाई दे रही थीं। और गधे बड़ी सुस्ती से सूयी हुई घाल पर मुँह मार रहे थे।

नयना आई।

उसके हाथ में अभी तक वह घेडौल-सी टहनी थी, जिससे वह दिन भर अपनी बकरियों को हँकती रही थी। वह रुक गई। उसके पाजियों का झंझर भी धरम हो गई।

“तुम कहीं थीं नयना ? मैं होपहर से बैठा तुम्हारी राह देख रहा हूँ।”

नयना के हाँठों पर हलकी सी मुस्कगहट खलना लगी। उसने अपने मैले हाथों को छहेंगे से पोंछते हुये कहा—“देखो, आज मैंने मैददी लगाई है !”

इसी प्रकार देर तक आजस्यमय घातोंलाप होता रहा, यों ही, सिनेमा की धातों, किता नाव के डूब जाने का किस्सा पेरों और नदी के पानी पर विचार विमर्ष—वेजान-सी यातचीत, मिला गताजा त्रास और स अण्वर का कुछ भी मजा नहीं आ रहा था। वह नयना के मैददा खगे हाथों और पैरों की ओर देख रहा था। थाग उमका छहेंगा भी शुद्धा हुआ था, लुस्त कुर्ती भी साक मालूम होती थी, आँसों में काजल भी सावधाना क साथ लगाया गया था और धाल भी विकने थे। नई रँगो हुई ओदनी में अवरक के कण किलमिल किलमिल कर रहे थे। और अवरक के कुछ कण उसके सादखी माये पर चमक रहे थे।

“नयना ! क्या तुम कपड़े धोने के लिये धाग पर नहीं जातीं ?”

‘नहीं !’ नयना हाँठों की मनोहर ढग से हिछाती हुई बोली।

“क्यों ?”

“मेरी माँ कहती है, मेरी बिरिया शाहजादी है ”

अप्रतर ने छेड़ने की परज स कहा—‘तो फिर क्या तू यों ही दिन भर बैठा मस्खियों मारा करती है ?’

‘हाँ नी, बैठी रहती हूँ ! बड़े आये वहाँ से काम कराने वाले मैं तो बकरियों चराया करती हूँ।’

“ऊँह, क्या आई बकरियों चराने वाली। क्या शाहजादियों बकरियों चराया करती हैं।”

नयना के पास इस अजाब तर्क का कुछ भी जवाब न था। वह बिगड़ कर उठ खड़ी हुई थीर जाने लगा। अण्वर न रोका। वह कप्यों को झोर से हिजा कर बोली—‘नहीं-नहीं, अब मैं नहीं उठस्कूंगा।’

बड़ी सुरिकख से अण्वर ने उसको मनाया।

सूय अस्त हो रहा था। दूर से वसरी का धीमा आवाजों आ रही थीं। ऊँघ घालों का तानें, बहुत दूर पर गधों की ‘डेचूँ डेचूँ’ और एक अकेला कौआ चोंच खोले पेड़ के टूँड पर बैठा खेजों के कम पर इष्टि दीका रहा था।

लेकिन सब आवाजों धारे धीरे करम होती जा रहा थीं। वातावरण पर निस्त-धता मैदराने खगी। नयना भी अपने स्वभाव के अनुसार लुप थी और अप्रतर के दिख में नित्य का भाँति भावनाओं की उदख पुखल नयना

नदी से परे खिचित्र में मिल जाने वाली पगडडो पर दृष्टि जमाये हुये थी। और अन्तर नयना की ओर देख रहा था। सूर्य का अन्तिम किरणें अज्ञ की छाती में घँस रही थीं और उनका अन्तम नयना के सोने पर पड़ रहा था। लहरों का उतार चढ़ाव उसके सोने पर सिनेमा के एक दृश्य की तरह दिखाई पड़ रहा था।

तेज़ी से थमकती हुई प्रकाश की रेखाएँ उसके सोने पर प्रकट हो कर लहराती हुईं उसकी गरदन का भार बढ़ती और ठाड़ी तक पहुँच कर लुप्त हो जातीं।

सध्या की हृम आनन्दमयी शान्ति में नयना को सामने पा कर अन्तर के धैर्य का बाँध टूट गया।

अन्तर ने नयना का हाथ घाम लिया। उसके हाँड कौंर रहे थे—बोहे के पुत्र पर न कोई मोहर था, न इज्जत, न साहचिद। और गेना पर निस्त-वता का राज्य था। ऐसा लगता था, मानो प्रकृति पजे के बल चुनचाप खड़ी थी।

कपित स्वर में अन्तर बोला—“नयना! मैं तुममे प्रेम करता हूँ। बहुत अधिक, बहुत हा अधिक। हर दम ”

न जाने उसने और क्या-क्या कह डाला। नयना मौन रही और सृष्टि पर भी निस्तब्धता का राज्य था। अन्तर ने अपने शब्द स्वयं अपने कानों से सुने, वह उनके कर्ण, उनकी विनम्रता का अनुभव करके स्वयं घबरा उठा, वह परेशान हो कर चुप हो गया। यह रहस्यमय शान्ति उसके हृदय में एक विचित्र मय सा उत्पन्न कर रही थी। उसके मन में एक अधी इन्ज़ा यह थी कि यह शान्ति किसी प्रकार भंग हो जाय। और यह शान्ति भंग हो गई।

बोहे के पुत्र पर स्कूल के चन्द बेझिक छोकरे किसी स्काउट गीत को गत पर सीधी बघात हुये चले जा रहे थे। तिर्छी टोपियाँ चमकती हुईं थीं, बाँकी चाल, सफक पर पड़े हुए छोटे-छाटे पथरों को ओकरे लगाते हुए।

अपने अनिश्चित उन छोकरों की आवाज़ें सुन कर अन्तर के मन को डाइस-सा हो गया। मगर उसका शरीर चूर-चूर हो रहा था। नयना अब भी मुन बना बैठी थी। अन्तर ने उठने का कोशिश करते हुये कहा—“नयना, मैं जाता हूँ।”

नयना ने उसका हाथ धीरे से दबा कर कहा—“बैठो।” यह उसने हस्तने धीमे स्वर में कहा था कि उसको आवाज़ और पूर्ण मौन में अन्तर कायम करना असम्भव था। अन्तर एक खरीदे हुये गुलाम की तरह वहीं ज़मीन पर

बैठ गया और नयना का गहरी चॉलियों को दबाने लगा। खेदित उसकी चॉलियाँ इतनी भावहीन थीं कि अक्षय को सम्बोध होने लगा कि 'बैठा' शब्द नयना के नहीं बल्कि उसके अपने होठों पर निकलने थे।

अक्षय ने नयना के हाथ की तरफ देवना टुट्ट किया, जो उसके हाथों में एक कड़ी की मॉनिंग लिखा हुआ था—अम्ब पण—और अक्षय ने नयना का हाथ मुक्त कर अपने हाथों में टुट्ट लिया।

सहसा नयना ने बड़ी नेत्रों के साथ अपना हाथ पीढ़े गाँव किया। वह एकदम से उठ खड़ा हुई। ऊँचा सिर और अभिमाना चॉलियाँ आगे बरमाने लगीं। हॉट चॉपन लगा। उनसे कहकने लगा। वह मुँह से कुछ बड़ना चाहती थी, मगर खोधागत में उसके मुँह से शब्द न निकलने थे। उसकी मुँहियाँ मिन्न कर रह गईं—न जाने अक्षय किस विचार में था। उसने नयना को अपने बाहुपाश में खींच लिया। नयना ने उसके बाज माँप लिये, चिल्लाकर बोली—  
"लोक मुझको, नहीं अभा चित्ताग हूँ।" अक्षय ने दिना वृद्ध जयाप दिय अपने हॉर्न से उसके जखते और चॉपत हुए दाँत बन्द कर दिये।

नयना तड़पने लगी। खेदित अक्षय को मजबूत बाधा का पकड़ लग होती चली गई। नयना विवश हो गई। उसने हाथ पर हिलाना अम्ब कर दिया। अक्षय ने अनुभव किया। मानो वह किना जार को गले से लगाय खड़ा हो। उसने अपना बाँहें डीकी कर दीं और नयना टूटा हुई शाय की तरह उसके पैरों में गिर पड़ा—किर वह फूट-फूट कर राने लगी। अक्षय घबरा कर उसके पास ही बैठ कर उसका बड़े प्यार से दिखाना देने लगा—  
"नयना ! देवो, मरी अर देखो तुम झका हो गई ? कम इतनी सी बाज पर ? कम जरा-सा हाथ चूम खने पर ? मैन तुमको कहा ही क्या है ? बताओ बोलो, क्या तुमको प्यार करने में सुराई है ? अथवा नयना ! बाजो कहो न।"

नयना ने उसके गले में बाँहें बाज दीं और अधिक फूट-फूट कर रोने लगी। अक्षय ने उसको बहुत वादस दा। दूर हठमास्टर के धगले के रेडियो से शब्द नाई का कोई गत उड़ने लगा। टयरी टवा खलने लगा, जिसमें नक्ष के टयरे पाना की-सा नमा था। पृथ सूमन खने। चादू के पक्ष की पत्तियाँ तालियाँ बजाने लगीं। नयना रोते-रोते मुस्कराने लगी। किर शरमा कर चॉवल में मुँह छिपाने लगी।

बड़े-बड़े पाज रग के भरक नदी के किनारे दूर दूर तक बैठे चॉदनों का आनन्द ले रहे थे। कभी कभी वे उड़ल उड़ल कर छलाँग लगाते और गले

का गहराई में डूब जाते। अश्रुत और नयना उनको देख देख कर हँसते रहे और बात करते रहे मीठा-मीठी, किम्क किम्क कर।

जब अश्रुत जाने को तैयार हुआ, तो उसके सामने पर नयना के गाल लगे हुए थे। अश्रुत ने उसके बालों पर हाथ फेरते हुए कहा—“अच्छी नयना! अच्छी शाहजादी! बताओ अब तुम मुझसे प्रकाशी नहीं हो?”

नयना ने मुस्करा कर अपना बाँहें उसकी गदन में डाल दीं।

अश्रुत नयना के पास मुँह ला कर बोला—“देखो नयना! कल कल कल नहीं परसों। हाँ परसा रात को जब तुम्हारे घर में सब लोग सो जायें, तो तुम यहाँ, इस पेड़ के नीचे आ जाना—यानी फ़रीब ग्यारह बजे समझो और याद रहे सुरज निकलने से पहिले वापस नहीं जाने दूँगा।”

नयना शरमा कर पेड़ की छाड़ में हो गई।

अश्रुत ने उसका हाथ धाम लिया। “आधोगी? बोलो, नयना! शाहजादी!”

नयना हाथ छुदा परे हट कर चाँदनी में दुविधा की मूर्ति बनी खड़ी रही। एक क्षण के लिये झुका झुका आँगों से ज़मीन की ओर देखती रही। अश्रुत के दुषारा पड़ने पर उसने मिर हिला कर स्वीकृति दी और फिर एक छलाँग मार कर और दोनों हाथां से मुँह छिपा कर घर का चोर ऐसी भागी कि उसने पीछे घूम कर देखा तक नहीं।

×

×

×

सबसे पहिली घेरा पर बैठा हुआ अश्रुत विचित्र मानसिक उलझन में फँसा था। आज सुबह वह उस मृत स्त्री को देख कर आया था और आज ही नयना से भी मिलने का वादा था।

अश्रुत के मस्तिष्क में मैकहा विचार आते और चले जाते थे। उसको किसी तरह चैन न थाता था। दिन भर उसका मन उलझा रहा। तस्वीर का वह दूसरा पत्र उसकी दृष्टि के सामने एकएक आ गया। उसका शुद्ध धारणा इस प्रकार के घृणित पाप का भार न सहन कर सकती थी। शिष्टाचार या नैतिकता का कोई अर्थ उसके निकट विरहित न था, बल्कि उसके अन्दर यासना से भी मजल कोई भाव ऐसा भा था, जो उसको इस दरकत से बाज़ रहने पर विवश करता था। वह नयना को अपना वासना वृत्ति का साधन नहीं बनाना चाहता था। उसने अपने इस मानसिक परिवर्तन को मन हा-मन

अत्यन्त कायरतापूर्ण भी कहा, मगर फिर भी वह स्वयं को ऐसा कार्य करने पर आमादा न कर सका ।

घर घर वही दरय अपने समस्त धनवनेपन के साथ उसका प्रति के सामने आ जाता—भगनभनाती हुई मन्त्रियों, फटे हुए विधवे, मुर्दा बघा पधराइ हुई औरों, भयानक शीतल चहारा, अश्वत्थुले औरों मुँह में ल बहता हुई राल, खजाजनक हृद तक नम्र सा शरीर, डाला डाला पेट । अन्तर को पसा जगा मानो नयना का पेट फूल कर मटके के बराबर हो गया है । वह स्वयं उससे क्षतराता है, और फिर जैसे धारे धारे गुराती हुई आवाज़ कह रही हों—  
“पापिन, कलमुँहा, बलकिना ।” उससे विवाह नहीं कर सकता था पिता की एक धुक्की से उसका प्रेम काटूर हो जाता । बेधारी पूले हुए पट वाली नयना कालेज से बाहर बड़े जेटर बरस के पाम पागलों की तरह देगा अपनी औरों का कीचड़ औरों से साक करती रहता है उक्त ! अन्तर को नयना की टन औरों का, जिनमें सतारय का अभिमान था, ध्यान आ गया और उसका उरसाह और भी शिथिल पड़ गया । उस बड़े में जबरदस्त प्रेमी का मस्तिष्क इस समस्या का हल सोच निकालने में असमर्थ था—नयना का पवित्र प्रेम उसको इस नाच कर्म से बाज़ रहने पर विवश कर रहा था । वह सोचने लगता—‘क्यों न इस स्वप्निल नयनों वाली कुमारा का जाज सेरे लिये एक पवित्र रहस्य हो कर रह जाय ? —लेकिन आह ! वह अपना भोजी प्रेमिका को क्या मुँह दिला सकेगा ?

×

×

×

आकाश में चन्द्रमा चमक रहा था और रात का अंधकार नयना की औरों में शरण लिये हुए था—नयना आदू के वृक्ष के नीचे खड़ी था ।

छोड़े का पुल एक बड़े मगरमच्छ की तरह प्रकट हो रहा था । मकानों से धुर्धु उठ-उठ कर वायु-मण्डल में फैलता जा रहा था—नयना हाथ में एक कुबहड़ लिय अग्रतर की प्रतीक्षा कर रही थी । आज उसके लिय डलुआ बना कर जाई थी और एक सापी, जिससे वह स्वयं अपने हाथ से अपने प्रेमा को डलुआ खिलाना चाहती था ।

उसके मुकाना भावों का बाँध टूट चुका था और उस इस पर नाज़ था । आज वह सूर्योदय से पहिले घर नहीं जा सकता था । यह सोचते ही वह आप ही आप सिमटने लगता । कितना गवपूर्ण था अग्रतर का मेश ।

अप्रतार अभी तक नहीं आया था। कहीं यह प्रतीक्षा करके लौट तो नहीं गया ? मगर नहीं, सामने कालेज का बड़ा घण्टा दिखाई पड़ रहा था। उसके अन्दर पीले रंग की रोशनी हो रही थी। टेनिस कोर्ट के पास नदी की ओर मुँह किये कालेज के रेस्तराँ का काला मैनेजर सफ़ेद धाती बाँधे खड़ा था।

नयना उचक-उचक कर दूर जा कर गुम हो जागे घाड़ी पगडड़ी की ओर देख रही थी। घाट और मन्दिर पर सघाटा छाया था। कोई सुन्दर-सी बाँकी सूरत अभी प्रकट होगी—काला अचकन, तिर पर मल्लमल की किरनीनुमा टोपी ( यह लाल रंग की टोपी अप्रतार के लाल सफ़ेद शरीर में खूब खिलती थी ) छरहरा शरीर कोमलाग दिना गूँछ का प्रेमी मुस्कराता हुआ आता ही होगा। कनपटी के पास, टोपी से बाहर गहरे भूरे रंग के दो तान लच्छे पालों के कोमल सी छड़ी घुमाता हुआ छोटा-सा अबोध प्रेमी वहीं मन्दिर के कोने में से निकलेगा। 'नयना शाहजादी' यह कहेगा। उसको देखते ही नयना पीठ फेर लेगी रूट जायेगी, नहीं धोलेगी। गुदगुदाने पर 'हँसेगी भी नहीं। बस यों ही मुँह फुलाये बैठी रहेगी। यह कहेगा—'देखो, नयना ! सुनो, शाहजादा ! भला तुमको प्यार करना भी पाप है ?' नयना मन ही मन जोर से कहेगी—'नहीं, पाप नहीं है। 'मगर कृनिम क्रोध प्रकट करती हुई कहेगी—'तुमने इतनी देर क्यों खगाई ?' अप्रतार अँखें मुका लेगा। वह आदेश के ढंग से कहेगी—'मुँह खोलो, अँखें बन्द करो।' फिर वह सीपी भर हलुवा उसके मुँह में ठूस देगी और अप्रतार का अभी तक पता न था।

अप्रतार आज अपने नयना को देखेगा। इसलिये नयना की तैयारियाँ पूर्ण थीं। मेहँदी, काजल फूला के हार, धक्कता हुआ हृदय, कपता हुआ शरीर, मद मरा स्वर—जैसे-जैसे देर होती जा रही थी, नयना के कोमल हृदय के भाव खोते जा रह थे।

दिलनी ही देर तक नयना अपने मेहँदी से खाल हाथों को देखती रही। फिर वह अपने बाँदी के बँगनों का निरीक्षण करती रही—यों ही आलस्य और सुस्ती के साथ पहाड़-सी घड़ियाँ काटती रही। मगर अप्रतार न जाने कहाँ रह गया था।

उसके खेसरी गालों की जर्दी और भी बढ़ गई।

बया वह सचमुच न आयेगा। खेतों की घघरा देने वाली निस्तब्धता में यह धारे धारे सिसकने लगी—आधी रात ऊपर, आधी रात उपर। उल्लू



चिह्नाने लगे और भीतुरों के भीषण शोर में नयना की तिसकियाँ दूब कर रह गई ।

वह वहीं आदू के पैर के तने से पीठ लगा कर ऊँचने लगी । फिर यह कुल्हड़ दोनों हाथों में धामे साने से लगाये वहीं पर सो गई ।

सुन्दर स्वप्नों में वह प्रेमी का निरुद्ध देख कर प्रसन्न होती रहा—गर्मियों की खमवी रात—'सूर्यादय से पहिले वह वापस नहीं जा सकेगी ' उसके झूटे-से रसोले और रगीले प्रेमा ने यद्दा सो कहा था । मुर्गे बाढ़ने लगे ।

नयना आग उठी । उसमे हुए बाल, गर्द में सने हुए कपड़े हथ में चींटियों से भरा हुआ कुल्हड़—उसकी पलकों पर भौत् मोतियों का तरह काँपने लगे ।

× × ×

दूसरे दिन आदर ने लड़े बूढ़ों की हर सम्भव चेष्टा के बाद भा सैकड़ों पहानों से कालेज जाने से इन्कार कर दिया । इसलिये थोड़े दिन बाद उसे दूसरे शहर में शिषा प्राप्त करने के लिये भेज दिया गया—उसने कसम खा ली कि यह कभा भी नयना को अपना मुँह दिखाने का साहस न करेगा । हारे हुए पीर सैनिक और सिंहासन प्युत सम्राट् की तरह वह दूर—नयना से बहुत दूर, चला गया ।

शाहजादी नयना को जब आदर की सुरत कभी भी न दिखाई दो, तो उसने अपने न-हे से हृदय के अपरिमित अभाव को अपने जैल-सुवासले नग्व प्रेमी की बेचक़ाई से पूर्य कर लिया । उसने प्रेम के दरवाज़े सदा के लिये बन्द कर लिये । उसका विवाह हुआ, तो उसकी आत्मा पर विधवापन छा गया । चौदनी रात के एक मनोहर दरय की भौति उस सुन्दर चित्त चार की रमृति को अपने हृदय की गहराइयों में सुरचित कर लिया ।

पहिले वह अपने प्रेमी के लिये शाहजादी से दासी बनी और धम वह उसको अपना आराध्य देवता मान चुका थी । लेकिन सच्ची धन्दा और आराधना करते हुए भा नयना ने अमन देवता का यह महापाप आजीवन जमा नहीं किया ।

## शैतान

उस रात सयोगवश मैंने शैतान को स्वप्न में देख लिया। खवाह मखवाह दिव्वाई पढ़ गया। मैं रात की थन्का मला सोया था, न शैतान के बारे में कुछ सोचा था, न कोई चर्चा हुई थी। न जाने क्यों शैतान से सारा रात बातें होती रहीं। और शैतान ने स्वयं अपना परिचय नहीं दिया कि, “जानकार को शैतान कहते हैं।” यह मेरी अपनी काल्पनिक तस्वीर थी, जिसने कान में खुपके से कह दिया कि यह हज़रत शैतान हैं। छोटे-छोटे नोकदार कान, ज़रा ज़रा से सांग, दुबले पतले, बाँस जैसे लम्बे, एक लम्बी हुम, जिसकी नोक तीर के समान तेज़ थी। हुम का तिरा शैतान महोदय के हाथ में था। मैं डरता ही रहा कि कहीं ये खुभो न दें। एक अजीब बात और थी कि शैतान ने ऐनक लगा रखी थी।

अब सुबह चाय की मेज़ पर बैठे तो मेरी आँखें खुली-को-खुला रह गईं। रूफ़ी की शकल बिलकुल शैतान से मिलता थी। शकल क्या हरकतें भी वही थीं वैसे ही क्रुद, वहा छोटा-सा चेहरा, लम्बी गदन, वैसी ही ऐनक, वही कुटिल-सा मुस्कराहट।

मुझसे रहा न गया। मैंने खुपके से रज़िया के कान में कह दिया—“रूफ़ी शैतान से मिलते हैं।”

घड़ बोली—“आपको क्या पता?”

मैंने कहा—“अभी-अभी तो मैंने अमली शैतान को स्वप्न में देखा था।”

हुफूमत आया रज़िया के साथ पैठी थीं। उन्होंने जो हमें काना फूसी करते देखा, तो बस बेकाबू हो गईं। तुरन्त पूछा—“क्या है?”

रज़िया न बता दिया। हुफूमत आया को ता ऐसा मौका मिल भर जाय। उस मेज़ के निर्द जो जो बैठा था उस पता लग गया कि रूफ़ी का नया नाम रक्खा जा रहा है। लेकिन केवल स्वप्न देखने पर तो नाम नहीं रक्खा जा सकता था। वैसे रूफ़ी ने हमें तग बहुत कर रक्खा था। बच्चों तक की इच्छा थी कि उनका कोई नाम रक्खा जाय।

हम चाय खत्म करने वाले थे। मुझे अपने आमलेट का इन्तज़ार था और रज़िया को काफ़ी का। कालेन में अभी आध घण्टा बाधा था, इसलिये मज़े मज़े से नाश्ता कर रह थ। इतने में नन्हा दामिद भागा भागा आया। स्कूल

का वक्त हो गया था हतलिये जल्दी में था । रूढ़ी के घरावर बैठ गया । हामिद को धुआर हो गया था हूमलिये उसका हजामत ज़रा थारीक करपा ही गई थी । रूढ़ी ने पदी अन्नवाई हुई इष्टि से हामिद के सिर को दबा । जैसे ही हामिद ने दोर खाना शुरू किया रूढ़ी ने एक इल्का-सा चपत हामिद के सिर पर नमा दा और मैने तुम्हें रूढ़िया से बंद दिया—“घाघिर, रूढ़ी शैतान ही तो हैं तुम्हों ने कहा है कि घाघर कोई गने सिर खाए, तो शैतान धीज मारता है ।”

हुदूमत थापा चौक कर हमारी घोर भ्राष्ट्र हो गई । डाको पता चलना था कि सारे कुटुम्ब को मालूम हो गया कि रूढ़ी थाप से शैतान बंद जायेंगे ।

यह था सारा त्रिस्ता, जिसस रूढ़ी शैतान महदूर हो गये । कुछ दिनों में हर एक का ज़बान पर बंद नया नाम बंद गया । स्वयं रूढ़ी ने इस गाम को बहुत पसंद किया । बोले—“जब मैं हज करके लौटूंगा, तब मुझे शैतान न कहना । तब मैं हबलीस ( शैतान का दूसरा नाम ) बन कर आऊंगा ।”

रूढ़ी और मैं बचपन के दोस्त थे, और मुझे उनका सारा कहानियाँ याद थीं ।

जब हम दिजकुल छोटे-छोटे थे तब एक दिन रूढ़ी को उनकी नानी भग्माँ इतिहास पदा रहा थी । जब परपर और घातु के युग का जिक्र थाया तो रूढ़ी ने मुँह बना कर पूछा—“नानी-भग्माँ, थाप परपर के जमान में कितनी बड़ी था ?” फिर कहीं सुजरात, बुजरात का जिक्र थाया, तो थाप कहने लगे—“नानी भग्माँ, सुजरात और बुजरात कैस थे ?”

उन्होंने पूछा—“बया मतलब तुम्हारा ?”

थाप कहने लगे—“थापने तो देखे होंगे ?”

हर वकत रूढ़ी को कुछ-न कुछ सूझता रहती थी । हमारे रूढ़ी के सामने जो सड़क थी, उस पर अवरय घोड़े गुजरेते रहते थे ( सवारों सहित ) । कोई सवार मजे मजे जा रहा है । एकाएक रूढ़ी चिल्लाते—“धरे जनाव लताब सवार साहब ! बंद कुटु गिर पदा है—घोड़े की हुम गिर गइ है उठा खानिये, साहब, नहीं तो घोड़ा लँहरा दा जायगा ।” और सवार तुरंत चौक कर उठर जाता और घूम कर देखता । घ्रास कर घोड़े का हुम तो अवश्य ही देखता ।

एक दिन रूढ़ी क्वास में साता ले थाए । पूछा—“यह क्या हवन्नत है ?”

वह बोले—“अभी पिछले महाने मैंने पढ़ा है कि तोता सौ साल तक जिन्दा रहता है। मैंने सोचा कि लिखी लिखाई बातों का क्या भरोसा ! खुद करके देख लेते हैं।”

मास्टर्सों से तो सदैव मुज्जदमाबाजी रहती थी। एक दिन मास्टर साहब ने चहलकूदमी का अर्थ पूछा। किमीने जवाब न दिया। रूफा उठ कर बोले—“दो बार बीस कूदमी।”

उनकी समझ में न आया। रूफा बोले—“जनाब, चहल के मानी हैं चालीस और चाल्हास कूदमा से दो बार बीस कूदमी कहीं अचका जगता है।”

भूगोल के अध्यापक महोदय ने एक दिन रूफा से पूछा—“अगर तुम पूव की ओर मुँह करके दोनों हाथ फैला दो, तो तुम्हारे बाएँ हाथ पर क्या होगा ?”

रूफा ने वही मुममुसी शकल बना कर कहा—“अँगुलियाँ।”

और गणित में तो बिलकुल विसह्री थे। सवाल पूछा जा रहा है रश्मे के सम्यन्ध में, जवाब निकलता है महीनों में। इसी तरह महीनों का जवाब कुत्ते और बिल्लियों में निकल रहा है।

पूछा—“यह क्या बदतमीजा है ?”

जवाब मिलता—“जनाब, मैं क्या करूँ ? यह कमबस्त जवाब हमी तरह आया था।” और फिर जब मजदूरी और समय का सवाल निकालते, तो जवाब आता सवा तीन लड़के या साढ़े उधाल खिर्वा। हम पर मास्टर साहब बहुत चिढ़ते। एक दिन रूफा ने जवाब निकाला ‘२/३ औरत।’ मास्टर साहब गरज कर बोले—“नालायत, २/३ औरत भा कभी देखी है आज तक ?”

रूफा सिर खुजला कर बोले—“जनाब, कोई लड़की होगा !”

और जब दूसरी कक्षा में इन्स्पेक्टर साहब मुघायना करने आए, तो वह रूफा से बहुत लुरा हुये और इनाम दे कर गये। उन्होंने पूछा—“अगर पानी ठण्डा किया जाय, तो क्या बन जायेगा ?”

हमने सोचा अर रूफा कह देंगे कि बर बन जायेगा।

रूफा बोले—“कितना ठण्डा किया जाये।”

वह बोले—“बहुत ठण्डा किया जाये।”

रूफा सोच कर बोले—“तो वह बहुत ठण्डा हो जायेगा।” ‘बहुत’ शब्द को रूफा ने बहुत शीघ्र कर कहा।

अगर और भी ठण्डा किया जाय ?

“तो फिर वह और भी ठण्डा हो जायेगा,”—रूफा ने इन्स्पेक्टर साहब के

स्वर की नकल उतारते हुए कहा ।

इन्स्पेक्टर साहब मुस्कराने लगे । बोले—“अच्छा, अगर पानी को गर्म किया जाये, तब ?”

“तब वह गम हो जायेगा ।”

“नहीं, अगर हम उसे बहुत गम कर और देर तक गर्म करते रहें, ?”

रूफ़ा कुछ देर सोचते रह, फिर एकाएक उद्वल कर बोले—“हम जानते घाय बन जायेगा !”

इन्स्पेक्टर साहब ने बहुत जोर का ठहाका लगाया । मास्टरों ने कोशिश की कि कहीं उन्हें इधर-उधर ले जायें किन्तु वे पचवत् वहीं खड़े रहे और रूफ़ा से संवाद किया—“बिल्ली का कितनी दर्दगे होता है ?”

“करीब करीब चार ।”

“और आँसू ?”

“कम से कम दो ।”

“और दुर्गें ?”

ज्यादा से ज्यादा एक !” इन्स्पेक्टर साहब हँस हँस कर लाटन क्वीनर खने पा रहे थे ।

“और कान ?” उन्होंने पूछा ।

‘तो क्या सबमुच आपने अथ तक बिल्का नहीं देखी ?’ रूफ़ी मुँह बना कर बोले । और इन्स्पेक्टर साहब हँसते-हँसते छुटक गये ।

उन दिनों हम और रूफ़ा दोस्त थे ।

X

X

X

मैं जज साहब के यहाँ रहता था । पहले भा हम वहीं रहते थे । पर अन्धा की बदली हो गई और वह एसा जगह बदल कर गये जहाँ काबेज तो एक और, कोई स्कूल तक न था । जज साहब ने होस्टल न जाने दिया । इधर उनकी योगम ने अम्मा स पूछ लिया था । अत मैं उनके यहाँ रहने छगा । रूफ़ी भी वहीं रहते थे । जज साहब से उनकी कोई दूर की रिश्तेदारी थी । मेरा अनुमान था कि रूफ़ा उनके भतीजे थे । कुटुम्ब के सारे लोग मुझे अच्छे लगते थे और उनमें एक हस्तो तो मुझे सबसे अधिक प्रिय थी—बड़ धी रज़िया ! और जिनसे मैं डरता था वह थी रज़िया का बड़ी बहिन, जिनका असला नाम तो खुदा जाने क्या था, सब बच्चे उन्हें हुकूमत थापा कहते थे । मेरा हा धायु का थी या

शाब्द कुछ बड़ी ही होंगी। यदि यह वहाँ न होती, तो मैं और रज़िया कभी के बड़े गहरे दोस्त बन गये होते। लेकिन मैं उन्हें एक शॉल्व भी न माता था।

सारा दिन कालज में बीतता। शाम को खेलने चला जाना और रात को सिनेमा। रज़िया से बातें करने का समय ही न मिलता। इन्ने भर में एक-दो बार मौज़ा मिलता था वह भी हुकूमत आपा की भेंट हो जाते। बनती तो उनकी किसीसे भी न थी हॉ, मुमसे और रूकी से खास लगाव थी! मैं तो लुप हो जाता, किन्तु रूकी वह जवाब देते कि हुकूमत आपा खिसिया कर रह जाती।

सारे दिन खदती मगइती और दूसरों की ब्यर्थ आलोचना करती रहती। किसी बात का शहर में डिंडोरा पिटवाना ही तो जा कर हुकूमत आपा से कह दाजिये। बस, हर एक को पता लग जायेगा।

मैं बिलकुल न समझा कि आदिर इनकी पालिसी क्या है, इनके उद्देश्य क्या हैं? रूकी का खयाल यह था कि यह अपना भा समय नष्ट कर रही हैं और दूसरों का भी। और मुझे उनका यह खयाल बिलकुल सच मालूम होता था।

उधर मैं और रूकी बड़े गहरे मित्र थे। मैंने कोई बात भी उनसे छिपा कर न रखी थी वहाँ तक कि रज़िया के विषय में भी सब कुछ उन्हें बता रक्ता था। और जो बातें हम आपस में करते वह तुरन्त मैं रूकी से कह देता और सदैव उनकी सलाह से काम करता। रूकी बड़े प्रेम से मुझे बताते कि आज रज़िया से यह कह देना आज यह पूछ कर देखना, आज यह करना, आज वह करना। और मैं उसी तरह करता।

×

×

×

हमें एक साहब ने सिनेमा देखने के लिये निमंत्रण दिया। बिलकुल नये दास्त बने थे। वह भा इस तरह कि एक दिन अपने पिता के साथ वह जज साहब से मिलने आये। वहाँ मैं और रूकी बैठे थे। उनके पिता रूकी की बातों से पड़क उठे, बोले—“क्यों, बेटे, आज-कल तुम क्या करते हो?”

रूकी बोले—“जी, आज कल मैं धी० ए० का इम्तहान दिया करता हूँ।” और वास्तव में रूकी न जाने कितने वर्षों से धी० ए० का इम्तहान दे रहे थे।

फिर वह बुहुर्ग जज साहब से बोले—“क्या बताऊँ, कितना जी चाहता है कि आप को फोन करूँ, मगर नम्बर भूल जाता हूँ। आज-कल तो कुछ भी

*Handwritten signature*

पाद नहीं रहना । पदमे पादरार के तीर पर एक मोट-मुठ में ऐसी शान  
खिला खिया करता था लेकिन अब यह नाट्य मुठ हो बही भूख लागी है ।'

रूनी बोले—“जी प्रान का मन्वर पाद करने क तराके मने एक कितान  
में पद थे । इजाजत हो तो बर्न करूँ ?”

यह बोले—“जरूर ।”

रूनी बोले—“उमने खिना था कि यहके तो गिर्न ऐते जागों हास राइो-  
रसम यदागा आदिये, तिनके प्रोन मन्वर विखकुल आसात हों । जैसे—पॉष  
इजार हो इजार या पार तो वास । अगर यह न हो सके, तो मन्वर का तीर  
मे मुनाला ( अथपथन ) करना आदिये । जैसे—सु मी पैताजीस को याद  
करना विखकुल आसान है । अगर यह मन्वर खिया जाय कि हममें पथपन  
पमा कर दिये जायें, तो सात सौ बन जायेंगे और अगर सात सौ में तीन सौ  
जमा कर दिय जायें तो एक इजार बन जायेगा । हमी तरह अगर सु सौ  
पैताजीस का सु सौ पैताजीस में गुणा कर दिया जाये, तो सिर्फ चार लाख  
सोषद इजार पचास बन जायेगा और अगर हम याद रखे कि सु सौ पैता  
जीस सिर्फ सु रुपये चार बाने और पॉष पाद हैं, तो, उते कमी नहीं भूख  
सकते ।”

उधर यह बुजुग हँसी से लोप पोठ हूण जा रहे थे ।

रूनी कहत जा रह थे—“अगर यह भी न हो सके, तो फिर यही डीक  
होगा कि इतिहास की पुस्तक स्याज खा जाय और उस मन्वर का सन् सलाश  
किया जाय । जैसे सु मी पैताजीस में से अगर सु का अक उड़ा दे । तो  
पैताजीस रह जाता है, और सन् पैताजीस इना के पहल सोजर को हमेशा के  
त्रिये दुनिया का डिक्टर मान खिया गया था । उधर अगर उसमें एक इजार  
जोड़ द तो इसी सन् सोखइ सौ पैताजीस में नैरोबी की लड़ाई हुई था ।”

यस, उसा दिन से वह बुजुग और उनके सुपुत्र हमारे दोस्त बन गए ।  
सिनेमा में देर थी । मैं रूनी के कमरे में गया । देसा कि बैठे हामिद को  
पढ़ा रह हैं । पूछा—“यह क्या ?”

बोले—“वेगम कड कर गई है ।”

मैं भी पास बैठ गया ।

रूनी बोले—“क्यों न-हैं, दुनिया में कुछ कितने ऊँ होंगे ?”

वह चुप रहा ।

‘अ-हा, क्या रोमन लोग गादरे खाते थे ?’

“पता नहीं।”

“एक साल में कितने इन्च होते हैं?”

नहीं ने हिसाब लगा कर कुछ यत्रथ उलटा सीधा सा जवाब निकाल दिया।

“और एक मील में कितने घन्टे होते हैं?”

उसने फिर कोई जवाब निकाल दिया। अब रूकी माराज हो कर बोले—

“क्या तुम्हें सचमुच पता नहीं कि रोमन लोग गाजर खाते थे या नहीं?”

“जी नहीं,” नहें डर कर बोला।

“और यह भा पता नहीं कि दुनिया में कितने ऊँट हैं?”

“जी नहीं।”

“जेहालत की हद है! क्या तुम्हें सचमुच पता नहीं?” रूकी जोर से बोले।

“जी नहीं!” नहें सहम गया।

“तुम्हें खुद पता नहीं,” रूकी बोले। और नहें को छुटी मिल गई।

इनने में रूकी के नाम एक खत आया, जिसे पढ़ कर उन्होंने बहुत बुरा मुँह बनाया। नाक भी चढ़ाई, कुछ देर टडखले रहे, फिर बोले—“कुछ और भी सुना? छोटे भाई साहब ने मुँह रख ली है। कितना मना किया था उसे। और छोटी छोटी दाढ़ी भी उगा ली है। गोया दाढ़ी, मुँहों की खेती हो रही है।”

तुरन्त नौकर को बुलाया और एक तार लिख कर दिया कि भेज दे। मीने तार का मज़मून पढ़ा। लिखा था—“Shave At once”। वह तार उसी समय भेज दिया गया।

हम सिनेमा के लिये तैयार तो हो गए किन्तु वह महाशय धर्मी तक शायब थे। रूकी ने फ़ोन करना चाहा, लेकिन नम्बर न मिला। आखिर खीझ कर बोले—“तो किसी और को फ़ोन कर दें?”

“किसी और को?”

“हाँ क्या इन है? किये देते हैं।” उन्होंने न जाने कौन से नम्बर को बुला लिया। मैं सरक कर चींठे के निकट आ गया।

“कौन साहब बोल रहे हैं?” रूकी बोले।

“प्राकसार है अब्दुल मजीद ‘मजबूर’।”



“थोड़ ! थ-दुल मजाद 'तरयूज !' तो गोया आप शायर हैं ?” यद्यपि उन्होंने साक़ 'मजयूर' कहा था ।

'जी नहीं, मजयूर !' वह बोले ।

'मात्र काजिये, मैं तो दरगिज़ यह वेधदबी नहीं कर सकता । आप ज़रूर मजाब कर रहे हैं, यानी अदुल मजाद 'लगूर' !'

“थोड़कोह लनाय ! मजयूर मज यू ऊ र !” वह बोले ।

'अच्छा तो मजयूर साहय हैं ! तो आप कुछ कितने भाइ हैं ?'

'चार हैं हम !' वह बोले ।

“अगर आप पाँच होते तो हमारा क्या बिगाड जत ?” रूपी बोले और जल्दी स टेलाक्रोन का घोंगा रख दिया ।

इतने में वह महाशय आ गण थीर हम सिनेमा खल दिये । पृष्ठा—“कौन सी पिक्चर है ?”

वह बोले—“इ-साक़ की तोप !”

मैंने विरोध प्रकट किया कि क्रिकेट आदि जीवा दिलचस्प चीज़ें छोड़ कर ऐसी ट्रिफ़्लम दम्बना सरासर हिमाकृत है ।

रूपी बोले—“चलो अब तैयार हो गए ही, तो चाहे 'रू-वार पुल्लकड़ी' दो क्यों न हो ज़रूर देखेंगे ।”

अब रास्ते में उन महाशय ने अपने पिताजी के सम्बन्ध में जो बातें शुरू की हैं, तो हम तग था गये । उनका बातें समाप्त होने हा में न आनी थीं । उनके पिता जी मुनसिफ़ थे, अ-छे ज़ासे भारी भरकम मजुय थे । वह उनकी ताराक़ कर रहे थे कि किस तरह उ होने जग्वा जग्वा सज़ा घाले अपराधियों को छोड़ दिया था और अ छे भले थाज़ाद लोगों को छै-दखाने में भेज दिया था और अब सार देश में उनक आश्चर्यजनक इ-साक़ का ढका मज रहा था !

आख़िर तग था कर रूपी बोले—“तो वह बहुत अ-छा इ-साक़ करते हैं ?”

“ज़रूर !” जवाब मिला ।

“याना बहुत ही ऊँचे दर्जे का इ-साक़ करते हैं वह !”

“जा !”

“फिर तो वह 'इ-साक़ की तोप हुए,” रूपी ने कहा ।

और मेरे त्रिये हँसी रोकना मुश्किल हो गया ।

×

×

×

कितनी बार मेरी इच्छा हुई कि हुकूमत आपा से पृष्ठ—‘आख़िर आप

चाहती क्या है ? हम क्या करें, जो आप के इस अजीब-गरीब कोप से बच सकें, जिसके हम हर समय शिकार हुआ करते हैं।' चौथों घंटे हाथ धो कर (बल्कि हाथ-मुँह धो कर) यह मेरे पीछे पड़ी रहती थीं। रज़िया की तरफ़ मैंने ज़रा भी आँख उठाई कि आपत आ गई।

इसमें मेरा क्या क्रूर भा ? घर में एक अच्छी लड़की है, जो इतनी प्यारी लगती है, तो उस क्यों न देखें ? अगर यही मरज़ी है, तो हुकूमत आप रज़िया की किसी सड़क में क्यों नहीं बंद कर देती, जिसमें कि कोई न देख सके ? मेरे सम्बन्ध में तरह-तरह की आलोचनाएँ करती रहती थीं। पहले तो मैं बहुत विरक्त हो जाता, किंतु बाद में मुझे उनकी आलोचनाएँ स्टैंडर्ड में गिरी हुई मालूम होने लगीं और मैं उनका ख़याल ही छोड़ दिया। उनकी आलोचनाएँ भी सुनिये—'शौकीन लड़का है, रगीन मिज़ाज़ है, रग-विरगो कपड़े पहिनता है, पुराणू लगता है।' इसका सोना काफ़ा चौड़ा है, लेकिन चेहरा कुछ दुबला है। इसका कोई विश्वास नहीं। (न कोजिये विश्वास, किस मसख़रे ने पुरामद की है आपसे ?) हर वस्तु याजुधों पुट्टों की टंगेलता रहता है (सूषुरत पुट्टे हैं, क्यों न टटाके !), बेज़ारी को बनारी कहता है। (यह आपके कानों की शरारत है।) हर वस्तु अकड़ कर चलता है (तो क्या कुपड़ा हो कर चला करे ?), रज़िया के बारे में सोचता रहता है, उसे घूरता रहता है, और उसीकी बातें करता है (रज़िया जो अच्छी लगती है ! ) मुझे ज़रा भी अच्छा नहीं लगता। (मुझे भी आप ज़रा भा अच्छी नहीं लगती !)

और हुकूमत आपा का तक्रिया फ़ज़ाम या यह वाक्य, 'मुझे पहले ही पता था' ('पहले' शब्द पर ख़ूब जोर दे कर ! ) एक दिन मैंने रज़िया के नाम की शैगूनी पहिन ली। हुकूमत आपा ने देख ली। बोली—'मुझे पहले ही से पता था !'

एक दिन एक नाटक में लगातार दो घण्टे तक रज़िया को देखता रहा और पाट ग़लत-सज़त कर गया। हुकूमत आपा ने देख लिया। चिड़का कर बोली—'मुझे पहले ही से पता था !' और रूकी बोले—'जब आप को हमेशा पहले ही से पता रहता है, तो आप हमें टोक क्यों नहीं देती ?'

रूकी उन्हें आड़े हाथों लेते थे। एक दिन बेगम साइया का कोई ग़हना खो गया। हम सब रूँद रह थे। एकाएक रूकी बोले—'आहा ! हुकूमत, तुम्हें तो पता होगा कि ज़ेवर कहाँ है ?'

“तुम्हें क्या पता ?” यह बोली ।

“क्यों, तुम्हें तो पढ़ते ही से पता रहा करगा है न !”

फिर एक दिन एक अज्ञात स्त्री सामना हो गया था, जो हमारी समझ में बिलकुल न आता था । लज साहब भी पूरा जोर लगा चुके । स्त्री बोले—  
“ओ, हुकूमत, क्या हो इसका इत्त ।”

सब हुकूमत थापा के पाते पढ़ गए कि क्याओ क्या है इत्त ।

स्त्री बोले—“भाइयो और बहिनो ऐस मौकों पर हमेशा हुकूमत से सखाह लिया कीजिये । यह पढ़ेंको दुई और अदजाह वाला औरत हैं, और दुई हर चीज का पहले से ही पता रहता है ।”

मगर यह सब होन पर भी थापा की यह पाश्य बोलने की आदत बारी रही ।

स्त्री मुझे रजिया के बारे में तरह तरह का सलाहें दिया करते, किन्तु सदैव मुझे विरक्त कर देते । सब से पहने तो यह सवाल पैदा हुआ था कि आज़िर मेरे पास क्या सबूत है कि रजिया को मैं अच्छा लगता हूँ । रिस्त-देद, कोई सबूत न था । इसलिये यह सिर्फ एकतरफा कार्रवाई बताई जाता थी । किमा को पसन्द करने से कुछ नहीं बनता जब तक वह भा पसन्द न करे । अतएव उनके सिद्दात के अनुसार मैं और रजिया बिलकुल अघाचित थे ।

यह हमेशा यही कहा करते—“भैया, दुनिया बहुत बड़ी है । कहीं और जा कर काशिश कर । रजिया से भी अच्छी लड़कियाँ मिलेंगी ।” और उनकी यह बात मुझे तनिक भी पसन्द न आती ।

एक दिन बोले—“रजिया की निगाह कमजोर है, उसे दूर की चीजें धुँधली दिखाई पड़ती हैं ।”

“तुम्हें क्या पता ?”

“दुई का चाँद उसे नज़र न आ सका, और इसलिये उसने जज साहब का ऐनक से दुखा था ।”

“फिर ?”

“फिर क्या ? शायद तक तो यह क्या ऐनक लगाएंगी हों, शायी के बाद क़ौरन लगा लेगी ।”

मगर कि इता तरह की उलटी-साधी बातें यह सुना जाते ।

उसो दिन शाम को स्त्री और हुकूमत थापा की बहस बिड़ गई । विवाद

सैतान

का विषय था 'पेनक' । न जाने कौन पेनक के द... का रस है का रस है...  
विरोध में । कमरे में एक ग़दर मची थी ।

मैं कुछ देर तक बाहर सुनता रहा, फिर धम्मर...  
रुकी बोले—“तो गोपा ब्राह्मण जीत हा गया ।”

हुदूमत आवा बोली—“ताज्जुय है कि पाँच घंटे की...  
सायब नहीं हुये ।”

“पाँच घंटे की बहस के बाद ?” मैंने पूछा ।

“हाँ मई, पाँच घंटे तक बहस जाता रहा ।...  
दम मिनट प्रामोशी रही, और पाँच मिनट में...  
और हुदूमत आवा जल हा तो गई, क्योंकि वह...  
हम सब प्रामोश हो गए ।

इतने में टम-टन' करता हुआ आवा सुना...  
गया ।

हुदूमत आवा बोली—“कहाँ आवा खगा है, ...  
इतने में दूसरी इतन दूसरी आर टन टन...  
बोली—“कोई उधर आवा लगी है ।”

रुकी फिर मटक कर बाज़—“दोनों मगर...  
और हुदूमत आवा नाराज़ होकर...  
“घार, यह ता इस तरह सायब हा...  
निकल जाय ।”

“क्या मतलब ?”

“उमे सायब हुई जैसे गधे के सिर...  
कुछ देर सों ही बैठे रहे फिर यह...  
मैंने सिर दिखा कर 'हाँ' कहा ।

बोले—“कोई मीटर आये, ता उप...  
इतने में ज़ुम्मन ( दासप ) गुहगा...  
कुन्ना और म टे मीटर थ मिर्से बर...  
इसलिये हमने उनकी टा... दिन...  
करा न आवाज़ हा—“ज़ुम्मन...  
इतने गुना हा नहीं ।...  
रहा ब...—“...  
पने  
गा  
हो  
एन  
गधे

उसके बाद, दुब (दानव) ऐसे बैस थोड़े ही आ

गये। 'मैंने भाई, दुब (दानव) ऐसे बैस थोड़े ही आये हैं, जो तुम्हारे लिए तो भिसनी पड़ेगी।'

इसके बाद ही मैंने भीतर गुजरा। इमन बुलाया, तो वह आ गया। 'तुमने भोगूरी विसी थी। तुम आए ही नहीं?'

मैंने उसका उत्तरा मसलारा था, पर उस समय अत्यन्त उदास दिखाई पड़ रहा था कि उसका तार आया है घर से, जिसमें सुरन्न बुलाया गया है।

'उतरी तो ही रुद आ जाऊँगा, नहीं तो आप बुला लीजियेगा,' वह बोली।

'हाँ, हाँ, जरूर बुला लेंगे,' मैंने विश्वास दिलाया।  
'मम्मा आप किस पते पर जन लिखेंगे? मैं तो न जाने कहाँ कहाँ की वाफ़ मिलाती फिरौंगी।'

अब बताइये इसका क्या जवाब हो सकता था?  
क्या बोले— 'भाई इसका तो यही हलान है कि तुम अपनी मूँछ का एक भाग बर्तों दे जाओ ताकि जब हम तुम्हें बुलाना चाहें, तो बाज को धूप में रख दें। यह सब बांधी आवेगी, फिर पाना और बाद में तुम उड़ते हुये आ जाओगी।'

मैंने लिखलिखा कर हँस पड़ा, और बोला— 'बाहीजविज ब्रूयत !'

अब हमने हँसो म्दम की, तो देखते हैं कि मन्ना कमरे में नहीं थे। दूसरे त्रिम फिर इसी प्रकार की घटना घटा। मुझे स-दह-सा हो गया। मैंने रजिया को कहा। हमने एक योजना सोची और सुबह का पाथ पर रजिया न जान मूक कर छाहोज पड़ दा और बिजली का तरह स-सी कमरे से निकल गए यद्यपि बांधी पाथ हुर भी नहीं हुई थी। मैंने सबको बता दिया कि चूंकि कभी छाहोज स भागते हैं और पढ़िज आ बह प्रमाण दिये जा चुके हैं, इस लिये आज से यह पूरे शैतान हुए और मजिय न डहें कोई सत्रा न कह सब शैतान कहें—या तो अगर सामन हिम्मत न पड़े तो कम-स-कम पादे ता कहा ही पड़े।

सब उसी दिन स मन्नी शैतान महगूर हो गए।

X X X

एक एक अत्यन्त मनोहर चाँदना रात था। पूर्ण चन्द्र धरती के सुपहल

उदय हुआ था। वायु के शीतल झोंकों से पीछे मूम रहे थे। मैं कौबारे के पास बैठा था। विचार धारा को जहाँ कहीं स भी शुरू करता था, रज़िया पर टूटती थी। एकाएक जो देखा, तो रज़िया प्लाट में बैठी चाँद को ताक रही थी। बिलकुल गुम सुम बैठा थी।

यह पहिला बार नहीं हो रहा है। उन दिनों बहुधा मैं उसे एकान्त में बैठे देखा करता था। आगिर, क्रिमके सम्बन्ध में सोचा करती है यह? मैं बेचैन हो गया। मुझसे न रहा गया। पहुँचा सीधा शैतान के कमरे में। वह सो गए थे। उन्हें जबरदस्ती जगाया।

“थरे !” मेरे मुँह से निकल गया — “तुम ऐनक लगा कर सोते हो ?”

‘कल ऐ एक लगाना भूल गया था। रात भर सपने बहुधा धुँधले धुँधले दिखाई पड़े।’

मैं इतना बचन था कि मुझसे हँसा भी न गया। मैं जल्दी से सब कुछ उन्हें बता दिया, और कहाँ— ‘भई, रज़िया को किमीका प्रयाज जरूर है। लेकिन यह पता नहीं कि वह भाग्यवान् है कौन। जैसे वह शाज कल चौवासों घण्टे किमीके थारे में सोचता रहती है।’

देर तक हम इसी प्रकार की बातें करत रहे। अब प्रश्न यह था कि यह कैसे हल हो। और जैसे मैं स्वयं यह जानता था कि उम्मे मेरा कितना खयाल है।

आगिर बड़े सोच विचार के बाद शैतान बोले— “भई, इसके लिये थोड़ी सी हिम्मत करनी पड़ेगी।”

‘वह क्या ?’

“धगर मेरी मानो, तो थार तुम खुदकुशा ( मारन हाया ) कर लो।”

‘खुदकुशी कर लूँ ?’ मैं चौंक पड़ा।

“अमली नहीं नकला खुदकुशा। धैये हम यही जाहिर करेंगे कि तुमने खयमुष खुदकुशा कर ली है। फिर देखेंगे कि रज़िया क्या करता है।”

मैंने साफ इनकार कर दिया। बेगम साहबा को पता जरूर चले जायेगा, और अगर शम्मी को लिख दिया तो आफन आ जायगा। और मैं खुदकुशी करना है भी पिशूल-मा।

शतान बोले— ‘धगर साहबा को हरगिज पता न चलने देगे। इस एत-थार को सारा कुनबा एक पार्टी में आ रहा है। रज़िया का इम्तदान आखे

इशत है, वह यहीं रहेगा। बस मैदान साफ पा कर तुम सुन्दरता कर लेना। सारा इतनाम मैं कर दूँगा।”

वही खम्बा गिरह के बाद शैतान ने मुझे बहका हा लिया। बराबरे दो दिन हमने लूप रिहर्मस किये।

एतवार का दिन आया। रजिया के निवा राय पार्टी में चले गए। मुझे और शैतान (राका) को भी बहुत बहा गया, किन्तु हमने क्रिस्टेन नैच का महाना कर दिया।

कई छोटी माटी घातों के बाद (जिधका उल्लेख जान गूम कर नहीं किया जा रहा है) मैंने आराम इत्यादि कर ली। एक सोफे पर लेट गया। मेरा एक हाथ नाचे लटक रहा था और प्रया पर अंगुलियों के साथ एक पुरानी शार्शी पड़ा थी, जिस पर 'गहर' लिखा था। शैतान ने मेरी ओर देखा। बोले— 'तीवार हो ?'

मैंने कहा—“हाँ।”

और उन्होंने एक अनाथ योग्य स्वर में शोर मचाना शुरू कर दिया, जिस पर मुझे हँसा आ गई। रजिया भागी भागी आई। मैंने तुरंत आँसू बंद कर लीं परन्तु पलकों से सब कुछ देखता रहा। शैतान ने तुरन्त उसे बताया कि मैंने आराम इत्यादि कर ला है। रजिया ने पहिले शार्शी को उलट पलट कर देखा, फिर मेरी नाची देखा। भला मैं नाची कैसे बंद कर सकता था। बोली— 'घरे! अभी थोड़ी सी जान बाकी है।' घबराई हुई साथ के कमरे में गई। मुझे उसका आवाज साफ सुनाई दे रही थी। उसके स्वर में घबराहट था। येचनी था। वह डाक्टर साहब को फोन कर रही थी, बरिह बिनाप कर रही थी। उसके शब्द थे— 'गुदा के लिये जल्दा काजिये, जिन्दगी और मौत का सवाल है।' और मेरा दिल आनन्द से खिल उठा। किमकी जिन्दगी और मौत का सवाल है? मेरी जिन्दगी का या रजिया का जिन्दगी का? या शायद दाना का। मैंने शैतान को इशारा किया! वह मुस्कराए। रजिया घबराई हुई आई और मेरा सिर दवाने लगी। अब जो उसका अंगुलियों गरदन तक पहुँची है, तो मुझे गुदगुदा लगा। पहिले तो मैंने बहुत रोका कि तु जय रह सका, तो निरकसिला कर हँस पड़ा और जल्दा में बैठ गया।

“हार्ये !” रजिया के मुँह है निकला।

‘हार्ये !’ शैतान ने विधाष कर कहा।

“दस्ता, दरा दिया न तुम्हें ?” मैं बोला।

“सचमुच मैं तो डर ही गई थी।”

और मेरा मार प्रसन्नता के घुरा हाल हो गया।

तो इसके अर्थ यह हुए कि रज़िया को मेरा बहुत ख़याल था। उसने जो कहा था कि ज़िन्दगी का सवाल है।

“तो क्या तुम सचमुच बहुत घबरा गई थीं ?” मैंने धन कर पूछा।

“हाँ, कुछ घबरा ही गई थी।” वह मुस्करा रही थी।

“कुछ क्या ? थोँ कहो कि पूरे तौर पर घबरा गई थीं, बहुत घुरी तरह घबरा गई थीं।”

“घ़ैर इतनी तो नहीं घबराइ। दरअसल खुदकुशी अच्छी तरह नहीं की गई, इसमें कुछ भूलें हो गईं।”

“अब चाहे तुम कुछ भी कहो, एक बार तो बहुत ही परेशान हो गई थीं।”

“जैसे इसी ज़हर की शोशी को ले खीजिये,” वह बोली—“माना कि इसमें कभी टिंक्चर आयोडिन आई थी। लेकिन दो साल से इसमें बादाम का तेल पड़ा था और अगर बादाम के तेल से खुदकुशी हो सकती है, तो यह अर्से से राज़ी पड़ी थी।”

“लेकिन तुमने फोन तो क्या घबराहट में किया था।” मैं खिसियाना हो चला था।

“अच्छा, बताइये, फोन है किस कमरे में ?”

“ड्राइंग रूम में,”—मैंने कहा।

‘और मैंने फोन किस कमरे में किया था ? साथ के कमरे में न ?’

“हाँ ?”

“और साथ का कमरा है गोदाम। अब बताइये, यहाँ टेलीफोन कहाँ से आ गया ?”

और मुझे विरवास हो गया कि मैं रज़िया को बिखरुल अच्छा नहीं खगता, बल्कि शायद घुरा हा खगता होऊँ।

×

×

×

अगले दिन हम सब एक नरक का नाच देखन गये। बहुत प्रसिद्ध नरक था। असमय लोग दसने आय थे। पहले तो इधर उधर की चाँज़ें होती रहीं, फिर नाच शुरू हुआ। आर्बेस्टा बजने लगा। पहले तो वह सुपचाप खड़ा रहा,



सिर उताने एकदम से दवा में एक दुर्लभ खगर्द और अज्ञात-वर्णों की रासों शुरू कर दी।

मन्दी हैरत हो कर बोली—“भैया, यह पत्थर का पुत्र अब तो शुरू दिख रहा है।”

जब जो उस भले आदमी से हाथ-पैर मारन शुरू किये हैं, तो मन्दी घबरा गई। बोली—“भैया, यह आदमी क्या कर रहा है ?”

दुर्लभ आवा बोली—“गाय रहा है।”

मन्दी बोली—“इस तरह गाया करते हैं क्या ?”

दुर्लभ आवा बोली—“सुपचार देखती रहा। इस ‘कॉसिकल’ भाव कहते हैं।”

मन्दी मचल गई—“नहीं ता, यह आदमी तो कुछ और गमारा कर रहा है।”

शैतान बोली—“नन्दी, बात असल यह है कि सुबह को ‘शुभान सार’ पिया था और अब इसे अज्ञान प्रीतिंग हो रहा है।”

शैतान ने आल छोट के अंगरखा पहिन रक्खा था और सब धाग उन्हें ही देख रहे थे। विधाम की घण्टी बजा और मैं तथा शैतान बाहर गये। छोट का अंगरखा सचमुच एक अजीब-सी चीज थी। जो देखता था ठहर जाता था। कुछ लोगों ने तो सचमुच हँसना शुरू कर दिया। शैतान रुक गये, और पीछे घूम कर बोली—“साहजान आपका हँसना सिर झोंवों पर। लेकिन आप मेहरबात करके जहद से हँग लाजिये, क्योंकि मुझे एक जरूरी काम है और आपका शौक पूरा किये और मैं यहाँ से नहीं जा सकता।

ये बेघारे शरमा गये।

“तो आप हँस चुके क्या ?” शैतान बोली।

यं सुप रह।

‘क्या मैं जा सकता हूँ ?’

उनमें से एक ने सिर हिला दिया।

हम जब वापस हुये, तो अभी अर्ध-ग्याता दिन बाकी था। धाग से गुजरते हुये शैतान रुक गये। माजा का बुलाया और मिट्टी का एक ढेर दिखा कर बोली—“यह ढेर यहाँ नहीं होना चाहिये।”

‘सरकार, यह बिना कई आदमियों के बाहर नहीं फेंका जा सकता।’

“वाह ! मामूली सा काम है। एक बड़ा सा गड्ढा खोद लो और उसमें यह मिट्टी टका दो।”

घात माली की समझ में आ गई। वह काम में लग गया। कोई घंटे भर के बाद वह फिर हमारे पास आया, और बोला—“सरकार, यह मिट्टी तो भर दी गई। पर जो नए गड्ढे की मिट्टी है, उसका क्या किया जाय ?”

“अरे भई, यह भी कोई पृथ्वी की बात है ? एक और गड्ढा खोद कर उसमें दाब दो,”—शैतान ने कहा।

माली फिर चला गया। कुछ देर बाद हॉरता हुआ आया, और बोला—“हुज़ूर, वह मिट्टी तो दबा दी गई। पर अब नये गड्ढे का मिट्टा कहाँ फेंका जाय ?”

“इमें नहीं जानते,” शैतान झुंझा कर बोले—“मामूची सी बात है। एक और गड्ढा खोद लो।”

और माली बेचारा सिर झुंझाता हुआ चला गया। इतने में जज साहब आ गये, और यहीं बैठ गये। हम खेजों के सम्बन्ध में बातें करने लगे।

“तुम्हें कौन-से खेल पसन्द हैं ?” जज साहब बोले।

‘कबड्डी और पोज़ो।’

“कोई छाम अछे खेल तो हैं नहीं,” वह बोले।

“आपकी कौन सा खेल पसन्द है ?” शैतान ने पूछा।

“उसे खेल तो नहीं कहा जा सकता। मुझे घुड़दौड़ बहुत पसन्द है। जब योरोप में था, तो बड़े शौक से घुड़दौड़ देखा करता था।”

“माफ़ कीजिये, मुझे घुड़दौड़ बिल्कुल पसन्द नहीं,”—शैतान बोले।

“यह क्यों ?”

“देखिये, यह तो सब जाते हैं कि कुछ घोड़े कुछ घोड़ों से तेज़ दौड़ते हैं, और यह भी लाजिमी बात है कि अगर बहुत घोड़े दौड़ेंगे, तो कुछ धागे निकल जायेंगे और कुछ पीछे रह जायेंगे, और आखिर में एक घोड़ा सब से धागे निकल जायगा। मला यह जानने का क्या ज़म्मत है कि कौन-सा घोड़ा धागे निकलता है। या तो यह हो कि कोई धागा धरना दोस्त हो, तो आदमा उसे देखने चला भी जाय, नहीं तो सब धाड़े एक-से हैं।”

जज साहब से काई जवाब न बन सका। कुछ देर साधत रहे, फिर मुस्करा कर बोले—“लाहौल विज्ञानवत !”

×

×

×

मुझे और शैतान को एक बहुत बड़ा दावत में बुलाया गया। बंद-बंदे

लोग आये हुये थे। जन साहय और बगम साहय न जा सके, इसलिय हमें पूरा आजादा मिल गई और शैतान उतर आये उखरी साधी हरकतों पर। एक छतरनाक से युग्य हमें बहुत पुरा तरह से देख रहे थे। कुछ मौजाना-से मालूम होत थे। न जान क्यों इस तरह आँखें फाक-फाक कर हमें घूर रह थे। घ त में जब उनसे न रहा गया, ता शैतान से बोळ—“साहयजाद, मैं देख रहा हूँ कि तुम पूरे आधे घटे से उत जपकियों को घूर रहे हो। यह बहुत पुरा बात है।”

शैतान बोळे—“किबका! घूरना दो किस्म का हाता है—‘घूरना बिलतहनाक’ (खोज क लिये) और ‘घूरना बिलतक्राह’ (मनोरजन के लिये)। यह खाकसार इस बात पहली बात कर रहा है, क्योंकि मुझे यभा किसीने बताया है कि उन खानून (महिला) का नाक तिर्छा है और एक आँख बही है और एक छोटा।”

मौजाना कुछ कहने ही वाले थे कि शैतान जल्दा से बोळे—‘और आप बहें क्यों नहीं मना करत, जा तत्रराह के लिये घूरत हैं। एस यहाँ बेशुमार लोग हैं। मिलाब के तौर पर उन साहय को (इशारा करके) हा ले जागिये, जो ‘ज़ेर मूँछ (मूँछ के नीचे) मुस्करा रहे हैं।’

‘ज़ेरे मूँछ मुस्करा रहे हैं। क्या मतखय हुआ?’

लोग ‘ज़ेर-खय (होंठों के नाच) मुस्कराया करते हैं, लकिन हाका मूँछे इतना घना और रूँदवार हैं कि हम उस मुस्कराहट को महज जेरे मूँछे मुस्कराहट हा कह सकते हैं। शायद यह साहय बड़े क्र १ (गय) से कहते होंगे कि—‘मूँछा के साए में हम पल कर जहाँ हुए हैं।’

बात शुरू कहाँ से हुई थी और जा पहुँचा कहाँ! मौजाना खितियाने हो कर बोळे—‘रैर! कुछ भी हो, यहरहाज इंसान को परहेजगार होना चाहिय।’

‘मैं परहेजगार हूँ,’ शैतान बोळे।

‘तुम और परहेजगार! खूब!

‘जी नहीं, मुझे फ़य है कि सुदा के फजल से मैं परहेजगार हूँ और सुदा ने चाहा, तो हमेशा रहूँगा। परहेजगार वह आदमी है जाखटाई, चिकनी और गम चीज़ों से परहेज करे, और यह मैं करता हूँ।’

इतने में कुछ मेहमान था गए और उनस हमारा परिचय कराया गया। वह मौजाना इधर उधर हो गए। जहाँ चारों तरफ शेर गुळ मचा हुआ था

वहाँ हमने एक साहब को देखा, जो सुपचाप बैठे थे, जैसे तपस्या करने को बैठे हों। शैतान भी वहाँ पहुँचे, और उनसे बोले—“अगर जनाब पुरान मानें तो एक बात पूछें ?”

“कहिये ।”

“आप सुप क्यों हैं ?”

“यम यों हा ।”

“तो, साहब, अगर आप अक़मन्द हैं तो निहायत बेवकूफी कर रहे हैं, और अगर बेवकूफ हैं, तो निहायत अक़मन्दी कर रहे हैं ।”

और वह महाशय सोचन बैठ गए कि इसका मतलब क्या हुआ ।

इधर उधर दूढ़ने पर यह मौलाना हमें फिर मिल गए, और पहले की तरह फिर बड़े गुस्से से हमें घूरने लगे । शैतान चाहते थे कि उनसे बातें हों, किन्तु कोई बहाना नहीं मिलता था । इतने में कुछ छोटे-छोटे बच्चे का महिलार्षि दाखिल हुई । बिलकुल छोटा छोटी थी ।

शैतान जल्दी से बोले—“देखिये जनाब, ये ‘पेंगुइन सीरीज’ की औरते हैं !”

और मौलाना ने बड़े ही सतरनाक ढंग से एक ‘हूँ’ की ।

उसी समय एक अत्यन्त दुबले साहब एक अत्यन्त मोटे महाशय के साथ दाखिल हुए । दोनों में इतना अफिद अंतर था कि दाना एक दूसरे को पुरा तरह प्रकट कर रहे थे ।

शैतान उन युजुर्ग के पास सरक कर बोले—“वह देखिये, जनाब उनमें से एक ‘इस्तेमाज से पहले’ हैं, और दूसरे ‘इस्तेमाज के बाद’ हैं ।” वह नायब समझ न सके ।

शैतान बोले—“आपने ताकत बढ़ाने वाली दवाइयों के इस्तेमाल तो किये होंगे । वहाँ इस्तेमाज से पहले और इस्तेमाज के बाद भी देखा होगा । यहाँ चाहे आप वहाँ देख लीजिये ।”

इस बार तो इन्सान बहुत ही पुरा गुँह बनाया ।

एक दरवाजा खुला, और एक छोटा छोटे बच्चे का बच्चा और एक बच्चा ही अल्प महाशय दाखिल हुए । उनमें उद में कोई ताकत का प्रकट का प्रकट होगा ।

मौलाना झकझका कर बोले—“इस पर तुमने कुछ नहीं कहा । कह दो इनके बारे में भी ।”

लोग आये हुये थे। जज साहब और बेगम साहबा न जा सक, हमलिये हमें पूरा आजादा मिल गई और शैतान उतर आये उलटा-साथी हरकतों पर। एक प्रतरनाक-स बुजुर्ग हमें बहुत बुरा साह से देख रहे थे। कुछ मौजाना से मालूम होत थे। न जाने क्यों हम तरह-आँखे पाइ पाइ कर हमें घूर रहे थे। घात में जब उनस न रहा गया, तो शैतान से बोले—“साहबजाद, मैं देख रहा हूँ कि तुम पूरे आधे घटे स उन जबकियों को घूर रहे हो। यह बहुत बुरा बात है।”

शैतान बोले—“कियजा! घूरना दो क्रिम का होता है—‘घूरना बिजतदशाक’ (खोज के लिये) और ‘घूरना यिखतप्रसाह’ (मनोरजन के लिये)। यह साकसार इस बात पहछा बात कर रहा है, क्योंकि मुझे अभी किसीने बताया है कि उन न्वातून (महिजा) की नाक तिर्धी है और एक आँख बंदी है और एक छोटी।”

मौजाना कुछ कहने ही वाले थे कि शैतान जल्दी से बोले—“और थाप स हें क्यों नहीं मना करते, जो तक्ररीह के लिये घूरते हैं। ऐसे वहाँ बेशुमार लोग हैं। मिसाल के तौर पर उन साहब को (इशारा करके) हाँ खे खीजिये, जो ‘जेरे मूँछ (मूँछ के नीचे) मुस्करा रहे हैं।’

जेरे मूँछ मुस्करा रहे हैं! क्या मतलब हुआ?”

“लोग ‘जेरे-खब’ (हाँठों के नीचे) मुस्कराया करते हैं, लेकिन इनकी मूँछ इतना घना और खूँवार हैं कि हम उस मुस्कराइट को महज जेरे मूँछ मुस्कराइट ही कह सकते हैं। शायद यह साहब वक्रे क्र १ (गध) से कहते हंगे कि—मूँछों के साए में हम पल कर जर्बो हुए हैं।”

बात शुरू कहाँ स हुई था और जा पहुँची कहाँ! मौजाना खिसियाने हो कर बोले—“रीर! कुछ भी हो, यहरहाज इ-साग को परहजगार हाना चाहिये।”

‘मैं परहेजगार हूँ,’ शैतान बोले।

‘तुम और परहजगार! रूप।’

‘जा नहीं मुझ फ्रय है कि तुदा के फजल से मैं परहजगार हूँ और खुदा न चाहा तो हमेशा रहूँगा। परहजगार यह आदमी है, जो खटाई, बिकनी और गम चाजा स परहेज करे और यह मैं करता रहूँ।’

इतने में कुछ महमान आ गए और उनस इमारा परिचय कराया गया। वह मौजाना इधर उधर हो गए। जहाँ चारों तरफ शोर गुल्ल मचा हुआ था



शैतान बोले—“अजी क्या ख़ाक कहीं ? साफ़ ता है कि गुरुजी बयदा आ रहा है ।”

इतने में खाना शुरू हो गया । हम दोनों जान-बूझ कर उन साहब के पाम धेरे । शायद उन्हें मज़नी बहुत पसंद था, अतएव उन्होंने कई बार मज़ला मँगवाई । अब जो वह मज़ली मँगवाते हैं, तो नौकर कई इधर उधर की चाज़े ली दे जाता है, किन्तु मज़ला नहीं खाता । स्पष्ट था कि मज़ली खरम हो गई है । किन्तु मौलाना बार बार यही कहे जाते थे कि मज़ला लाओ । नौकर बेचारा साफ़ जवाब नहीं दे सकता था और हाँ भी कह जाता था । आखिर उनसे न रहा गया । बोले—“पह कमबख़्त मज़ला क्यों नहीं खाता ? और अब तो शायब ही हो गया । न जाने कहीं मर गया ?”

“मज़लियाँ पकड़ने गया है ।” शैतान बोले ।

और एक बहुत ख़ोरा का ठहाका पड़ा ।

दायत के बीच में ही बाहर ज़ारा से वषा होने लगी थी, अतएव खाने के बाद यद निश्चय हुआ कि वर्षों के रुकने का इतज़ार किया जाय और उतना देर काज़ी और चुकड़ों के दौर चले ।

सब लोग चुप हो गए । और एक साहब ने ( जो मुन्त ही, सम्रावति बना गिये गए थे ) किमा एक का नाम लिया और कहा—“आप अपने जावन की कोई सच्चा घटना सुनाइये ।”

उन्होंने सुना दिया । चौथा नम्बर शैतान का था । चूँकि पहले बहुत ही कठण कहानियाँ सुनाई गई थीं इसलिये सब लोग सहमे बैठे थे । शैतान बोले—“महिना और भाइयो ! यह घटना मेरे जावन में माल के पत्तर का काम देता है । इसने मेरे जावन पर सब से अधिक प्रभाव डाला है ।”

और सब चुप हो कर बड़े ध्यान से सुनने लगे ।

यह उन् दिनों का बात है जब मैं गदका खेला करता था । वैसे अब भी मैं अपने कॉलेज का सब से अच्छा गदकावाज़ हूँ पर उन दिना बहुत ही अच्छा गदका खलता था । एक दिन हम सब कॉलेज क बरामदे में खड़े थे । मूसलाधार पषा हो रही था । हम इतज़ार कर रहे थे कि कब पाना बन्द हो और बाहर निकले । इतने में हमने देखा कि एक जुगनू उड़ा जा रहा है ।”

“दिन में जुगनू ?”—बड़ा मौलाना बोले ।

“ना हाँ, या जुगनू की त्रिस्म का कोई और पषा होगा ।”

‘जुगनू पषा है क्या ?’ मौलाना बोले ।

“अजी क्विबला, जो चीज़ उदती है, वह पथी है। हाँ तो, साहब, सब लड़कों का जी ललचाया कि उस पक्के। मगर वारिश की वजह से किमी का हिम्मत न पड़ी। आखिर मैं बाहर जान लगा। लड़कों ने मना किया कि भीग जाओगे। मैंने एक न सुनी और बाहर निकल आया। गदके का माहिर (विशेषज्ञ) था। एक बूँद आई, उसे गरदन के एक झटक से बचा गया, दूसरी आई, उसे एक और हट के बचाया तीसरी आई, उसे कमर को हिला कर बचाया। गरज इसा तरह मुड़ता तुड़ता तरह तरह के पैतर बदलता हुआ मैं ऐसी मूसलाधार वारिश में उस जुगनु को मार पकड़ लाया। और जब बरामदे में लौट कर आया, तो मेरे कपड़ों पर एक बूँद भी न थी।”

अब जो ठहाकें लगे हैं, तो वातावरण की गम्भारता एकदम खतम हो गई। सभापति महोदय उठ कर बोले—“साहब! हम आप से एक गम्भीर घटना का वर्णन सुनना चाहते हैं, और आप को दस मिनट दते हैं। इस दरमियान में दूसरे सज्जन एक चुन्कुला सुनाएँगे।”

अब यह वहाँ महाशय थे, जो इतनी देर से गुन सुम बैठे थे। चेहारे घबरा गए। सोचा कि यह क्या आगत आई। बहुत चाहा कि पीछा छुड़ा लें, किन्तु वहाँ कौन सुनता था। आखिर तग आ कर बोले—“मुझे तो कोई नया चुन्कुला याद नहीं। हाँ, एक पुराना छुटकला याद है, जो मैंने पहले किताब में पढ़ा था। वह यह है कि एक जगह चार बन्दूकें बैठे थे। एक बोला कि अगर दरिया में आग लग जाय, तो मछलियाँ किधर जायें? दूसरा बोला—पेड़ों पर चढ़ जायें!”

“अरे साहब, वह तो सही थे। वह चौथा बेवकूफ आप कहीं स छाए?” एक और से आवाज़ आई।

“चौथे ये खुद थे,”—शैतान बोले। और लोग चीखें मार मार कर हँसने लगे।

अब सभापति महोदय ने शैतान से कहा कि वह एक गम्भीर घटना सुनाएँ।

शैतान बोले—“आज से कुछ साल पहले की बात है। इसी कमरे का जिव है। मैं यहाँ जाकर साहब (मेज़बान के लड़के) के साथ आया था। वही रात के दस बजे थे। बिलकुल ऐसी ही वारिश हो रहा था। मैं घर न जा सका और मुझे इसा कमरे में सोना पड़ा। (इशारा कर के) मेरा दिस्तर यहाँ बिछा हुआ था। मैं बिस्तर पर लेट गया। मेरा सिगरेट प्रथम हो गया, और मैंने



उसे येज़बरा को हालत में एक तरफ़ फेंक दिया। फिर अचानक मुझे ख़याल आया कि नाचे फ़ाज़ीन बिछा हुआ है। ज़लता सिगरेट फेंका था। उठ कर जो देखता हूँ सो पलंग के नीचे से सूज़ा हुआ एक हाथ निकला और सिगरेट को उठाकर पलंग के नाचे गायब हो गया।”

शैतान कुछ रुके। दखा, लोग सहम गए हैं।

‘और साहबान! मैं विरवाम के साथ कहता हूँ कि वह हाथ किसी जावित मनुष्य का नहीं था। विज़कुज़ सूज़ा हुआ पीला हाथ था। और, मैंने हुज़ान की आयतें पढ़ीं। सोचा कि शायद मुझे यहम हुआ होगा, और कुछ गुनगुनाने लगा। सोचा कि अब सो जाना चाहिये इसलिये मैंने यों हा कइ दिया—‘घरे यह विज़जी जल रही है इसे बुझाना तो भूल ही गया’। यह कह कर मैं उठने लगा था कि टिक’ का आवाज़ आई, और कितना ने विज़जी बुझा दी। अब जो मैं हम कमरे से हड़बड़ा कर भागा हूँ तो पाछे घूम कर नहीं देखा।

“फिर क्या हुआ?” एक और से आवाज़ आई।

“फिर हमने इस मकान का कोना कोना तलाश किया पलंग के नाचे भी देखा, पर कुछ न मिला। सो हम कमरे में ग़रूर भूत प्रेत है। और घरे! यह सुर्गी कहाँ से आ गई?” शैतान ने एक अंधरे कोने का और इशारा कर के कहा। सब लोग उठ गये हुए।

घर! शैतान ने उछलते-भूदते हुए कहा—‘गज़ब खुदा का! यह सुद सुदा कौन रहा है?’ और एकदम से उछलन लगे।

‘यह मेरे कानों में कौन चाख रहा है?’ शैतान चिल्ला कर बोले—‘और यह परदे के पाछे से ऊँच क्यों झोंक रहा है?’

और कमरे में हलचल मच गई। शैतान ने मुझे इशारा किया और मैंने खुपके से बिज़ला बुझा दी। अब जो धमा चौकड़ी मची है, तो न पूछिये। सब के सब कमरे से बाहर निकल आए और बाहर बरामदे में खड़े हो गए।

थोड़ी देर बाद लोग अपने अपने घरों को जा रहे थे। वह मौलाना भी साथ थे, और नाचे सड़क पर झोंक रहे थे। शायद उह किसीका इतज़ार था। इतने में एक टोंगा गुज़रा। मौलाना चिल्ला कर बोले—‘भई, ठहरना! सुन्दारा टोंगी राजा है क्या?’

उधर टोंगेवाले ने सुना ही नहीं। मुझ बढ़ी हँसी आई। लेकिन रूक्री बड़ा गम्भारता से बोले—‘कियला, अगर आप या प्ररमाते सो बेहतर था कि सुन्दारी ग़ाबा टोंगी है क्या?’

मौलाना और गए। उनके मुँह से शब्दों से निकल गया था। धीरे धीरे वह भयभीत अवश्य थे।

टोंगे का इन्तज़ार होता रहा। शैतान मौलाना से बोले—“श्यों, साहब, आपकी ‘बन्नी’ में क्या ‘घड़ा’ है ?”

“बारह बजने वाले हैं,” शैतान का व्यंग्य समझ कर भी मौलाना धीरे से बोले।

“मेरे प्रयास में अब चढ़ता चाहिये। सड़क पर टोंगा ज़रूर मिल जायगा।” और हम तीनों नीचे उतरने लगे।

“त्रिचला ! इन सादियों के बारे में भी एक पुर घसराह ( रहस्यपूर्ण ) त्रिस्ता महशूर है, जिसे मैं थँधेरे में सुनाना नहीं चाहता।” और मौलाना और भी धीरे धीरे उतरने लगे।

अजी, आप तो हिज़ने करक उतर रहे हैं। ज़रा जवदी कीजिये !”—शैतान बोले।

“वैसे हा ज़रा ये चिकनी मोदियाँ हैं कहीं ?”—वह बोले।

“जो हों ठीक है। मोदियाँ उतरते घड़ने बकत अज़र टपवाल रखना चाहिये, वयों कि परसों की बात है कि मैं जवदी नल्दी जाने से उतर रहा था। एटाएक खो एक ‘फिसला’ से ‘सोडा’ तो दूर तक सोड़ता हुआ चला गया।”

मौलाना ने एक बार मुस्ते से घूम कर देखा ज़रूर, पर कुछ बोले नहीं।

×

×

×

शैतान को रुपये की सज़न ज़रूरत हुई। मेरे पास भाये। महीने का अन्तिम तारोंसे थी। मैं अपना जेब-बुक और रटाकरशिप आदि सब ज़रूफ कर चुका था। सोच-विचार के बाद निरवयव हुआ कि दुद्रुमत आपा सर्व अमीर रहती हैं इनसे उधार लिया जाय।

शैतान दुद्रुमत धारा के पाम गये, और बोले—“ज़रा बाता में अज़िये। आप से कुछ कहना है।” उन्हें ताज़ुब हुआ। बाग में पहुँच। वहाँ शैतान ने मुझसे कहा और बोले—“अरे, वह तो वहाँ कमरे में कहना था।” अब फिर कमरे में पहुँचे। वहाँ कुछ देर सोचत रहे, फिर बोले—“मैं भा देना गंगा हूँ ! दरधातक बात तिर धन पर बढ़ी जा सकती है !” मैं यह सारा हमारा देख रहा था। ज़रा-सी बहस के बाद दोनों लुग पर पहुँच। वहाँ जा कर शैतान ने दुद्रुमत का कि यदि वह बात बाग में सुनाई जाय, तो अज़ा रहेगा। और

दुष्टमत थापा सखल गर्ह । रीर, धार में पहुँचे । यह वाली—“अब मैं यहाँ से हरगिज न हिलूँगी ।”

शैतान बोले—“तुम इन दिनों मुझ बहुत खर्चा खग रहा हो ।”

और दुष्टमत थापा तुरन्त बोली—‘क्या दरखसत मेरे पास नहीं है ।’

शैतान बोले—‘यज्ञी करो कि तुम बहुत खर्ची खग रहा हो ।’

यह शर्मा—‘बखान काजिये कि मैं इस पत्रत बुझ भी करूँ नहीं दे सकता ।’

शैतान न पत्रा से कहा—“कहाँ कौन मजबूत मोगता है ? मैं तो सिध यह कहा चाहता था कि तुम बहुत खर्ची खग रहा हो—परसा स ।’

इसा तरह दर तक जगता-साधा हॉलन के बाद दुष्टमत थापा को विरवाम दिखायो कि यास्तव में सख कहा जा रहा है । यह शर्मा गर्ह, और धारे स बोले—‘क्या खर्चा खग रहा है आगिर ?’

‘पुत्रा जाने क्या खर्चा खग रहा है । लेकिन परसों से मेरी हालत पराब है परसों से ।’

‘परसों क्या बात थी ऐसी ?’—उन्होंने और भी शर्मा कर कहा ।

परसों जब तुम अपने कमरे में बैग बिसूर रहा थी, तो बस उस धार तुम मुझे बहुत ही खर्ची लगी । मैं इस इ तजार में रहा कि तुम रोना कब हो । लेकिन अब चाँसू एक पैर भी न निकला तो मेरी आँसुओं का खून हो गया । काश कि तुम जोर-जोर से रोती ! खर ! इस धार जब कभी रोने का प्रामाम हो, तो मुझ जस्त्र बुझा लेना ।”

×

×

×

अब तक हमें पता ही न चल सका कि रजिया किसके धारे में हर बफ सोचती रहता है । धिये हमें यह विश्वास अवश्य था कि उसे किसी न किसी का खयाल जरूर रहता है । चौथीय घंटे शैतान का और भी बहम रहती । वह मुझम थापाव धर्मीव हरकतें करवाते । एक दिन बोले—‘रजिया को मूँछें पसन्द हैं, तुम रख लो ।’ मैंने ग्य ली । फिर बोली—‘उसे बराबर मूँछें पसन्द नहीं । एक तरफ का बचा हो, दूसरी तरफ का छागी ।’ मैंने कुछ दिन अपना हँसी उड़वाइ । फिर बोले—‘उसे मूँछें पसन्द हा नहीं ।’ अत साफ करा दी गई ।

एक दिन मुझे रजिया को उसकी सहजा के यहाँ छोड़न जाना था । शैतान बोले—‘तुब धाँड़े से कपड़े पहिन कर जाना । रजिया के साथ चलोगे, शान रहेगी ।’

मैंने पूछा—“रज़िया को किस तरह का लिबास पसन्द है ?”

शैतान बोले—“धूम इसी वक्त जा कर लाज रंग का पतलून पहिन लो। हरे रंग का कोट, पीले रंग की टाई, घाउन जूते, नाखी कमीज़ और काफ़्ताई रंग का रुमाज़। जाओ, अभी पहिन कर था पाओ।”

और जब मैं और रज़िया साथ साथ चज़ रह थे, तो जो भी हमें मिलता वह न केवल आँखें फाड़ फाड़ कर मुझे देखता, बल्कि देर तक घूम घूम कर देखता जाता !

आज़िब, रज़िया बोली—“यह आपको सूझी क्या थी ?”

“क्या ?”

“यह लिबास कैसा पहिन आए है आप ? विट्टुब ‘टेकनीकलर’ बने हुए हैं।”

एक दिन अचानक शैतान ने एक लाजवाब योजना सोची कि एक नाटक खेला जाय, जो मरे नाम से मशहूर किया जाय और इन्तज़ाम सारा शैतान करेंगे। योजना सुन्दर था। रज़िया पर इसके द्वारा थोड़ा सा रंग जमाया जा सकता था।

पूरे एक महाने की तैयारियों के बाद हमने एक रोमैन्टिक नाटक तैयार कर लिया। सब नाटक के नाम का सदाख़ आया, ता शैतान बोले—“हमका नाम ‘बेगुनाह ऊँ’ ठीक रहेगा।”

“लेकिन इसका साट तो रोमैन्टिक है, और हममें ऊँ कहीं भी नहीं आता।”

“आप बल खोग ऐसी बनूँगी शुरू पर तो साग हो देने हैं। सब से अच्छा नाम ता यही है। और भी नाम हैं जैसे ‘शुक्रलित आशिष’ या ‘महामूर्ख’ या ”

और मैं तुरन्त मान गया।

“अच्छा अब इसका ‘उर्ज़’ तैयार होना चाहिये। उर्ज़ के बग़ैर तो कुछ हो हा नहीं सकता। अभी अभी मैंने एक बहुत ही अच्छी रोमैन्टिक कहानियों की किताब पढ़ी है, जिसका नाम था ‘अमरुद और सितारे’ उर्ज़ ‘बिहियों और कहकियाँ’। इस उर्ज़ के शुरू पर इतना आर किया कि मरे ऊँ के निकल आये।”

“तो फिर सब छो उर्ज़ या। क्या रहस्योमे ?”

“मेरे दावाज़ में तो ये ये ही कह रहेगा—‘बेगुनाह ऊँ’ उर्ज़ ‘बा दिन्न...मुझे

मार । "लेकिन हममें बैज भी कहीं नहीं आता ।" मैंने बीच ही में टोका ।  
 "फिर वही बेरूहकों बाजा घातों की उमने,"—शैतान ने कहा । और मैं  
 मान गया ।

मुझे शाहजादा बनाया गया । शैतान ने अपना असली पाटँ स्वाकार कर  
 लिया, याना वह शैतान का पाट करत थे । एक साहब 'परियों की शाहजादी'  
 बनाये गये, और उनकी हजामत इस पुरी तरह बनाई गई कि बेइरा सुरख  
 दिया गया । शहर के सभी सम्मानित व्यक्ति आमंत्रित किये गये । सब से बड़ी  
 यान वह थी कि सर कमर भा पवारे थे, जिन पर हमें गर्व था । कलब में द्रामा  
 किया गया । एक बहुत बड़ी भीड़ के सामने परदा उठा ।

मैं एक शैंपेरे याना में कूदा, और वहाँ परियों का शाहजादी पर आशिक  
 हुआ । इतने में चन्द्रोदय होना था और मुझे एक दर्द भरा सवाद योजना  
 था । अब मैं आशिक हो कर चाँद का इतजार कर रहा हूँ । उधर चाँद है कि  
 निकलता ही नहीं । अन्त में तग आ कर मैंने बिना चन्द्रोदय के ही सवाद  
 योजना शुरू कर दिया । इतने में एकाएक चन्द्र उदय हुआ, और बड़ी तेजी  
 से आसमान ( मख ) को पार करता हुआ दूसरी ओर चला गया । एक  
 ठहाका पड़ा । कि तू मैंने अपना सवाद जारा रक्खा । अब चुपके से चाँद फिर  
 निकल आया और मैंने एक घुग्ने के बल झुक कर दाहिना हाथ पदा कर कुछ  
 कहना शुरू किया ही था कि दखता क्या हूँ कि चाँद दूसरी ओर पहुँच चुका  
 है । अब जो उस ओर मुँह करता हूँ, तो चाँद इधर आ गया । सारांश यह  
 कि मेरा और चाँद की पूरा आँखमिचौली हुई, और खूब ठहाके लगे ।

इसी तरह एक समय त सुन्दर दरय पर एकदम सारे त्रिजली के छट्टे बुझ  
 गए और जब दोषारा जले तो सारा मजा फिरकिया हो चुका था । अब जो  
 परदे का सुमीयत शुरू हुई है तो मैं झुम्का उठा । ज़रा अन्धसा दरय  
 आया और एकदम से परदा गिर गया, और लोगों ने सालियों धजानों शुरू  
 कर दीं । और, बड़ी कठिनाइयों के बाद हाव-सीन हुआ । शैतान साहब स्टेज  
 पर थाए और कहने लगे—“मदिल्लाओ और सज्जनों ! मैं नाटक के लेखक  
 ( मेरा नाम ले कर ) के आग्रह करने पर उनकी ओर सर कमर से प्राथना  
 करता हूँ कि वह स्टेज पर ताराक ला कर दशकों को एक डुमरी या दादरा  
 सुनाएँ । हमारा तबलची बहुत हा होशियार है । सर कमर चाहे जैसी शगिनो  
 छुँ दें, वह साथ चख निकलेगा ।”

अपस्थित जन एकदम चुप रह गए, और सर कमर अपने कुटुम्ब के सहित

उठ कर चले गए । इतना अवकाश ही न था कि मैं शैतान से कुछ कहता ।

परदा उठा । थोड़ी ही देर में शैतान का पार्ट शुरू होना था । अब जो शैतान को हँडते हैं, तो वह शायद । बड़ी परेशानी हुई, निश्चय हुआ कि जल्दी से एक और शैतान बनाया जाय ।

दृश्य था कि परियों की शाहजादी बाग में टहल रहा है और उसे एक ठहाका सुनाई पड़ता है । वह बौंक कर कड़ती है—“मे सनभक्तो हूँ कि तू शैतान है, और मुझे डराना चाहना है, लेकिन मैं तुझ पर धिक्कार भेजती हूँ । थो नालायक शैतान ! मूर्ख कहीं के, बेवकूफ !” यह कह कर वह एक गाना गाती है ।

ठहाका मक्कली शैतान से लगवाया गया । नायिका ने अपना संवाद बोल दिया । एकएक एक धमाका हुआ । स्टेज की छत से एक खपट सी निकली, और कोई विचित्र चीज़ कूरी जिसका रंग हरा था । धौला की जगह दो चिनगारियाँ दहक रहा थीं, दो चमकीले सींग थे, लुकीले कान ऊपर का उठे हुए थे । बड़ी हा भयानक आकृति थी । नायिका ने एक हृदय विदारक चीख मारी और खड़ी की खड़ी रह गई । हम सब हैरान रह गए । अब जो और से देखते हैं तो ये असला शैतान (रूनी) थे, जो अपना मेक अप स्वयं कर थाण थे ।

नायिका इतनी डरी हुई थी कि उसने एक विचित्र पेड़गे स्वर में गाना शुरू किया—“रस से भरे तारे नयन ।” उसका राग बिलकुल अँगरेजी मालूम पड़ता था । शैतान ने अत्यन्त भयानक स्वर में हँसना शुरू कर दिया, और थियेटर हाल के सारे बच्चे बिल्ला बिल्ला कर रोने लगे । जो भी बच्चा रोता था, उसे धर भेज दिया जाता था ।

अब जो शैतान ने डरावना अभिनय शुरू किया है, तो दर्शकों पर सत्राटा छा गया । एक एक करके सभी स्त्रियाँ चली गईं ।

सारांश यह कि शैतान ने जो प्रोव कर धमा चौकड़ा मचाई । नत में तो यहाँ तक नीबत पहुँच गई कि शैतान ने अपने मन से सत्राट योजना तथा प्रत्येक दृश्य में मच पर आना शुरू कर दिया चाहे वतका पार्ट हो या न हो । एक दृश्य आया, जहाँ शैतान को मेरे एक मंत्र पढ़ने पर मर जाना चाहिये था । मैंने कई धार मंत्र पढ़े किन्तु शैतान उस से मच न हुए । मैंने सुपके से कहा—“अब मर भा जाओ ।” प्राग्ग्यर ने कहा—“मर भा जाइये, रूनी साहय !” मच के पीड़े से आवाज़ आई—“मर भा जाइये, जनाव !” लेकिन

यह फिर भी न मरे। अतः मैं मने गुस्से से कहा—“अब मरते हो या नहीं ?”  
शैतान जोर से बोले—“नहीं मरने।” और दण्डक हँसने लगे।

‘अच्छा, तो यह बात है। ठहरे फिर ?’ मैं सचमुच उठने ही लगा था फिर ख्याल आया कि यह शाहजादी की शान के खिलाफ है कि मामूली से शैतान पर हाथ डगमगे। अतएव मैंने ताली बजाई। कुछ सिपाही आ गए। मैंने कहा—“ले चाओ, इस शैतान को पकड़ कर मार डालो।”

“जहनुम में भेज दो।” दशकों में से किसाने नारा लगाया।

“हाँ फल करके जहनुम में भेज दो।”

‘नहीं जाते हम,’—शैतान ने अपने लम्बे-लम्बे मुकीले नारून दिखाते हुए कहा।

‘अच्छा तो फिर खाइलबिलाइवत !’ मैंने जोर से कहा।

और शैतान एकदम तड़प और झल्लाकर मार कर जाने कहीं भाग्य हो गए।

×

×

×

मुझे अब जो विश्वस्त सूत्र से सूचनाएँ मिली, तो मैं खुश से बेकाबू हो गया। मुझे बताया गया कि रज़िया को सिर्फ मरा ख्याल है। ख्याल क्या अत है ! वह खिची खिचा अवश्य रहता है लेकिन इसका कारण हुकूमत आया है।

मैं सीधा जैतान के पास गया, और कहा कि भई अब तो पूरा विश्वास कर लेना चाहिये। मेरी हालत उन दिनों पागलों की सी थी। जो कुछ शैतान कहते थे मैं तुरन्त कर बैठता था। पहले तो उन्होंने अपनी आर्त के अनुसार मुझे रज़िया से बेजार करन का काशिश की, उसके ख्याल से बात आ जाने के लिये कहा। जब मैं न माना तो उन्होंने कहा कि दुनिया बहुत बुरा है और रज़िया की निगाह भी कमजोर है। मैं फिर भी न माना तो उन्होंने एक डटपटीय सी योजना बताई कि मैं रज़िया से शादी में मिलूँ, छोटे समय अनारों के मुसद्द की ओर से जाऊँ, और वहाँ जो गद्दा है, उसमें गिर पडूँ और बेहोश हो जाऊँ। रज़िया जरूर तिर दबाएगी। वस मैं बेहोशी ही में बंधवाने लगेँ, और रज़िया से अमल बात साफ साफ कह दूँ। वस उस समय जो अबाध मिलेगा वह अतिस होगा।

मैं हिचकिचाया। शैतान बोले—‘यह आखिरी इतहास है। इस बार जरूर आखिरी अबाध मिलेगा। इतमत कर दा डालो।’

मैं तैयार हो गया। मैंने नन्ही को जासूस बनाया कि जैसे ही रज़िया बाग़ की ओर जाय, मुझे तुरन्त इशारा कर दे। इशारा पाते ही मैं भागा, और रज़िया को बाग़ में जा लिया। पहले तो अपने दूमे के बारे में पूछा। बोली—'कुछ ऐसा बुरा भी नहीं था।' फिर इधर उधर की बातें होने लगीं। जब लौटने लगे, तो मैं उसे अनारों के झुण्ड की ओर ले गया। अब वह छोटा सा गड्ढा था जहाँ मुझे गिरना था। पगडण्डी से गड्ढा दूर था, इसलिये मैं घास पर चलने लगा, और एकएक अनायास ठोकर खाकर मैं गड्ढे में कुछ इस तरह गिरा कि सबकुच चोट लगी। गिरने का रिहर्सल भी तो नहीं किया था।

रज़िया घबरा गई। उसने मुझे होश में लाने के उपाय किये, लेकिन मैं बला कहीं होश में आता। मैंने हिदायत नम्बर तीन के अनुसार धीरे से कहा—'रज़िया! और आँखें मूपका कर देखा भी।'

मैंने फिर धीरे से कहा—'मेरी रज़िया!' और वह मेरे पास बैठ गई। अब मेरा सिर दबाया जा रहा था। कहने को तो मैं 'मेरी रज़िया!' कह गया था, लेकिन मारे डर के मेरा बुरा हाल था। मैंने पूरे एक मिनट के बाद फिर कहा—'मेरी रज़िया!'

और रज़िया चुपके से बोली—'हाँ!'

और मैं मानो आसमान में उड़ने लगा। अब उसने मेरा सिर अपनी हथेली पर रख लिया, और मेरे बालों में अँगुलियाँ चलाने लगी। निश्चयतमक लबाब मिला चुका था, मेरा जो चाहता था कि नाचने लगूँ। रज़िया का अँगुलियाँ बालों से खेजती-खेजता गरदन तक पहुँची, और मुझे एकदम जोरों से गुदगुदी लगी तो सारे पल कर दाले, आँठ चपाये, अपनी चुन्कियाँ खीं, बहुतेरा रोका, किन्तु वह कमबख्त गुदगुदी काधू मैं न चाह, और मैं खिलखिला कर हँस पड़ा। अब जो रज़िया नाराज़ हुई है, उस न पृथ्विये।

×

×

×

दूसरे दिन शाम को अत्यन्त उदासी के साथ मैंने शैतान का सारा किरमा सुनाया। यह बोला—'बैया, पहले ही से मुझे शक था, लेकिन अब मुझे पक्कीन हो गया है कि रज़िया तुम्हें पसन्द नहीं करती। इसमें रज की कोई बात नहीं है। किसी का क्या और? और जब मोहरबत का पचाव मोहरबत में न मिले, तो वहाँ से चला जाना चाहिये। पेमे मौकों पर भावोइवा का वद खना बहुत खरबा होता है। अब यहाँ रह कर मिशाय रमोगम के तुम्हें कुछ न मिछेगा। इसलिये अरदा यहा है कि, बैया, तुम वहाँ से चले जाओ, और



समझ लो कि रज़िया को कभी देखा हा न था।”

मैं और भा उदास हो गया। मैंने भरे हुये स्वर में कहा—“अब मैं जहाँ भी जाऊँगा बहुत हा उदास रहा करूँगा क्योंकि रज़िया मुझे इतना अच्छी लगती है जिसका कोई हद नहीं। अब मैं उसे हरगिज़ नहीं भुला सकता।”

इस तरह का बातें करते रहे। आज़िज़ शैतान ने मनवा कर छाड़ा कि इस समय मेरे लिये अच्छा यही है कि मैं चुपके स चला जाऊँ बिना जज साहब स बातलाये।

“और कालेज के सर्गिक्रेट ?” मैंने पूछा।

“वह सब मैं भेज दूँगा,”—शैतान बोले। और थोको देर बाद मैं सामान बाँध रहा था। शैतान मेरा मदद कर रहे थे।

इतने में हुकूमत आया आ गई। पीछे पीछे नहा भी, जिसे वह सदैव अपने साथ रखता थी। मैंने जल्दा से सडूक बाद कर दिया। मुझे हुकूमत आया बहुत बुरी लगी।

मेरी और शैतान की वही इच्छा थी कि यह किसी तरह यहाँ से चली जायें।

शैतान बोले—“नहीं, देख तो सही साथ के कर्मरे में जो बलाक है, वह चल रही है, या खड़ी है ?”

महा लौट कर बोला—“बलाक चल तो नहीं रही है, खड़ी है, बस अपनी दुम हिला रही है।”

शैतान नहीं से बोले—“ता गोया चल रहा है न ?”

“चल कहाँ रहा है ? चल किस तरह सकती है थकारी ? कालों से तो गाड़ रक्खा है। बस अपनी दुम हिला रही है। —नहीं बोलो।

हुकूमत आया हँस दो।

शैतान चिढ़ कर बोले—“यह थकी हो कर पूरी हुकूमत बनेगा। शायरा है, हुकूमत ! क्या लाजवाय ट्रेनिंग दी है तुमन इस बच्चो को ! सरपानाश कर दिया !” हुकूमत आया अभी कुछ कहन हो वालो थीं कि शैतान बोले— तुम्हें आदिये कि इस सारे सयत्र पढ़ा कर एक सर्टीफिकेट दे दो, हम तरह कि मैंने पूरे चार साल तक इस बच्चा को अपनी ट्रेनिंग में रक्खा और इमे अच्छी तरह बिगाड़ने का कोशिश का और अब मैं बड़े प्रस ( गर्व ) से कह सकती हूँ कि यह एक दिव्योरी, चटोरा और जिहा लकड़ी बन गई है। लोगों का ट्राइमलाइ अलोचना करने में तो इसने मुझे मात कर दिया है। हर एक से लड़ना-कगदना, चुसुगों का हुबम न मानना, अपना बक्त खराब करना—इन सब

बातों में यह ऐसी होशियार हो गई है कि क्या कहूँ ! जहाँ भी यह जायेगी मेरा नाम रोशन करेगी, मेरी हिमाकतों इसके साथ हैं ।”

और हुकूमत आपा ने एक तेज़-सा जवाब दिया, और बाहर जाने के लिये बठ खड़ी हुई । नन्हों बोली—“भैया, अब तो आप हुकूमत आपा को धमका खते हैं । ज़रा इनकी शादी हो जाने दो, फिर देखेंगे इन्हें कौन धमकाता है ?”

“अच्छा तो हुकूमत की शादी भा होगी ! कान कहता है ?”—शैतान बोले ।

अब हुकूमत आपा उबल पड़ी । बोली—“और तुम्हारा बड़ी होगी ! देख लेना जो कोई खबकी तुम्हारे नज़दीक खड़ी हो जाय । ख़ाहमख़ाह रज़िया को भी परशान कर रखता है और (मेरा थोर सकेत करके) इस बेचारे को भी !” इस पर मेरे कान खड़े हुए ।

और शैतान और हुकूमत आपा की खूब लड़ाई हुई । हुकूमत आपा ने सब कुछ बता दिया ।

मुझे तन-बदन की सुघ न थी ।

मैंने शैतान को कालर से पकड़ लिया, और पूछा—“क्या सचमुच तुम रज़िया को मेरे खिलाफ़ बहकते रहे हो ?”

“हाँ !”

मैंने शैतान को अपनी ओर खींचा और मुक्का ताना ही था कि इतने में जज़ साहब आ गये । वह सदैव की भाँति मुस्करा रहे थे । बोले—“मैंने सब-कुछ सुन लिया है । बैठ जाओ ! जब मैं योरप में था, तो वहाँ एक लड़के से मेरी ख़ाफ़ हो गई । हमारे प्रोफ़ेसर ने हमें भगदते देल लिया । वह बोले कि तुम दोनों के दिलों में एक गुबार है, तिले निकाल देना अच्छा है । तुम किसी न किसी दिन जरूर खड़ोगे । इसके बाद वह हमें राज के मैदान में खं गये और वहाँ हमारी मुक्का बाज़ी करवाई । हम रूब खड़े । वहाँ तक कि दोनों थक कर गिर पड़े । और हम जब वापस आये, तो बड़े अण्डे दोस्त बन गये थे । अब तुम दोनों आपस में जरूर खड़ोगे, इसलिये अच्छा यही है कि हम खोग याग में चलें । तुम्हारा फ़ैसला वहाँ हो जायगा ।”

उन्होंने ग्लोवज़ (Gloves) मँगा लिये, और हम सत्र कमरे से बाहर निकल आये ।

प्लाट में विजला के खटहू जल रहे थे । निरघब हुआ कि वहाँ खड़ाई हो । हमें ‘ग्लोवज़’ पहिनाये गये । जज़ साहब ने घड़ी हाथ में ले ली । हमारे चारों

घोर सारा कुटुम्ब खड़ा था। जज साहब बोले—“कितने राउड ?”

मैंने कहा—“जितने थाप चाहे ?”

शतान बोले—‘तान !’

जज साहब ने कहा—“तीन में तो फैसला नहीं होगा। पाँच सही।”

पहला राउड शुरू हुआ। न जाने मरे हाथ पाँच क्यों शिथिल हो रहे थे। मैं बिना क्लिप्त बचाव के शैतान से पिट रहा था। सब बन्दे मेरी धार थे और मेरा हिम्मत बढ़ा रहे थे। रज़िया एक ओर अकेला खड़ी थी, बिलकुल चुपचाप।

पहला राउड शैतान का रहा। दूसरे में उन्होंने फिर पीटना शुरू किया, और मैं चुत बना खड़ा रहा। यहाँ तक कि मेरा एक मुक्का भी उनको न लगा। बच्चे चिन्ता चिन्ता कर मेरा बस्ताद बदलने का प्रयत्न कर रहे थे, और मैं न जाने क्या सोच रहा था। शापद इस लड़ाई के बाद शुरू-त यहाँ से खड़ा जाऊँगा। एक घंटे की रात को ग्यारह बजे जाती है।

तीसरे राउड में भी यही हुआ। शैतान उड़ल उड़ल कर हमला करते थे, और मैं बचाव तक न कर पाता था। बच्च बुरी धरह शोर मचा रहे थे।

तीसरा राउड प्रथम हुआ। मैं बैंग हा था कि रज़िया ने मेरे कान में कुछ कह दिया। मैंने काँपती हुई आवाज़ में पूछा—“सच !”

वह बोली—“हाँ !”

और मेरा आँसुओं के सामने तितलियाँ नाचने लगीं। मैं उड़ल कर खड़ा हो गया।

चौथा राउड शुरू हुआ। धराम—धराम—धराम—की आवाज़ें आईं। मेरे ग्लाज़ न हरकत का और मेरे सामने शतान येहोश पड़े थे।

वह नाक आउट हो गये थे। जज साहब ने मेरा हाथ हवा में ऊँचा कर के हिला दिया।

और रज़िया मेरे ग्लाज़ उतारने लगी।

हुम्बन सारा बोली—“मुझे पहले हा पता ।”

“पहले हा पता था आपको ! क्या न ?”

और रज़िया बड़ा प्यारा मुँह बना कर बोली—“मुझे भी पहले ही से पता था !”

हुए। तो उन्हें बड़े ही फर भी ठीक तरह बाल बनाने का आदत नहीं हुई थी। चाप तो अर्म्मा को सलाम किया और पूछा—“बची जान, यह कौन ज्ञानम है?” जैसे उसे पहिचान भी नहीं सकते थे। जब अर्म्मा ने कहा—“बनूज है।” और अर्म्मा भी बची सीधी है, जैसे उनके मंगल का नवाब देना जरूरी था, तो सुन कर मुमकराने खगे और कहा—“बनूज ? अच्छा ! मैं समझा था लछा की राजकुमारा है।” यस इसके बाद देख देख कर मुसकराते ही रह, जैसे किसी बात का आनन्द ले रहे हों।

बनूज को याद आया कि बचपन में मामा हमें 'लछा का राजकुमारी' की कहाना सुनाया करते थे और यह कहा करते थे—“मैं भा लछा का राजकुमारी को स्थाइ कर जाऊंगा।” जैसे ही यह बात याद आई, शर्म से उनका मुँह लाल हो गया। अंत उठा कर भा ग देख सकी। यह स्थान न थाया कि शायद बचपन का बात इन्हें याद हो न रही हो, या शायद सयोग ही में उनके मुँह में यह शब्द निकल पड़े हों। मगर शायद वह अभी उनका धार ताक ही रह थे। करने लगे—“अनार के फूल बहुत गुबसूरत होते हैं, मुझ ताब दूत पमन्द हैं, कार का पतल नहीं क्या, बची जान ?” अर्म्मा बचारा उन बातों को क्या समझे ? उन्हें क्या पता था कि आपने हर एक के खिये एक-एक पूर चुन कर क्या था कि यस अभी प्रेसजा कर लो। बाद में न कहना कि मुझ अरना पूर पमन्द नहीं। और उसके खिये धार में स्वयं अनार का पूर चुना था।

अब बनूज मोच रही थी “य घर ही पर होंगे। अब उनके पाम बैठना ही होगा। पास तो नहीं, क्याकि उन्हें तो दिमाके पाम बैठना पमन्द हा नहीं था। इस ता दर्शक थे। दूसर आये उधर गये। अर्म्मा की तरफ देखा, क ई मग्राज किया, किमा की हँसी उभाई, किमाको देखा बजइ शनिदा किया, दिमा की तरफ दूर कर मुसकराते हा रहे। उनही कार कोई दने हा क्या और उनसे कोई बात हा क्या करे ? उनका बेरबारा का काइ सारा नहीं रहना। अरना बनबारा की शारी में, दम दिनों में क्या एक घड़ा का भी अघटाग नहीं मिल सकता था कि शाल और कोई बात हा बगते, कुप प्यते हों ? अरिअर खेग धारस में हर प्रकार की बगते किमा करते हैं। पर वह जाने मो पैसे बेरबारा हा, देखते ता इतना बरबराही मे जेग जान-दियात हा नहीं, जेग बनार में दिमा और का घमिलाव ही नहीं। जैसे दूसर हा का आग का जा सकता है। बनूज ने यह मोचने-आचने निधय किया कि इसे धरन पर जान में पूरा भा सुनी नहीं है—जरा भी आनन्द नहीं है और यह आता कि शेरम पर अग आर्यो दुराग-आय है।

है। वय आते और दो एक मिनट दख कर शामिल हो जाते और उस समय उनका चहरे से प्रसन्नता यों पूट पूट कर निकलती कि कोई उन्हें खेजाने से इनकार न करता। और इससे बहुत बहुत कुड़ा करती कि यह क्या यतमीजी है। और कोई कहे तो— मेरा जा नहीं चाहता," और थाप जब चाहें, तो खाट साहब की तरह आकर शरीर हो जायें।

उसे याद था कि वह त्रामोशा के साथ हर चीज को अपनी बड़ी बड़ी शौलों में दखते थे और फिर कभी कभी अपने लोगों को बाईं और मुका कर इस तरह मुसकराते कि बहुत बहुत चिढ़ता। कहते कुछ नहीं थे मगर इस प्रकार मुसकराते कि दूसरा व्यक्ति लज्जा जाता और उसे ऐसा अनुभव होता, मानो उसे किसीने कोई जुम करत हुये पकड़ लिया हा। उसकी यह आदत उस बिलकुल न भाती और फिर एक और बात जो याद आता, तो अब उसकी याद से उस बधा शम आती। एक दमा रात को घर वाले किसी दूसरे घर में गए हुए थे। सब ने कहा— 'आमो, शौल मिचीनी खेले।' सब किसी न किसी जगह छिप गए। वह भा एक और भागा। उसे सदेह तो था कि सुलतान भाई कहीं उसी तरफ गए थे, मगर उसने परवाह न की। उसे छिपे हुए आधा मिनट भी नहीं हुआ था कि किसीने उसको कमर में हाथ डाल कर अपनी थोर शौचा। उसने कहा— 'सुलतान भाई!' उस आवाज पहिचानते हा उन्होंने हाथ निकाल लिया। जैसे उसे छूना भी पसंद नहीं करते।

थोर अब कितने ही वर्षों बाद गरमियों को छुट्टी में वह अपनी माँ और छोटे भाई बहिनों सहित अपने घर जा रहा थी, और सारे रास्ते में बचपन की न मिटन वाली स्मृतियाँ उसके मस्तिष्क में चल चित्रों के रूप में चक्कर लगाता रही। थापा धनवरा के विवाह में वह ताया के यहाँ आई थी थोर दस बारह दिन रही था, पर उन दिनों घर में इतने मेहमान थे कि वह बचपन के साथियों से पूरी तरह न मिल सका था। छोटे सिकंदर और अलमास के अलावा सभी इधर उधर काम में व्यस्त थे। सुलतान भाई से तो किम्पा को क्या धाशा होती कि वह अदर था कर एक मिनट भी बैठत, थोर फिर अब यह माशाअल्जा जवान हो गए थे। चौड़ा छाती ऊँचा माथा और घड़ी मुस्कान मन्द सी, हृदय को जकड़ लेने वाली रहस्यमयी मुस्कान। हाँ, अब मुस्कान के साथ शौलें भी कोनों का थोर जरा सिकुड़ जाता और उनमें एक चमक पैदा हो जाती, जिससे देखन वाला और भा जाता जाता। पहिले ही दिन कुछ दर के लिये अदर था कर बैठे। सितम्बर के दिन थे 'वादासी पोंपखेन' की खुले गले और थापा बाईं बाजा कमाज पहिने हुए थे और डाली मोहरी का पाजामा और बाख बिखरे

में भी प्रशंसा कम ही होती। घर में कोई भी सुलतान की हृष्टा के सम्यन्ध में निश्चित राय प्रकट नहीं कर सकता था, क्योंकि प्रायः उसकी रचि आरा के विरुद्ध ही होती। जैसे उसे लोगों को हैरान करने में आनन्द आता हो। केवल निकहत की तीक्ष्ण दृष्टि ही कभी-कभी सुलतान के मतलब को भाँफ़ खेता। अर्न्तों कभी गौर ही न कारती थीर यही कारण था कि उन्ह सुलतान का स्वमाय कमा टेड़ा था पेचीदा नहीं मालूम होता था।

घर में अलबत्ता सय को विश्वास था कि सुलतान को लक्षकियाँ पसन्द नहीं थीर यह उन्ह अयोग्य, बेवकूक थीर आत्माभिमानो समझता है। सुलतान का बर्षा यद्दिन अनवरो का विवाह हो चुका था, थीर उन्ह दो-तीन वष से सुलतान के विचारों के सम्यन्ध में कोई जानकारी नहीं थी। बड़ा माड कोई था नहीं। आज़म थीर सिकन्दर उससे कई वष छोटे थे। केवल निकहत ही इसकी उग्र की थी। पर निकहत को अपनी सहलियाँ ही से कम मुरसत मिलती थी। फिर भी घर में किसी पर यदि सुलतान का रोब नहीं था तो यह निररत ही थी। जैसे निकहत थी ही सेज़ थीर चनुर कि उस पर दुनिया का कोई व्यक्ति रोब नहीं जमा सकता था। उसने शिचा तो दसवें फ़ास हा सक-मास का थी, मगर अपने अध्ययन के बल पर वह हर विषय पर अपनी राय प्रकट किया करती थी थीर सुलतान को रामोशी थीर उसके गहर विचार कभी उसे देर तक सुप नहीं रहने देते थे।

थीर अब थूँकि अर्न्तों सुलतान से स्टेशन पर जाने के लिये कह रही थी, निकहत ने कहा—“अर्न्तों ! आज़म अब बड़ा हो गया है, आप उसीकी क्या नहीं भेज देंती ? वह कह देगा, सुलतान भाई किमा काम को गय हुये थे, इसी-लिये नहीं आये, घरना यह तो बहुत आने को कहते थे। रोज़ याद करते थे कि तुमगत को आयेंगे यह भी कहते, अब तीर ही दिन रह गये हैं, आज तो ”

निकहत के व्यापमय लहजे की उपेक्षा करते हुये सुलतान ने कहा—“तो आज़म चला जायगा, मुझे सधमुच काम है। अलबत्ता यह क्याकारा, निकहत आरा बेगम उर्ज़ सोरान, ज़र्बो दराज़ हा सक रहने दो।” यह कह कर आप बाहर चले गये, मगर निकहत का विश्वास हो गया कि सुलतान भाइ स्टेशन जम्र लायेंगे।

उपर जैसे जैसे स्टेशन दूरीय आता गया, बन्धु की विश्वास होया गया कि थीर कोई उन लोगों को खेने आ जाय तो आ जाय, पर सुलतान भाई उस स मत न हागे। थीर उसे महसूस हुआ कि बहुत-स आदमी अगर खेन आ लायें, तो बर्षा खलमन होती है। आदमी सामान बतरवाए या खेन आने

घातों की तरफ द्ये। फिर अज्ञान भी साथ थे, छोटे मियाँ भी साथ थे। पन्द्रह वर्ष का उम्र काशी होती है। छोट मियाँ क्यों में तो गिने नहीं जा सकते थे। घर का रास्ता यह अस्पृष्टा तरह जानत थे, घर अपना था, फिर किताने घाने की ज़रूरत ही क्या थी? अस्तु जब अम्माँ ने कहा—“तुम्हारा साहू ने किमी न किये को ज़रूर स्टेशन पर भेजा हागा, शायद सुलतान हा को भेजा हो।” तो बतूल ने बड़े धारपर्य से कहा—“कीन? सुलतान भाई? वह तो कभी न आयेंगे। और फिर हमें उनका ज़रूरत ही क्या? हम खुद भी तो घर पहुँच सकते हैं।”

जब स्टेशन आ गया, तो बतूल ने पहिला व्यक्ति को देखा यह आज्ञम था। सकारियों उतरने की कोशिश का रही थी और ऊपर अम्माँ ‘जल्दी मरदा’ की रट लगाए हुए थीं। मगर अभी कुलियों ने सामान ठाक से उठाया भी नहीं था कि कोई साहब पनलून की वाई जब म हाथ बाजे हैट माथे से हाथ धीरे धीरे उधर था निकले। नैमे घर से मर करने आये हैं। बतूल को कोई विदाय प्यान देने की ज़रूरत नहीं थी और न उतरने कुछ कहा हा, और अस्पृष्टा हुआ कि वह बुर्गो पहिने हुए था। नहीं तो सुलतान भाई उसके चेहरे की कैरियत देख कर पता नहीं, क्या कुछ न कहते, क्योंकि यह तो बतूल को स्वाकार करना पड़ता कि उसका चेहरे की रगत उसके अपने कानू में नहीं थी। साधारण से साधारण बात पर सुर्जी की छहर उसकी गरदन से खेर उसके बाखों तक फैल जाती है।

घर पहुँच कर बतूल को आपा निकहत से गले मिक कर आय बतूल आनन्द हुआ, क्योंकि उसे निकहत का स्वभाव सदा से बहुत पसन्द था। उसने पहिला ही सवाल यह किया—“सुलतान भाई स्टेशन आए थे?” बतूल ने कहा—‘जी!’ इस पर उठोने कमर में हाथ डाल कर ज़ार से उसे दबाया और साथ ही तिक खिला कर हँस दी। इतने में सुलतान भाई भी आ गय। इस पर निकहत न सदानुभूतिपूर्ण बहजे में पूछा—‘सुलतान आप घर तो नहीं गये? थाप क्यों इतनी सकलात्र किया करते हैं? सड़के किया ऐमे कामों का! मेर चाँद से भाई का सुँह कुगइला गया।’ और हमदर्दी जाहिर करने के लिये यह अपना हँसना हुइ कानों और होंठ को इस तरह सिकोबा कि ताई भी हँस दी और सुलतान भाई भी हँसने के लिये मजबूर हो गये। और फिर वो ने आपा निकहत के पीछे दौड़े हैं वे आगे आगे और आप पीछे पीछे, कुरसियों और मोड़ों की गिरा, सामान को तितितर-बितर कर हँसते हँसते एसा उधम मचाया कि सब देखने वाले खोट

पेट हो गये। और ताड़ ने कहा—“यह तुम्हारे आने की सुशी है, गहीं तो सुखतान तो कुछ दिन से बहुत खुपचाप ला या।”

दो ही तीन दिन में बतूल को विश्वास हो गया कि उसका ख्याल पिलबुल डक या। जहाँ कहीं यह बैठे होता, अगर मुलतान भाई आ जायें तो पक्षि तो वह समा याचना करके चले ही जाते और अगर अम्नों के अनुरोध या आग निकहत के कहने पर बैठ भी जाते, तो जान-भूक कर उसीकी उपेक्षा कर क बातें करते रहते। इस अकारण लिचे रहने का एक ही अर्थ था कि उन्हें उससे नररत है। और अगर नररत है, मो हो। आरिअर बतूल ही को वह क्य पसन्द थे? बात करनी होती तो उगम भी एकाध बनाउट कूट कूट कर मरी होती। “ओ हो आप तशरीर रक्षती हैं! अरुदा तो यह आपने काड़ा है? वल्लाह, हाथ म किना। सप्राई है! आपको तो यह चीजें किता जुनायश में रखनी चाहियें। इसमें सिवाय धम्य के और क्या है? मान लिया कि हाथ पकड़ कर उँगलियों को बड़ी नरमी से दवाते और हागों को बनाउट की अच्छी सरह देखते, पर हमसे यह कहीं सिद्ध होता था कि उन्हें मेरे हाथ पसन्द हा हैं?”

एक दिन आपा निकहत ने कहा—“आज शाम को सर को चलेंगे।” बतूल ने आपा निकहत से पूछा—“सुखतान भाई तो नहीं जायेंगे?” निकहत ने मुस्कराते हुये कहा—“कोई अच्छी-सी साड़ी पहन कर आओ, तैयार उह में कर लूंगा। तुम्हारे पास आसमानों रग की कोई साड़ी है?” बतूल ने कहा—“जी! लाजट सेप का है तो, और बाहर भी उस पर बहुत रूबसूरत खगा है।” वत आपा निकहत ने अनुरोध किया कि फिर वही पहिनो। शाम हुई तो बतूल नहा धोकर कपड़े पहिनने में लग गई और साड़ी पहन कर तैयार हुई तो आपा निकहत को आपाज दी।

जब सुखतान ने इन दोनों की आत देखा, तो होंठों पर मुस्कराहट आ गई, वही ब्यग्यमय मुस्काहट, वही पुराना अदाज। बतूल अकेली होती तो शायद सामने से हट जाता मगर आपा निकहत साथ थीं। वह पकड़ हुयेपात ल गई, और कहा—“सुखतान भाई, थका, उगा, अब सर को चरें, शाम हो गई है। आप की शर्त तो मारिय के बाद की है न? आप के उटते उटते गूरज इस आपगा।” पर सुखतान ने कोई उत्तर नहीं दिया, केवल बतूल को अघ-सुली आपों में दलाता रहा। निकहत ने कइ दिया—“ला, अब कानी देल जिया है, उठो!” मगर शायद सुखतान को यह बात पसन्द न आई। कहा—“गुमं ता काम है, तुम बाजम को और धोटे मियों का खे पाओ। और फिर हम आरका में नररत



ताव छा मकता हूँ । यह कहा और उठ कर ऊपर अपने कमरे में चले गये ।  
 बतूल ने आधा निकहत की परवाह भा नहीं की । यह कहती हा रही कि  
 टहरा में जानता हूँ इनके स्वभाव का, यह इनके नगरे हैं । ऊपर तैयार होने  
 को हो गये होंगे । मगर बतूल न बुद्ध ग सुना और विडका से निकल कर सोपे  
 अपने कमरे में चली गई । तब यत्न तब जितनी अपने आप से पूजा या उतनी  
 किता और को कमा न हुई होगी । तब इस बात पर गुम्मा था कि आगिर मैंने  
 बनाव सिंगार में इतना समय नष्ट किया हो क्यों ? इत्यर्थ कि सुखतान भाई  
 मजाक करें ? उते अब उस साहो ही र नजरत हो गई, जा में आया कि पाव  
 कर फेंक द ।

इधर निकहत ऊपर सुखतान को सुखाने गई और कमरे में दागिद होवे  
 हा बदन लगा— 'सुखतान भाई, यह आप की प्रया आदर है कि किसी को  
 सताया, किता का रखाया ?' तमने कहा—'क्यों ?' और यह सचमुच शक्ति  
 था, क्योंकि वह तो कपड़े बदल रहा था । निकहत ने कहा—'आप मजाक करने  
 में बड़ हाशियार हैं, मगर आप मजाक करते समय आँसू तो नहीं बन्द कर  
 लिया काजिय । मुझे विश्वास है कि येचारा बतूल इस समय रो रही होगा ।'  
 सुखतान ने जल्दा से पूजा—'क्यों ?' निकहत ने उत्तर दिया—'क्यों क्या ?  
 उस तो मैं पमा मना बना कर लाई और आप ने इस प्रकार उमका दिख  
 टुला दिया । मैं उस रोकती ही रहा, क्योंकि मैं आप के स्वभाव से नूष परधित  
 हूँ, मगर वह क्या जाने आपको ? मुझसे हाथ पुका कर भाग गई । अब सज  
 नता इसमें ह कि मना कर लाओ ।'

पहिले तो सुखतान दिशकिचया, पर आधा निकहत के मजदूर करने पर  
 वह बतूल के कमरे में जा ही पहुँचा, वहाँ दृषा कि सचमुच बतूल बिस्तर पर  
 औधा पड़ी रो रहा है । साड़ी मा साधारण सा पहिने हुए है । पाँव का चाप  
 सुना तो बतूल ने सिर उठाया, सुखतान का दगा, ता पहिल जल्दा से आँसू  
 पोंड और फिर मुस्कराने का कोशिश करत हुये कहा—'आइये, मेरे मिर में  
 दद हो रहा है ।' मगर वह बहुत शक्ति हुई जय सुखतान न कहा—'मुझसे  
 नाराज हो गई हो क्या ?' बतूल न कहा—'आप से ?' और फिर उसका  
 आँसू स आँसू टपटपा आये । इसके बाद बतूल का याद नहीं कि क्या हुआ  
 और कैने । और मगर जय उसे विश्वास हो गया कि वह स्वप्न नहीं देख रहा है,  
 तो उसने अनुभव किया कि उसका सिर सुखतान के खीचे सीने स लगा हुआ  
 था और सुखतान के बानू उसका कमर को थामे हुये थे ।

—संवाद कैयाज महमूद, एम० ए०

